BEDSEDE-A2

समकालीन भारत एवं शिक्षा

Contemporary India and Education

विशिष्ट शिक्षा विभाग

शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखन	इकाई संख्या	इकाई लेखन	इकाई संख्या
डॉ० दीप्ती जौहरी सहायक प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, शिक्षा विभाग, बरेली कालेज, बरेली, उत्तर प्रदेश	1	सुश्री ममता कुमारी सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखण्ड	7, 9, 12
डॉ० दिनेश कुमार सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखण्ड	2, 3, 4, 5, 6, 8, 10, 11, 13, 14, 15	डॉ० बृजेश राय सहायक प्रोफेसर, विशिष्ट शिक्षा संकाय, डॉ० शकुंतला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश	16

समस्त लेखों/पाठों से संबंधित किसी भी विवाद के लिए संबंधित लेखक जिम्मेदार होगा।
किसी भी विवाद का जूरिसडिक्शन हल्द्वानी (नैनीताल) होगा।

कापीराइट: उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

प्रकाशन वर्ष: 2016
संस्करण: सीमित वितरण हेतु
प्रकाशक: कुलसचिव, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखण्ड -263139

समकालीन भारत एवं शिक्षा

Contemporary India and Education

BEDSEDE-A2

इकाई सं०	इकाई का नाम	पृष्ठ सं०
01	शिक्षा: प्रत्यय, परिभाषा तथा कार्यक्षेत्र Education: Concept, Definition and Scope	1-16
02	शिक्षा के साधन: औपचारिक, अनौपचारिक एवं निरौपचारिक Agencies of Education: Formal, Informal and Non-formal	17- 25
03	प्रकृतिवाद Naturalism	26- 41
04	आदर्शवाद Idealism	42- 56
05	प्रयोजनवाद Pragmatism	57- 74
06	अस्तित्ववाद Existentialism	75-88
07	महात्मा गाँधी Mahatma Gandhi	89-105
08	रवीन्द्रनाथ टैगोर Rabindranath Tagore	106-121
09	श्री अरविन्द Sri Aurobindo	122-134
10	समकालीन भारतीय परिप्रेक्ष्य Contemporary Indian Perspective	135-144
11	गुणवत्ता एवं समता के पहलू Issues of Quality and Equity	145-160
12	शिक्षा संबंधी संवैधानिक प्रावधान Constitutional Provisions with Regard to Education	161-172
13	राष्ट्रीय शिक्षा आयोग 1964-66 (कोठारी कमीशन) National Education Commission (1964-66)	173-188
14	राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986	189-204

	National Education Policy 1986	
15	संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 (1992) Revised National Education Policy, 1986 (1992)	205-217
16	विशेष तथा समावेशित शिक्षा के संदर्भ में राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय नीतियाँ और कानून National & International Policies and Laws in context of Special and Inclusive Education	218-230

इकाई-1-शिक्षा: प्रत्यय , परिभाषा तथा कार्य - क्षेत्र
(Education: Concept, Definition and Scope)

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 शिक्षा का अर्थ
1.3.1 शिक्षा का विश्लेषणात्मक व दार्शनिक अर्थ
1.3.2 शिक्षा का समाजशास्त्रीय व राजनैतिक अर्थ
1.3.3 शिक्षा का आर्थिक व मनोवैज्ञानिक अर्थ
1.3.4 शिक्षा का समग्र एवं वास्तविक अर्थ
1.4 शिक्षा के कार्य
1.4.1 शिक्षा के सामान्य कार्य
1.4.2 मानवीय जीवन में शिक्षा के कार्य
1.4.3 सामाजिक जीवन में शिक्षा के कार्य
1.4.4 राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा में कार्य
1.5 शिक्षा का विषय क्षेत्र
1.5.1 शैक्षिक समस्याएं
1.5.2 अध्ययन के विशिष्ट क्षेत्र
1.6 सारांश
1.7 शब्दावली
1.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
1.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

मानव प्रकृति की सर्वोत्तम रचना है, जो अपने साथ कुछ जन्मजात शक्तियाँ लेकर पैदा होता है। शिक्षा के द्वारा मानव की इन जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कला कौशल में वृद्धि एवं व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है और उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है।

यह कार्य मानव के जन्म से ही उसके परिवार द्वारा अनौपचारिक रूप से तत्पश्चात विद्यालय भेजकर औपचारिक रूप से प्रारम्भ कर दिया जाता है। विद्यालय के साथ-साथ उसे परिवार एवं समुदाय में भी कुछ-न कुछ सिखाया जाता रहा है और सीखने - सिखाने का यह क्रम विद्यालय छोड़ने के बाद भी चलता रहता है और जीवन भर चलता है। अपने वास्तविक अर्थ में किसी समाज में सदैव चलने वाली सीखने सिखाने की यह सप्रयोजन प्रक्रिया ही शिक्षा है। इस इकाई में आप शिक्षा के विभिन्न अर्थ यथा-शाब्दिक, संकुचित, व्यापक, विश्लेषणात्मक, समग्र एवं व्यापक अर्थ से अवगत हो सकेंगे साथ ही इन अर्थ को परिभाषित करने वाले विभिन्न दृष्टिकोणों के बारे में जान सकेगें।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

1. शिक्षा के संकुचित एवं व्यापक अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
2. शिक्षा के अर्थ को भारतीय दृष्टिकोण एवं पाश्चात्य दृष्टिकोण के आधार पर स्पष्ट कर सकेंगे।
3. शिक्षा के सामान्य, मानवीय, सामाजिक, राष्ट्रीय जीवन में कार्य को परिभाषित कर सकेंगे।
4. शिक्षा के विषय विस्तार के आधार पर शिक्षा की प्रक्रिया एवं स्वरूप को समझ सकेंगे।

1.3शिक्षा का अर्थ(Meaning of Education)

भारतीय दृष्टिकोण में शिक्षा शब्द संस्कृत भाषा की शिक्ष् धातु में अ प्रत्यय लगने से बना है। शिक्ष् का अर्थ है सीखना और सिखाना। इसलिए शिक्षा का अर्थ हुआ- सीखने - सिखाने की प्रक्रिया। यदि हम शिक्षा के लिए प्रयुक्त अंग्रेजी शब्द एजूकेशन पर विचार करें तो उसका भी यही अर्थ निकलता है। एजूकेशन शब्द लैटिन भाषा के एजूकेटम (Educatum) शब्द से बना है और एजूकेटम शब्द उसी भाषा के (E) तथा ड्यूको (Duco) शब्दों से मिलकर बना है। ए का अर्थ है अन्दर से और ड्यूको का अर्थ है आगे बढ़ाना। इसलिए एजूकेशन शब्द का अर्थ हुआ- बच्चे की आन्तरिक शक्तियों को बाहर की ओर प्रकट करना। इस प्रकार शिक्षा शब्द का समग्र रूप से अर्थ बालक की जन्मजात शक्तियों का सर्वांगीण विकास है।

शिक्षा का व्यापक अर्थ -प्रत्येक प्राणी जन्म के बाद सर्वप्रथम पहला पाठ मां की गोद में पढ़ता है तत्पश्चात अपने घरेलू वातावरण तथा आस-पास के पर्यावरण जिसके भी संपर्क में आता है, उससे कुछ-न-कुछ सीखता रहता है। इस सीखने व अनुभव का परिणाम यह होता है कि वह धीरे-धीरे विभिन्न प्रकार से अपने भौतिक , सामाजिक और आध्यात्मिक वातावरण से अपना सामंजस्य स्थापित करता है। इस प्रकार वस्तुतः सीखने -सिखाने की यह प्रक्रिया जीवनपर्यन्त चलती रहती है। शिक्षा के व्यापक अर्थ को प्रकट करने में कहा जा सकता है कि शिक्षा किसी समाज में सदैव चलने वाली वह सोद्देश्य सामाजिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास,

उसके ज्ञान एवं कला-कौशल में वृद्वि एवं व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है और इस प्रकार उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। इसके द्वारा व्यक्ति एवं समाज दोनों निरन्तर विकास करते है।

विद्वान जे.एस. मैकेन्जी के शब्दों में:-व्यापक दृष्टि से शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है और जीवन के प्रत्येक अनुभव के द्वारा इसका विकास होता है।

शिक्षा का संकुचित अर्थ:-शिक्षा के संकुचित या सीमित अर्थ के अनुसार शिक्षा का अभिप्राय, बालक को विद्यालय में दी जाने वाली शिक्षा से है। दूसरे शब्दों में संकुचित अर्थ में शिक्षा किसी समाज में एक निश्चित समय तथा निश्चित स्थान (विद्यालय) में सुनियोजित ढंग से चलने वाली वह सोदे्श्य सामाजिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कला - कौशल में वृद्धि एवं व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है, और इस प्रकार उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। इसके द्वारा व्यक्ति एवं समाज दोनों निरन्तर विकास करते है।

विद्वान जे0एस0मेंकेंजी के अनुसार- संकुचित अर्थ में शिक्षा का अभिप्राय -हमारी शक्तियों के विकास एवं उन्नति के लिए चेतनापूर्वक किए गये किसी भी प्रयास से हो सकता है।

1.3.1 शिक्षा का विश्लेषणात्मक व दार्शनिक अर्थ :-

शिक्षा का विश्लेषणात्मकअर्थ:- शिक्षा के विश्लेषणात्मकअर्थ को स्पष्ट करने के लिए मूल भूमिका दार्शनिकों, समाजशास्त्रियों , राजनीतिशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों एवं वैज्ञानिकों ने अदा की है और इन सबने शिक्षा का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कर इनकेद्वारा उद्घाटित तथ्यों के आधार पर शिक्षा के स्वरूप को समझने एवं परिभाषित करने का प्रयत्न किया है।

शिक्षा का दार्शनिक अर्थ:-दार्शनिकों की दृष्टि से शिक्षा मनुष्य जीवन के अन्तिम उद्देश्य की प्राप्ति का साधन होती है। और चूंकि मनुष्य जीवन के अन्तिम उद्देश्य के सम्बन्ध में दार्शनिकों में मतैक्य नहीं है अतः निम्नलिखित विभिन्न परिभाषायें शिक्षा के सम्बन्ध में दी गयी है।

जगतगुरू शंकराचार्य की दृष्टि से -

शिक्षा वह है जो मुक्ति दिलाये। (सः विद्या या विमुक्तये)

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार -

मनुष्य की अर्न्तनिहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।

यूनानी दार्शनिक प्लेटो शरीर व आत्मा दोनों के महत्व को स्वीकार करते हैं तथा कहते हैं शिक्षा का कार्य मनुष्य के शरीर और आत्मा को वह पूर्णता प्रदान करता है जिसके कि वे योग्य है।

युगपुरूष महात्मा गाँधी ने शरीर, मन और आत्मा, तीनो के विकास पर समान रूप से बल देते हुये कहा है – ‘‘शिक्षा से मेंरा अभिप्राय बालक और मनुष्य के शरीर, मन तथा आत्मा के सर्वांगीण एवं सर्वोत्कृष्ट विकास से है’’।

प्रकृतिवादी दार्शनिक हरबर्ट स्पेन्सर के अनुसार -

"शिक्षा का अर्थ अन्तःशक्तियों का बाह्‌य जीवन से समन्वय स्थापित करना है"।

प्रयोजनवादी मनुष्य को सामाजिक प्राणी मानते है और यह मानते हैं कि शिक्षा के द्वारा मनुष्य में वर्तमान में अनुकूलन करने एवं भविष्य के समाज का निर्माण करने की क्षमता का विकास करना चाहिए। **प्रयोजनवादी दार्शनिक जॉन ड्यूवी के शब्दों में** – "शिक्षा व्यक्ति की उन सब योग्यताओं का विकास है, जो उसमें अपने पर्यावरण पर नियन्त्रण रखने तथा अपनी सम्भावनाओं को पूर्ण करने की सामर्थ्य प्रदान करे"।

1.3.2 शिक्षा का समाजशास्त्रीय व राजनैतिक अर्थ –

शिक्षा का समाजशास्त्रीय अर्थ:- समाजशास्त्रियों के मतानुसार शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया मानी जाती है क्योंकि इनके अनुसार समाज के अस्तित्व पर ही शिक्षा का अस्तित्व निर्भर करता है इस दृष्टि से शिक्षा की निम्नलिखित परिभाषायें महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है यथा -

1. शिक्षा एक उद्देश्यपूर्ण एवं समायोजनपूर्ण प्रक्रिया है।
2. शिक्षा एक विकासात्मक प्रक्रिया है।
3. शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया है।
4. शिक्षा एक द्विध्रुवीय प्रक्रिया है।
5. शिक्षा एक त्रिध्रुवीय प्रक्रिया है।
6. शिक्षा सांस्कृतिकरण है।
7. शिक्षा एक अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है।

शिक्षा का राजनैतिक अर्थ - शिक्षा के राजनैतिक दृष्टिकोण के अनुसार शिक्षा, राष्ट्र निर्माण का साधन है। राष्ट्र का निर्माण , श्रेष्ठ नागरिकों के निर्माण से ही संभव है जिसके लिए शिक्षा से यह अपेक्षा की जाती है कि वह व्यक्ति के अन्दर राष्ट्रप्रेम उत्पन्न करे।

1.3.3 शिक्षा का आर्थिक व मनोवैज्ञानिक अर्थ –

शिक्षा का आर्थिक अर्थ –

अर्थशास्त्रियों के विचार में शिक्षा एक उत्पादक प्रक्रिया है जिसमें शिक्षा का वह आर्थिक निवेश है जिसके द्वारा व्यक्ति में उत्पादन एवं संगठन के कौशलों का विकास किया जाता है और इस प्रकार व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की उत्पादन क्षमता बढ़ाई जाती है और इनका आर्थिक विकास किया जाता है।

शिक्षा का मनोवैज्ञानिक अर्थ - मनोवैज्ञानिकों के विचार में मनुष्य एक मनोशारीरिक प्राणी है जो जन्म से कुछ शक्तियां लेकर पैदा होता है। अतः शिक्षा के द्वारा सर्वप्रथम इन शक्तियों का विकास होना चाहिए। जर्मन **शिक्षाशास्त्री पैस्टालॉजी** के शब्दों में इसे निम्न प्रकार परिभाषित किया जा

सकता है –"शिक्षा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का स्वाभाविक, समरस एवं प्रगतिशील विकास है।"

फ्रोबेल के अनुसार –"शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक अपनी आन्तरिक शक्तियों को बाहर कीओर प्रकट करता है।"

1.3.4 शिक्षा का समग्र एवं वास्तविक अर्थ-

शिक्षा के विषय में दार्शनिकों, समाजशास्त्रियों, राजनीतिशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों और वैज्ञानिकों के भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण है। उपरोक्त सभी दृष्टिकोणों से शिक्षा की प्रकृति के विषय में ये तथ्य उजागर होते है कि शिक्षा एक सोद्देश्य, अविरल, गतिशील, व विकास की प्रक्रिया है। उपर्युक्त दी गई सभी परिभाषाओं को यदि सार रूप में प्रस्तुत किया जाये तो इसे निम्न रूप में परिभाषित करना चाहिए -

शिक्षा किसी समाज में सदैव चलने वाली वह सोद्देश्य सामाजिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान, एवं कला - कौशल में वृद्धि तथा व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है और इस प्रकार उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। इसके द्वारा व्यक्ति एवं समाज दोनों निरन्तर विकास करते है।

शिक्षा की उपरोक्त परिभाषा अपने आप में पूर्ण एवं समन्वित दृष्टिकोण समाहित किए हुये है तथा शिक्षा के अर्थ को पर्याप्त रूप से स्पष्ट करती है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. प्रत्येक प्राणी जन्म के बाद सर्वप्रथम पहला पाठ ....की गोद में पढ़ता है।
2. शिक्षा के द्वारा ....दोनों निरन्तर विकास करते है।
3. शिक्षा के द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कला-कौशल में वृद्धि एवं ....परिवर्तन किया जाता है,

1.4 शिक्षा के कार्य (Functions of Education)

शिक्षा एक बहुमुखी प्रक्रिया है। कोई व्यक्ति, समाज अथवा राज्य शिक्षा के द्वारा जो प्राप्त करना चाहता है वे ही शिक्षा के उद्देश्य होते है और इन उद्देश्यों की पूर्ति करना ही शिक्षा के कार्य होते है। अनेक शिक्षाविदों ने मानव एवं समाज दोनों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर शिक्षा के विभिन्न कार्य निर्धारित किए है। जॉन ड्यूवी के अनुसार शिक्षा का कार्य -असहाय प्राणी के विकास में सहायता पहुँचाना है, ताकि वह सुखी, नैतिक और कुशल मानव बन सके।

शिक्षा के कार्य

- शिक्षा के सामान्य कार्य
- मानवीय जीवन में शिक्षा के कार्य
- सामाजिक जीवन में शिक्षा के कार्य
- राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा के कार्य

1.4.1 शिक्षा के सामान्य कार्य-

शिक्षा के कुछ सामान्य कार्य निम्नलिखित हैं:

1. जन्मजात शक्तियों का प्रगतिशील विकास- बालक कुछ अंतर्निहित शक्तियों जैसे - प्रेम, जिज्ञासा, तर्क, कल्पना, एवं आत्म सम्मान आदि को लेकर जन्म लेता है। शिक्षा इनअंतर्निहित शक्तियों का विकास करती है। पेस्टलॉजी के विचार से इसको बल मिलता है -
   शिक्षा मनुष्य की अंतर्निहित शक्तियों का स्वभाविक, सामंजस्यपूर्ण एवं प्रगतिशील विकास है।
2. भाषा, ज्ञान, मानसिक शक्तियों का विकास- शिक्षा द्वारा व्यक्तित्व के निर्माण के लिए बालक के शारीरिक, मानसिक, नैतिक आध्यात्मिक एवं संवेगात्मक आदि पक्षों का विकास किया जाता है।
   टी0पी0नन के अनुसार -शिक्षा, वैयक्तिकता का पूर्ण विकास है, जिससें कि व्यक्ति अपनी पूर्ण योग्यता अनुसार मानव जीवन को योग दे सके।
3. नैतिक एवं चारित्रिक विकास एवं मूल्य शिक्षा- चरित्र का अर्थ है - आन्तरिक दृढ़ता और व्यक्तित्व की एकता। शिक्षा का उद्देश्य - ज्ञानार्जन करना और शारीरिक शक्ति बढ़ाना ही नहीं वरन् उत्तम चरित्र का निर्माण करना भी है।
   जर्मन शिक्षाशास्त्री हरबार्ट के अनुसार - अच्छे नैतिक चरित्र का विकास ही शिक्षा है।
4. संस्कृति का संरक्षण, हस्तान्तरण एवं विकास- किसी समाज की संस्कृति एवं सभ्यता का संरक्षण, आने वाली पीढ़ी को हस्तान्तरण एवं सांस्कृतिक विकास का कार्य करने में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
   ओटावे के अनुसार- शिक्षा का एक कार्य समाज के सांस्कृतिक मूल्यों और व्यवहार के प्रतिमानों को अपने तरूण और कार्यशील सदस्यों को प्रदान करना है।
5. वयस्क जीवन की तैयारी - शिक्षा बालक को वयस्क जीवन के लिए तैयार करती है। शिक्षा के इस पहलू पर बल देते हुये मिल्टन ने लिखा है - मैं उसी को पूर्ण शिक्षा कहता हूँ, जो

मनुष्य को शांति और युद्व के समय व्यक्तिगत और सार्वजनिक - दोनों प्रकार के सब कार्यो को उचित रूप से करने के योग्य बनाती है।

6. उत्तम नागरिकों का निर्माण- उत्तम नागरिक, उत्तम राज्य का आधार स्तम्भ है। यही कारण है कि प्रत्येक राज्य आशा करता है कि उसके नागरिक-ईमानदार, परिश्रमी, देशभक्त और कर्तव्य तथा दायित्वों को भली प्रकार समझते हों तथा इन गुणों का विकास शिक्षा द्वारा ही किया जा सकता है।
7. सामाजिक परिवर्तन, सुधार, व उन्नति- समाज द्वारा बालक की शिक्षा का आयोजन इसलिए किया जाता है, ताकि बालक को न केवल समाज के अनुकूल बनाये, वरन समाज के नियमों और सिद्वान्तों का ज्ञान प्राप्त करके उसका सुधार करें और उसे उचित दिशा में आगे बढ़ायें। ड्यूवी के शब्दों में -शिक्षा में अति निश्चित और अल्पतम साधनों द्वारा सामाजिक औरसंस्थागत उद्देश्यों के साथ-साथ समाज के कल्याण, प्रगति और सुधार में रूचि का पुष्पित होना पाया जाता है।
8. उपरोक्त पंक्तियों में शिक्षा के कुछ कार्यों का वर्णन किया गया है, परन्तु शिक्षा का कार्य क्षेत्र अति व्यापक है। शिक्षा की प्रक्रिया स्थिर न होकर सदैव चलने वाली है।अतः शिक्षा का कार्य निर्धारित करना आसान नहींहै।डा0 जाकिर हुसैन के अनुसार शिक्षा का प्रमुख कार्य यह है - शिक्षा का कार्य बालक के मस्तिष्क को शुद्व, नैतिक और बौद्विक मूल्यों को अनुभव करने में इस प्रकार सहायता देना है कि वह इन मूल्यों से प्रेरित होकर, इनको सर्वोत्तम प्रकार से अपने कार्य और जीवन में प्राप्त करे।

1.4.2मानव जीवन में शिक्षा के कार्य

महान दार्शनिक डा0 राधा कृष्णन के अनुसार- शिक्षा को मानवीय होना चाहिए। इसमें मात्र बौद्विक प्रशिक्षण का ही स्थान नहीं होना चाहिए वरन् आत्मानुशासन तथा हृदय की पवित्रता पर भी बल दिया जाना चाहिए।भारतीय समाज की वर्तमान आवश्यकताओं, मूल्यों, गुणों, समस्याओं तथा उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुये मानव जीवन के निम्न कार्य है -

1. मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति - मानव जीवन में शिक्षा के कार्य का महत्व बताते हुये स्वामी विवेकानन्द ने लिखा है - शिक्षा का कार्य यह पता लगाना है कि जीवन की समस्याओं को किस प्रकार हल किया जाय और आधुनिक सभ्य समाज का गम्भीर ध्यान इसी बात में लगा हुआ है। शिक्षा का कार्य व्यक्ति की आवश्यकता की पूर्ति करने के अतिरिक्त उसे समाज के अन्य व्यक्तियों के साथ सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने में मदद देना तथा ऐसे अवसर प्रदान करना है जिससे कि वह उन्नति कर सके।
2. आत्मनिर्भरता की प्राप्ति- शिक्षा का एक महत्वपूर्ण कार्य व्यक्ति को अपना जीवन-यापन कर पाने में सक्षम बनाना है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसारहमें उस शिक्षा की आवश्यकता

हैजिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता है मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है।

3. व्यावसायिक कुशलता की प्राप्ति- मानव जीवन में शिक्षा का एक कार्य, छात्रों को व्यावसायिक कुशलता की प्राप्ति में सहायता प्रदान करना है। इससे राष्ट्रीय आय और उत्पादकता में वृद्धि होती है।
4. वातावरण से समायोजन एवं परिवर्तन- शिक्षा, व्यक्ति को वातावरण के साथ समायोजन करना सिखाती है तथा वातावरण को परिवर्तन योग्य बनाती है।
5. जॉन ड्यूवी के अनुसार -शिक्षा व्यक्ति में उन क्षमताओं का विकास है जो उसको अपने वातावरण को नियंत्रित तथा अपनी भावी सम्भावनाओं को पूर्ण करने के योग्य बनाती है ।
6. जीवन के लिए तैयारी - शिक्षा व्यक्ति को जीवन के संघर्षो से निपटने के लिए तैयार करती है। विलमॉट का कथन है -‘‘ शिक्षा जीवन की तैयारी है।’’ अब यदि शिक्षा-जीवन की तैयारी है, तो शिक्षा का कार्य है - बच्चों को जीवन की कठिनाई व संघर्षो का सामना करने हेतु तैयार करना। शिक्षा के इस कार्य पर अपने विचार व्यक्त करते हुये स्वामी विवेकानन्द ने लिखा है -‘‘ यदि कोई मनुष्य केवल कुछ परीक्षायें पास कर सकता है। और अच्छे व्याख्यान दे सकता हो तो आप उसको शिक्षित समझते है। क्या वह शिक्षा,शिक्षा कहलाने के योग्य है, जो सामान्य जनसमूह को जीवन के संघर्ष के लिए अपने आप को तैयार करने में सहायता नही देती है, और उनमें शेर का सा साहस उत्पन्न नहीं करती है।’’
7. कार्य का व्यवहारिक ज्ञान - शिक्षा का अन्तिम और महत्वपूर्ण कार्य है - बालकों को विभिन्न कार्य क्षेत्रों का व्यवहारिक ज्ञान देना। हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था में सिद्धांत पर आवश्यकता से अधिक बल दिया जाता है फलतः बालक को जीवन के किसी भी कार्य-क्षेत्र का व्यवहारिक ज्ञान नहीं प्राप्त होता है।

अन्ततः हम कह सकते है कि मानव जीवन में शिक्षा का कार्य समाज के सदस्यों की उन सब शक्तियों, क्षमताओं व गुणों का विकास करना है, जो उनमेंहै, जिससे कि वे निर्दिष्ट लक्ष्य की ओर बढ़ सकें।

1.4.3 सामाजिक जीवन में शिक्षा के कार्य

चूंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, अतः समाज के साथ निर्वाह करने के लिए शिक्षा को अनेक कार्य करने पड़ते हैं। जिसमें से कुछ कार्य मुख्यतः निम्नलिखित हैं -

1. समाज के साथ अनुकूलन।
2. सामाजिक कुशलता की उन्नति एवं सुधार।
3. सामाजिक कर्तव्यों की पूर्ति।
4. संस्कृति और सभ्यता का विकास।

5. व्यक्तिगत हित को सामाजिक हित से दूर रखना।
6. सामाजिक भावना की जागृति।
7. सामाजिक गुणों का विकास।

प्रत्येक व्यक्ति समाज में ही जन्म लेता है, समाज में ही पल्लवित होकर जीवन व्यतीत करता है और समाज में ही उसकी जीवन लीला समाप्त हो जाती है। ऐसी स्थिति में शिक्षा का महत्वपूर्ण कर्तव्य हो जाता है कि बालकों में सामाजिक भावना जागृत करे, उनमें दया, परोपकार, सहनशीलता, सौहार्द, सहानुभूति, अनुशासन इत्यादि सामाजिक गुणों का विकास करे।

एच0गार्डन के अनुसार- शिक्षा को यह जानने की आवश्यकता नहींहै कि वह सामाजिक प्रक्रिया को उन व्यक्तियों के सम्मुख लाने की दिशा में आगे बढ़े जो इसके लिए अयोग्य हैं।शिक्षा समाज को दिशा देती है। ओटावे के अनुसार- यह निःसंदेह सत्य है कि सामाजिक परिवर्तन में शिक्षा को एक महत्वपूर्ण कार्य करना पड़ता है।

1.4.4 राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा के कार्य

किसी राष्ट्र का उत्थान एवं पतन उसके व्यक्तियों की श्रेष्ठता व हीनता से निर्धारित होता है।

मैकाइवर एवं पेज के अनुसार- '' राष्ट्र का गुण, उसकी सामाजिक इकाइयों का गुण है, अर्थात सामाजिक इकाइयों का सामूहिक जीवन ही राष्ट्रीय जीवन है। यदि ईधन ही खराब है तो ज्योति कैसे तेज हो सकती है - अर्थात यदि सामाजिक इकाइयाँ निर्बल है, तो राष्ट्र कैसे दैदीप्यमान हो सकता है''।

राष्ट्र की उन्नति तभी हो सकती है, जब उसके नागरिक श्रेष्ठ हों। उनको ऐसा बनाना ही राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का कार्य है।

1. **नेतृत्व के लिए प्रशिक्षण** - राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का मुख्य कार्य है - व्यक्तियों को इस प्रकार प्रशिक्षित करना है कि वे सामाजिक, राजनीतिक, औद्योगिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में नेतृत्व का कार्य कर सकें।
2. **कुशल श्रमिकों की पूर्ति -** राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का कार्य - कुशल श्रमिकों की पूर्ति करना है। ऐसे श्रमिक व्यापार और उद्योग के उत्पादन को बढ़ायेंगे। फलतः राष्ट्रीय सम्पत्ति में वृद्वि होगी।
   हुमायूँ, कबीरके अनुसार -'' शिक्षित श्रमिक अधिक उत्पादन में योगदान देंगे और इस प्रकार उद्योग तथा व्यवसाय - दोनों की अधिक उन्नति होगी''।
3. **राष्ट्रीय एकता का विकास** - शिक्षा का कार्य राष्ट्रीय एकता का विकास करना है। शिक्षित व्यक्ति के सोचने का क्षेत्र व्यापक हो पाता है वह जातिवाद, साम्प्रदायिकता,

अन्धविश्वास, क्षेत्रीयता आदि में विश्वास नहीं करता है तथा वह एक दूसरे के साथ भाई-चारे का व्यवहार करता है तथा देश के हित को सर्वोपरि समझता है।

जवाहरलाल नेहरू के अनुसार - राष्ट्रीयता एकता के प्रश्न में जीवन की प्रत्येक वस्तु आ जाती है। शिक्षा का स्थान सबसे ऊपर है और यही आधारशिला है।

4. **भावात्मक एकता का विकास** - देश में राष्ट्रीय एकता स्थापित करने के लिए देशवासियों में भावात्मक एकता का विकास करना बहुत आवश्यक है। शिक्षा हमारे चारों ओर भावात्मक एकता का वातावरण निर्मित करती है। नागरिकों में उचित संवेगो एवं एकता का विकास करती है।
5. **सांस्कृतिक विरासत से सम्पर्क** - राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का प्रमुख कार्य बालक को राष्ट्र की संस्कृति के सम्पर्क में लाना है। शिक्षा बालकों को उनके राष्ट्र की संस्कृति का ज्ञान कराती है तथा देश की संस्कृति की विकास प्रक्रिया से अवगत कराती है।
   डा0 जाकिर हुसैन के अनुसार - ''केवल संस्कृति की सामग्री द्वारा ही शिक्षा की प्रक्रिया को गति दी जा सकती है। केवल इसी सामग्री से मानव-मस्तिष्क का विकास हो सकता है।''
6. **व्यक्तिगत हित को सार्वजनिक हित से निम्न रखना**- राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का एक महत्वपूर्ण कार्य है कि वह लोगों को ऐसा प्रशिक्षण दे कि अपने हितों को अपने समूह, समाज, देश व राष्ट्र के हितो से निम्न समझे।
7. **मनुष्य को इस प्रकार प्रशिक्षित करना है कि** वह अनुशासित रहे व हर प्रकार का बलिदान करने के लिए तैयार रहे, तभी वह सार्वजनिक हित में योग देकर देश का कल्याण कर सकता है।
8. **योग्य नागरिक का निर्माण करना** - शिक्षा का कार्य प्रत्येक नागरिक में उचित नागरिकता का विकास करना है। शिक्षा द्वारा प्रत्येक बालक में देशभक्ति, अधिकारों और कर्तव्यों को समझने और निभाने की क्षमता, देश की बागडोर सम्भालने की योग्यता इत्यादि को उत्पन्न किया जाता है।डा0 जाकिर हुसैन के अनुसार -''प्रजातान्त्रिक समाज में यह आवश्यक है कि व्यक्ति नैतिक और भौतिक दोनों प्रकार से समाज के जीवन को उत्तम बनाने के सम्मिलित उत्तरदायित्वों को सहर्ष स्वीकार करे''।

अतः स्पष्ट है कि शिक्षा मानवीय, सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन में अपने विभिन्न कार्यों को सम्पन्न करती है। ये सभी एक दूसरे से घनिष्ठ सम्बन्ध रखते है। इस संदर्भ में**बोसिंग जीका** विचार है कि- '' शिक्षा का कार्य व्यक्ति और समाज के बीच ऐसा सामंजस्य स्थापित करना है जिसमें व्यक्ति अपने को मोड़ सके और परिस्थतियों को पुर्नव्यवस्थित कर ले जिससे दोनों को अधिकाधिक स्थाई सन्तोष प्राप्त हो सके''।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

ये परिभाषाएं किस विद्वान की हैं -

4. ''शिक्षा का कार्य -असहाय प्राणी के विकास में सहायता पहुँचाना है, ताकि वह सुखी,नैतिक और कुशल मानव बन सके''।
5. ''शिक्षा मनुष्य की अंतर्निहित शक्तियों का स्वभाविक, सामंजस्यपूर्ण एवं प्रगतिशील विकास है''।
6. '' शैक्षिक समाजशास्त्र शिक्षा और समाजशास्त्र के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन है।''
7. '' शैक्षिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र के सिद्धान्तों को शिक्षा की सम्पूर्ण प्रक्रिया पर क्रियान्वित करता है। ''

1.5 शिक्षा का विषय विस्तार

शिक्षाशास्त्र ज्ञान की वह शाखा है जिसमें शिक्षा प्रक्रिया के स्वरूप एवं उसके विभिन्न अंगों तथा समस्याओं का दार्शनिक, समाजशास्त्रीय, राजनैतिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोणों से अध्ययन किया जाता है। जहाँ तक शिक्षाशास्त्र के अध्ययन क्षेत्र की बात है, वह बड़ा व्यापक है, परन्तु इस व्यापक क्षेत्र में हमने अब तक जो कुछ सोचा विचारा है, वह उसकी विषयवस्तु है। शिक्षाशास्त्र के अध्ययनक्षेत्र एवं विषयवस्तु को सामान्यतः निम्नलिखित भागों में बाँटा जाता है -

शिक्षा दर्शन- मानव जीवन बड़ा रहस्यमय है, जब तक हम उसके रहस्य को नहीं समझते तब तक हम यह निश्चित नहीं कर सकते कि हमें क्या सीखना है और क्या सिखाना है। इसलिए शिक्षाशास्त्र के अन्तर्गत जीवन के प्रति जो विभिन्न दृष्टिकोण है, उनका और उनके आधार पर शिक्षा के स्वरूप, शिक्षा के उद्देश्य और शिक्षा की पाठ्यचर्या आदि का अध्ययन किया जाता है। शिक्षाशास्त्र के इस भाग को शिक्षादर्शन कहते है।

शैक्षिक समाजशास्त्र- मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह जो कुछ भी सीखता है समाज के बीच रहकर सीखता है उसके आचार-विचार को प्रभावित करने में समाज और सामाजिक संगठनों का विशेष हाथ रहता है। दूसरी ओर शिक्षा समाज पर नियन्त्रण रखती है और उसका विकास करती है। शिक्षाशास्त्र के अन्तर्गत समाज के स्वरूप, समाज और शिक्षा के आपसी सम्बन्ध, विभिन्न सामाजिक संगठनों एवं शिक्षा की प्रक्रिया में उनके कार्यों, समाज और विद्यालयों के सम्बन्धों, शिक्षा के सामाजिक कार्यों और शिक्षा तथा सामाजिक परिवर्तन के आपसी सम्बन्ध आदि का अध्ययन किया जाता है। इस अध्ययन क्षेत्र को शैक्षिक समाजशास्त्र कहते हैं।

जैसा **कि ब्राउन** ने कहा है -

'' शैक्षिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र के सिद्धान्तों को शिक्षा की सम्पूर्ण प्रक्रिया पर क्रियान्वित करता है। ''

ओटावे ने शैक्षिक समाजशास्त्र को परिभाषित करते हुए कहा है:-

'' शैक्षिक समाजशास्त्र शिक्षा और समाजशास्त्र के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन है।''

शिक्षा मनोविज्ञान - आज शिक्षा की प्रक्रिया में बालक को बड़ा महत्व दिया जाता है। उसके शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक विकास के आधार पर ही उसकी शिक्षा व्यवस्था की जाती है। इन सबको समझने के लिए हमें मनोविज्ञान का सहारा लेना पड़ता है। मनोविज्ञान का वह भाग जिसमें बालक के विकासक्रम, सीखने की प्रक्रिया और अन्य शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन किया जाता है, उसे शिक्षा मनोविज्ञान कहते है। इसके अर्न्तगत बच्चों की प्रकृति उनकी योग्यता, रूचियों और अभिरूचियों तथा स्मृति, विस्तृति, चिन्तन और कल्पना आदि शक्तियों का अध्ययन किया जाता है। और शिक्षा की प्रक्रिया में उनके उपयोग की सीमा निश्चित की जाती है। शिक्षा मनोविज्ञान में बच्चो की बुद्धि और उनके व्यक्तित्व के विकास की विधियाँ एवं उनके मापने की विधियाँ तथा सीखने की प्रक्रिया के स्वरूप, विधियों एवं दशाओं का भी विस्तृत अध्ययन किया जाता है।

कोलसनिक महोदय के अनुसार-
"शिक्षा मनोविज्ञान शिक्षा के क्षेत्र में मनोविज्ञान की खोजों और सिद्धान्तों का प्रयोग है"।
स्किनर के अनुसार -
"शिक्षा मनोविज्ञान मानवीय व्यवहार का शैक्षिक परिस्थितियों में अध्ययन है"।
लिण्डग्रेन के अनुसार -
शिक्षा मनोवैज्ञानिकों का सम्बन्ध तीन केन्द्र बिन्दुओं से है और वह है -

i. शिक्षार्थी
ii. सीखने का प्रक्रम
iii. सीखने की परिस्थितियाँ

शिक्षा का इतिहास - वर्तमान की रचना अतीत की उपलब्धियों के आधार पर ही की जाती है, इसलिए अतीत का अध्ययन आवश्यक होता है। शिक्षाशास्त्र के अन्तर्गत हम शिक्षा के इतिहास का अध्ययन इसी दृष्टि से करते है। जब तक हम आदि काल से लेकर अब तक शिक्षा का जो स्वरूप रहा है, उसकी जो व्यवस्था रही है और उसके जो परिणाम रहे है, उस सबका विस्तृत अध्ययन नहीं करते तब तक हम अपने लिए उचित शिक्षा की व्यवस्था नहीं कर सकते। अतः शिक्षाशास्त्र में इस सबका अध्ययन भी किया जाता है।

तुलनात्मक शिक्षा- आज मनुष्य केवल अपनी जाति के अनुभवों से ही लाभ नहीं उठाता अपितु दूसरे देशों और राष्ट्रों के लोगों के अनुभवों से भी लाभ उठाता है। शिक्षाशास्त्र के क्षेत्र में भी विभिन्न देशों की शिक्षा प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है और उनके गुणदोषों का विवेचन किया जाता है। इससे हम अपनी परिस्थितियों में अपने उपयोग की शिक्षा व्यवस्था का निर्माण करने में सफल होते है।

1.5.1 शैक्षिक समस्याएँ

इसके अन्तर्गत देश की वर्तमान शैक्षिक समस्याओं पर विचार किया जाता है और उनके समाधान के तरीके ढूंढे जाते है। आज हमारे देश में मुख्य शैक्षिक समस्याएँ है -देश के सभी क्षेत्रों में शिक्षा की समान सुविधाएँ उपलब्ध कराना, शिक्षा को व्यवसायिक स्वरूप प्रदान करना, धर्मनिरपेक्ष राज्य में धार्मिक और नैतिक शिक्षा का विधान करना तथा शिक्षा का राष्ट्रीयकरण करना आदि। जब तक शिक्षाशास्त्र के अन्तर्गत वर्तमान समस्याओं का अध्ययन कर उनके समाधान के तरीके नहीं सोचे जाते तब तक इसे विकसित नहीं कहा जा सकता।

शैक्षिक प्रशासन एवं संगठन- नियमित शिक्षा की व्यवस्था विद्यालयों में होती है, इसलिए शिक्षाशास्त्र में इन विद्यालयों के संगठन और संचालन की विधियों का अध्ययन भी किया जाता है। इसके अन्तर्गत जिन तथ्यों का अध्ययन किया जाता है उनमें से मुख्य है –

शिक्षा का संचालन किसके हाथ में है, राज्य का इसमें किस प्रकार सहयोग है? समाज किस प्रकार सहयोग कर रहा है, विद्यालयों का निर्माण कैसे करना चाहिए, विद्यालयो में विभिन्न शैक्षिक (पाठ्यचारी एवं सहपाठ्यचारी) क्रियाओं का संगठन किन सिद्धान्तों के आधार पर किया जाए कि उनसे अधिक से अधिक लाभ उठाया जा सके, प्रधानाध्यापकों एवं अध्यापकों के गुण एवं कर्तव्यों और उनके आपसी सम्बन्धों को सुमधुर बनाने के उपाय, बच्चों में अनुशासन उत्पन्न करने के उपाय, बच्चों का प्रवेश, उनका वर्गीकरण औरउनकी उपलब्धियों का मूल्यांकन और कक्षोन्नति, विद्यालयों में बच्चों के स्वास्थ्य की रक्षा के उपाय और शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन। इन सबके अध्ययन से हम शिक्षा की प्रक्रिया को सुचारू रूप से चलाने में समर्थ होते है।

शिक्षण कला एवं तकनीकी- शिक्षण प्रक्रिया में सीखना और सिखाना दोनों क्रियाएँ आती है। सीखना क्या है?इसकी विधियाँ कौन-कौन सी है?उत्तम सीखना कब सम्भव होता है? इन सब प्रश्नों के उत्तर हमें मनोविज्ञान देता है और उसके आधार पर भिन्न-भिन्न स्तरों के बच्चों को भिन्न-भिन्न विषयों को पढ़ाने की कौन-कौन सी विधियों का निर्माण हुआ है?उनमें कौन सी विधियाँ उपयोगी है? और इन विधियों को अपनाते समय क्या सावधानियाँ बरतनी चाहिए? इन सबकी चर्चा शिक्षण कला एवं तकनीकी के अन्तर्गत की जाती है। अतः शिक्षाशास्त्र में इस सबका अध्ययन भी किया जाता है। नियोजित शिक्षा को चलाने के लिए हमें इस सबका अध्ययन करना ही होता है।

1.5.2 अध्ययन के विशिष्ट क्षेत्र

शिक्षाशास्त्र के क्षेत्र में अब नए-नए विषयों का विकास हो रहा है और उनका अध्ययन भी आवश्यक समझा जाता है।जैसे - शिशु शिक्षा, बालशिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, स्त्रीशिक्षा, व्यवसायिक शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, शिक्षक शिक्षा, पुस्तकालय संगठन, शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन, शिक्षण में दृश्य -श्रव्य सामग्री का प्रयोग, शैक्षिक तकनीकी, शैक्षिक नियोजन, शैक्षिक वित्त, शैक्षिक मापन और मूल्यांकन, शैक्षिक सांख्यिकी और शिक्षा में अनुसंधान आदि। इस संदर्भ में हम यह स्पष्ट कर देना आवश्यक समझते है कि आज से कुछ वर्ष पहले तक इन सबका अध्ययन शिक्षा के इतिहास, शैक्षिक प्रशासन, शिक्षा मनोविज्ञान और शैक्षिक तकनीकी के अन्तर्गत ही किया जाता था, परन्तु अब से अलग-अलग विषयों के रूप में विकसित हो रहे है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

8. एजुकेशन शब्द लैटिन भाषा के .... के शब्द से बना है।
9. शिक्षा वह है जो .... दिलाये। (जगदगुरू शंकराचार्य)
10. .... के अनुसार, शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक अपनी आंतरिक शक्तियों को बाहर की ओर प्रकट करता है।
11. शिक्षा मनोविज्ञान मानवीय व्यवहार का .... परिस्थितियों में अध्ययन है।

1.6 सारांश

i. शिक्षा, समाज में चलने वाली सीखने-सिखाने की सप्रयोजन प्रक्रिया है।
ii. शिक्षा के अर्थ को विभिन्न दृष्टिकोणों के आधार पर समझा जा सकता है जिनमें से प्रमुख है- शाब्दिक अर्थ, संकुचित अर्थ, व्यापक अर्थ, विश्लेषणात्मक एवं समग्र अर्थ।
iii. शिक्षा का कार्य मानव एवं समाज की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर निर्धारित होता है।
iv. शिक्षा के इस प्रकार चार प्रमुख कार्य है-सामान्य, मानवीय, सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन में कार्य।
v. शिक्षाशास्त्र ज्ञान की वह शाखा है जिसमें शिक्षा प्रक्रिया के स्वरूप एवं उसके विभिन्न अंगों तथा समस्याओं का दार्शनिक, समाजशास्त्रीय, राजनैतिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोणों से अध्ययन किया जाता है।

1.7 शब्दावली

प्रौढ़ शिक्षा:-प्रौढ़ शिक्षा उन लोगों के लिए चलाया गया एक अभियान था, जो किसी कारण से शिक्षा से वंचित रह गये हैं।इसमेंउम्र की सीमा का कोई बन्धन नहीं था।

तुलनात्मक शिक्षा- शिक्षाशास्त्र के क्षेत्र में भी विभिन्न देशों की शिक्षा प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है और उनके गुणदोषों का विवेचन किया जाता है। इससे हम अपनी परिस्थितियों में अपने उपयोग की शिक्षा व्यवस्था का निर्माण करने में सफल होते है।

1.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. मां
2. व्यक्ति
3. व्यवहार में
4. जान ड्यूवी के अनुसार।
5. पेस्टलॉजी के अनुसार।
6. ओटावे के अनुसार।
7. ब्राउन के अनुसार।
8. एडूकेटम
9. मुक्ति
10. फ्रोबेल
11. शैक्षिक

1.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. ए0के0चक्रवर्ती,प्रिसीपल एण्ड प्रैक्टिस ऑफ एजुकेशन- आर0लाल बुक डिपो मेरठ।
2. पाल (डा0), गुप्त एवं मदन मोहन. शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार,- न्यू कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद
3. त्यागी एवं पाठक, शिक्षा के सिद्धांत,अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
4. चौबे एस0पी0 (डा0) एवं अखिलेश चौबे फिलोसोफिकल एण्ड सोशोलाजिकल फाउण्डेशन्स ऑफ एजुकेशन, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. शिक्षा से आप क्या समझते है? शिक्षा के संकुचित एवं व्यापक अर्थ को स्पष्टकरें।
2. शिक्षा के भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टिकोण का उल्लेख करते हुए अंतर स्पष्ट करें।

3. शिक्षा के विभिन्न कार्यों का विवेचन कीजिए।
4. शिक्षा के विषय विस्तार की रूप रेखा प्रस्तुत करें।
5. इनमें से प्रत्येक पर 100 शब्द लिखें-
   (i) शिक्षा का शाब्दिक अर्थ। (ii)शिक्षा के सामाजिक जीवन में कार्य।
   (iii) शिक्षा मनोविज्ञान की विषयवस्तु। (iv)शैक्षिक प्रशासन एवं संगठन।

इकाई-2 शिक्षा के साधन: औपचारिक, अनौपचारिक एवं निरौपचारिक

Agencies of Education: Formal, Informal and Non-formal

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 शिक्षा के साधनों का वर्गीकरण

2.3.1 शिक्षा के औपचारिक साधन

2.3.2 औपचारिक शिक्षा की विशेषताएँ

2.3.3 औपचारिक शिक्षा के दोष

2.4 शिक्षा के अनौपचारिक साधन

2.4.1 अनौपचारिक शिक्षा की विशेषताएँ

2.4.2 अनौपचारिक शिक्षा केदोष

2.5 शिक्षा के निरौपचारिक साधन

2.5.1 निरौपचारिक शिक्षा की विशेषताएँ

2.5.2 निरौपचारिक शिक्षा के दोष

2.5.3 शिक्षा के औपचारिक, अनौपचारिक एवं निरौपचारिक साधनों में अंतर

2.6 सारांश

2.7 शब्दावली

2.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

जब हम शिक्षा को आजीवन चलने वाली प्रक्रिया के रूप में देखते हैं तो हम शिक्षा के साधन के रूप में सिर्फ विद्यालय को ही नहीं देखते वरन् उन अनेक संस्थाओं को भी उसमें समन्वित करते हैं, जिनमें व्यक्ति जीवन पर्यन्त रहता है एवं जिनसे व्यक्ति उपयोगी या अनुपयोगी ज्ञान प्राप्त करता है। इन

संस्थाओं को हम शिक्षा के साधन के नाम से पुकारते हैं। शिक्षा के साधन वह तत्व, कारण या संस्थाएं हैं, जो बालक पर परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से शैक्षिक प्रभाव डालते हैं। यदि हम व्यापक अर्थ में देखें तो मनुष्य का सम्पूर्ण वातावरण ही उसकी शिक्षा को प्रभावित करता है, परन्तु इस वातावरण में कुछ तत्व अधिक महत्वपूर्ण होते हैं। चूंकि इनका बालक की शिक्षा से प्रत्यक्ष संबंध होता है। शिक्षा के साधनों का अर्थ स्पष्ट करते हुए बी.डी. भाटिया ने लिखा है:-

''समाज ने शिक्षा के कार्यों को करने के लिए अनेक विशिष्ट संस्थाओं का विकास किया है। इन्हीं संस्थाओं को शिक्षा के साधन कहा जाता है।''

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :

1. औपचारिक शिक्षा की विशेषताओं को जान सकेंगे।
2. औपचारिक शिक्षा के दोषों को जान सकेंगे।
3. अनौपचारिक शिक्षा की विशेषताओं को जान सकेंगे।
4. अनौपचारिक शिक्षा के दोषों को जान सकेंगे।
5. निरौपचारिक शिक्षा की विशेषताओं को जान सकेंगे।
6. निरौपचारिक शिक्षा के दोषों को जान सकेंगे।

2.3 शिक्षा के साधनों का वर्गीकरण

1. ब्राउन (Brown)ने शिक्षा के साधनों को निम्नलिखित चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया है:-
2. औपचारिक साधन (Formal Agencies):- इसके अंतर्गत वह विद्यालय, पुस्तकालय एवं संग्रहालय को सम्मिलित करते हैं।
3. अनौपचारिक साधन (Informal Agencies):- परिवार, समाज एवं राज्य को ब्राउन शिक्षा के अनौपचारिक साधन के अंतर्गत सम्मिलित करते हैं।
4. व्यवसायिक साधन (Commercial Agencies):- इसके अंतर्गत प्रेस, रेडियो, समाचार-पत्र व टेलीविजन सम्मिलित किए गये हैं।
5. अव्यवसायिक साधन (Non-Commercial Agencies):- खेल संघ, समाज कल्याण केन्द्र, प्रौढ़ शिक्षा एवं साक्षरता केन्द्र व स्काउटिंग, गाइडिंग संस्थाएं इसके अंतर्गत सम्मिलित की जाती हैं।

2.3.1 शिक्षा के औपचारिक साधन

शिक्षा के यह साधन वह हैं, जो बालक को सप्रयत्न शिक्षा देने का कार्य करते हैं। इसमें शिक्षा देने की योजना अर्थात् समय, स्थान, अध्यापक, विधि पाठ्यक्रम पूर्व निर्धारित होती है। यह संस्थाएं अपने

द्वारा निर्धारित नियमावली का अनुपालन करती हैं। औपचारिक शिक्षा के लाभों पर प्रकाश डालते हुए ड्यूवी ने कहा है- ''औपचारिक शिक्षा के बिना जटिल समाज के साधनों और उपलब्धियों को हस्तान्तरित करना संभव नहीं है। यह एक ऐसे अनुभव की प्राप्ति का द्वार खोलती है जिसको बालक दूसरों के साथ रहकर अनौपचारिक शिक्षा के द्वारा प्राप्त नहीं कर सकता।''

2.3.2औपचारिक शिक्षा की विशेषताएँ

1. यह शिक्षा पूर्व आयोजन, नियोजन एवं सप्रयत्नशील उपायों द्वारा प्रदान की जाती है।
2. यह शिक्षा कृत्रिम, जटिल तथा अप्राकृतिक होती है।
3. औपचारिक शिक्षा मूलतः विद्यालयों के द्वारा ही प्रदान की जाती है।
4. इसका प्रारंभ विद्यालय जाने पर होता है एवं अन्त भी विद्यालय छोड़ने पर हो जाता है।
5. यह शिक्षा भौतिक मूल्यों से जुड़ी होती है और हमें भौतिक साधनों को जुटाने हेतु प्रेरित करती है।
6. इसका उद्देश्य बालक को परीक्षा उत्तीर्ण कराकर प्रमाण-पत्र प्राप्त कराना है।
7. औपचारिक शिक्षा में शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, स्थान, समय, अध्यापक आदि सुनिश्चित कर लिए जाते हैं।

औपचारिक शिक्षा के साधन के संबंध में जॉन ड्यूवीका कथन सही है, ''बिना औपचारिक शिक्षा के यह संभव नहीं है कि हम इस जटिल समाज के स्रोतों व उपलब्धियों को हस्तान्तरित कर सकें, यह अनुभवों हेतु एक रास्ता खोलता है जो युवा वर्ग के लिए अप्राप्य है, यदि अन्य व्यक्तियों के साथ औपचारिक प्रशिक्षण हेतु छोड़ दिया जाये।''

(Without formal education, it is not possible to transmit all the resources and achievements of a complex society. It also open a way to a kind of experience which would not be accessible to the young, if they are left to pick-up their training in informal association with others.)

2.3.3 औपचारिक शिक्षा के दोष

1. यह शिक्षा सैद्धान्तिक अधिक व व्यवहारिक कम है।
2. औपचारिक शिक्षा बालक को यह सिखाती है कि उसके जीवन का प्रमुख उद्देश्य परीक्षा उत्तीर्ण करके प्रमाण-पत्र प्राप्त करना है।
3. यह शिक्षा अध्यापक को भी पाठ्यक्रम पूरा करने तक सीमित कर देती है।
4. शिक्षा विद्यालय की चारदीवारी में बँध जाती है।
5.

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. शिक्षा के तीन औपचारिक साधनों के नाम लिखिए।
2. शिक्षा के तीन अनौपचारिक साधनों के नाम लिखिए।
3. शिक्षा के तीन व्यवसायिक साधनों के नाम लिखिए।
4. शिक्षा के तीन अव्यवसायिक साधनों के नाम लिखिए।

2.4शिक्षा के अनौपचारिक साधन (In formal Agencies of Education)

शिक्षा के अनौपचारिक साधन शिक्षा को एक जीवनपर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया के रूप में देखते है। इनका मानना है कि लिखना, पढ़ना या अक्षर ज्ञान प्राप्त कर लेना ही शिक्षा नहीं है। शिक्षा इससे बहुत अधिक व्यापक तथा विस्तृत प्रत्यय है। शिक्षा वास्तव में वह है जो हम अपने जीवन के अच्छे-बुरे अनुभवों से सीखते हैं और यह अनुभव व्यक्ति जीवनपर्यन्त प्राप्त करता है। बैण्टाक Bantak के शब्दों में ''शिक्षा सभी प्रकार के अनुभवों का योग है, जिसे मनुष्य अपने जीवनकाल में प्राप्त करता है और जिसके द्वारा वह जो कुछ है, उसका निर्माण होता है।'' जे.एस.रॉस ने इस संबंध में लिखा है, ''अनौपचारिक शिक्षा बालक द्वारा सभी प्रभाव ग्रहण करना और उसे अपनी प्रकृति से उत्तेजित कर पूर्णतया विकसित करना सिखाती है।'' वास्तव में देखा जाए तो अनौपचारिक शिक्षा जीवन से संबंधित वे अनुभव हैं, जिन्हें हम बिना किसी व्यवस्थित प्रयास, संस्था तथा साधन के स्वाभाविक स्थिति से प्राप्त करते हैं। इस प्रकार की शिक्षा प्रत्यक्ष रूप से जीवन से संबंधित होती है। यह शिक्षा स्वाभाविक रूप से होती है। इसकी न तो कोई निश्चित योजना होती है और न ही कोई निश्चित नियमावली। यह बालक के आचरण का रूपान्तरण करते हैं, परन्तु रूपान्तरण की प्रक्रिया अज्ञात, अप्रत्यक्ष व अनौपचारिक होती है।

2.4.1 अनौपचारिक शिक्षा की विशेषताएँ

1. अनौपचारिक शिक्षा स्वाभाविक होती है। अर्थात् यह कृत्रिमता से परे होती है।
2. यह शिक्षा जीवनपर्यन्त चलती है अथवा हम यह भी कह सकते है कि इस शिक्षा का प्रारम्भ तब से हो जाता है जबकि बालक इस संसार में जन्म लेता है एवं यह तब तक चलती है जब तक कि बालक मृत्यु शैया को प्राप्त न कर ले।
3. इस शिक्षा को देने के प्रमुख साधन परिवार, पड़ोस, समाज, राज्य, धर्म आदि है।
4. इसमें बालक अपने अनुभवों के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करता है।

5. इसमें बालक स्वतंत्र वातावरण में शिक्षा ग्रहण करता है। उसके ऊपर कोई कठोर नियंत्रण नहीं होता है।
6. यह बालक की रूचि व जिज्ञासा पर आधारित होती है।

शिक्षा के इन साधनों के संबंध में जॉन ड्यूवी का कथन सही है, ''अन्य व्यक्तियों के साथ अनौपचारिक रूप से रहकर बालक शिक्षित होता है। यह प्रक्रिया बालक को शिक्षित करती है एवं उसके अनुभवों को व्यापक व प्रकाशित करती है और उसकी कल्पना को प्रेरित करती है, यह साधन हमारे विचारों व कथनों को स्पष्ट एवं सही करते है एवं उत्तरदायित्व की भावना उत्पन्न करते है।''

(The child is informally educated by living with others and the very process of living together educates. It enlarge and enlighters experience, it stimulates and enriches imagination, it creates responsibility, accuracy and civilness of statement and thought.)

2.4.2 अनौपचारिक शिक्षा के दोष

i. इसके द्वारा प्रदान किया गया ज्ञान अस्पष्ट होता है।
ii. इसमें शिक्षा का समय व स्थान अनिश्चित होने के कारण शिक्षा की स्थिति सदैव अस्थिर रहती है।
iii. ज्ञान ग्रहण करते समय बालक गलत धारणाओं का विकास कर लेता है।
iv. इस शिक्षा के द्वारा हम कौशलों व तकनीकियों का विकास नहीं कर सकते।
v. इसकी नियमावली व अनुशासन ढीला होता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

5. औपचारिक शिक्षा कृत्रिम, जटिल तथा अप्राकृतिक होती है। (सत्य/असत्य)
6. औपचारिक शिक्षा पूर्व आयोजन, नियोजन एवं सप्रयत्नशील उपायों द्वारा प्रदान की जाती है। (सत्य/असत्य)
7. औपचारिक शिक्षा विद्यालय की चारदीवारी से बाहर प्रदान की जाती है। (सत्य/असत्य)

2.5 शिक्षा के निरौपचारिक साधन (Non-Formal Agencies of Education)

यह शिक्षा का वह साधन है जिसमें शिक्षा का औपचारिक स्वरूप पूर्ण रूप से नियंत्रण में होता है। यह शिक्षा को एक सचेष्ट प्रक्रिया के रूप में देखते है एवं शिक्षा के विभिन्न आयामों पर नियंत्रण रखते है, अर्थात् इसमें शिक्षा का प्रवेश, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, अध्यापक, छात्र, शिक्षा के उद्देश्य व शिक्षा

की व्यवस्था पूरी तरह से औपचारिक होती है, परन्तु इसके साथ ही इसमें शिक्षा न तो पूर्णतया नियंत्रित होती है और न ही पूर्णतया अनियंत्रित, वरन् यह इन दोनों का सम्मिश्रण है।

शिक्षा की इस अवधारणा के अंतर्गत शिक्षार्थी कई क्षेत्रों में नियंत्रित होता है एवं कई क्षेत्रों में अनियंत्रित होता है। इसमें प्रायः आयु, स्थान, शिक्षण विधि पर नियंत्रण नहीं होता जबकि पाठ्यक्रम, परीक्षा, समय आदि की सीमा निश्चित होती है।

2.5.1 निरौपचारिक शिक्षा की विशेषताएँ

1. यह शिक्षा छात्रों को विद्यालय के तनावपूर्ण वातावरण से दूर रखती है।
2. एक समय में बहुत अधिक लोगों को शिक्षित किया जा सकता है। अतः जिन देशों में जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है, वहां यह बहुत उपयोगी है।
3. इसमें शिक्षा के ऊपर व्यय कम होता है।
4. यह शिक्षा अनौपचारिक शिक्षा से अधिक उपयोगी है। चूंकि इसमें छात्र उद्देश्यों के प्रति जागरूक रहता है, साथ ही छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन एवं मापन करना संभव होता है।
5. इसका पाठ्यक्रम निश्चित होता है, जिससे छात्र अपने उद्देश्यों के प्रति जागरूक रहता है।
6. इस शिक्षा को दूर स्थान पर रहने वाले या व्यवसाय में संलग्न व्यक्ति भी प्राप्त कर सकते है।

2.5.2 निरौपचारिक शिक्षा के दोष

1. छात्रों के मन में उत्पन्न शंकाओं का तुरन्त निराकरण संभव नहीं है।
2. कभी-कभी डाक-व्यवस्था में गड़बड़ होने के कारण छात्रों की पढ़ाई में व्यवधान पड़ जाता है।
3. सभी व्यक्ति अकेले शिक्षा ग्रहण करते है। इस कारण उनमें समूह भावना का विकास नहीं हो पाता है।
4. अध्यापक व छात्रों के मध्य प्रत्यक्ष संबंध स्थापित नहीं हो पाता। अतः उन दोनों के मध्य परस्पर अन्तःक्रिया का अभाव रहता है।

2.5.3 शिक्षा के औपचारिक, अनौपचारिक व निरौपचारिक साधनों में अन्तर (Difference Between Formal, Informal & Non-Formal Education)

शिक्षा के क्षेत्र (Areas of Education)	औपचारिक शिक्षा (Formal Education)	अनौपचारिक शिक्षा (Informal Education)	निरौपचारिक शिक्षा (Non-Formal Education)

1. छात्र (Student)	1. निश्चित होते है। 2. आयु सीमा निर्धारित होती है।	1. सीखने वालों की आयु सीमा निश्चित नहीं होती। 2. आयु सीमा पर कोई नियंत्रण नहीं होता।	1. छात्र निश्चित होते है।
2. अध्यापक (Resource Person or Teacher)	1. अध्यापक शिक्षित होता है। 2.अध्यापक निश्चित होता है।	1. अध्यापक कोई भी हो सकता है। 2.अध्यापक निश्चित नहीं होता है।	1.शिक्षा देने वाले व शिक्षा ग्रहण करने वालों के मध्य कोई संबंध प्रत्यक्ष नहीं होता है।
3. विषय वस्तु (Content)	1. सैद्धान्तिक होती है। 2. निश्चित होती है। 3.व्यवहारिकता कम होती है।	1. व्यवहारिक होती है। 2. अनिश्चित होती है। 3. सीखने वाले की रूचि पर आधारित होती है।	1. पाठ्यक्रम निश्चित होता है।
4. शिक्षण पद्धति (Teaching Method)	1. पाठ्यक्रम के अनुकूल होती है। 2. यह क्रिया पर कम बल देती है।	1.पद्धति लचीली होती है। 2. इसमें व्यवहारिकता निरीक्षण आदि पर बल दिया जाता है।	1.लिखित पाठों के माध्यम से शिक्षण होता है। 2. अध्यापक व शिक्षार्थी के मध्य अन्तःक्रिया असंभव होती है।
5. ढांचा (Structure)	1शिक्षण कार्यक्रम व्यवस्थित होता है। 2. यह विभिन्न इकाईयों में विभक्त होता है। 3. सीखना एक क्रमिक प्रक्रिया के रूप में होता है।	1. ढांचे में कोई व्यवस्था नहीं होती है। 2. सीखना एक अचानक होने वाली प्रक्रिया है।	1. ढांचा निश्चित होता है। 2. सीखना क्रमिक रूप में नहीं होता है। 3. इसकी व्यवस्था सचेष्ट होती है।
6. नियंत्रण (Control)	1. इसके ऊपर यांत्रिक रूप में नियंत्रण होता है। 2. सीखने वाले पर शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र को लादा जाता है।	1. यह सीखने वाले के नियंत्रण पर आधारित होता है।	1. इसमें शिक्षा के कुछ क्षेत्रों पर नियंत्रण होता है एवं कुछ पर नहीं।
7. स्थान (Location)	1.स्थान निश्चित होता है।	1. स्थान निश्चित नहीं होता है।	1. स्थान छात्र के लिए निश्चित नहीं है, परन्तु शिक्षा देने का स्थान निश्चित होता है।
8. समय (Time)	1.समय निश्चित होता है।	1. समय अनिश्चित होता है।	1. अवधि निश्चित है परन्तु शिक्षा ग्रहण करने का समय नहीं।
9. मूल्यांकन (Evaluation)	1. छात्रों का मूल्यांकन संभव है।	1. छात्रों का मूल्यांकन	1. छात्रों के मूल्यांकन की
10. पारितोषिक (Reward			

	1. अंक या उपाधि के रूप में मिलता है।	संभव नहीं है। 1. प्रशंसा के रूप में प्राप्त होता है।	व्यवस्था है। 1 अंक या उपाधि के रूप में मिलता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

8. अनौपचारिक शिक्षा का प्रमुख साधन संग्रहालय है। (सही/गलत)
9. अनौपचारिक शिक्षा के प्रमुख साधन परिवार, पड़ोस, राज्य आदि है। (सही/गलत)
10. निरौपचारिक शिक्षा का पाठ्यक्रम निश्चित होता है। (सही/गलत)

2.6 सारांश

प्रत्येक शिक्षा की एक संस्कृति होती है और इस संस्कृति का संरक्षण या रक्षा करने का दायित्व विद्यालय का होता है, परन्तु इस संरक्षण के साथ ही साथ विद्यालय का यह दायित्व भी है कि वह संस्कृति का मूल्यांकन करे एवं उसकी अच्छी बातों को सुरक्षित रखा जाये। विद्यालय का कार्य बालक की तर्क कल्पना, चिन्तन व निर्णय शक्ति का विकास करना, जिससे बालक स्वतंत्र, स्पष्ट व तार्किक रूप से चिन्तन कर सके। जबकि विद्यालय के द्वारा अनौपचारिक कार्य करने की अपेक्षा समाज द्वारा की जाती है। शिक्षा शास्त्री विद्यालय के औपचारिक कामों को अनिवार्य या प्राथमिक कार्यों की श्रेणी में रखते है। जैसे-बालक का शारीरिक विकास करने का दायित्व परिवार पर है। परन्तु परिवार के लिए यह संभव नहीं कि वह बालक का शारीरिक विकास शारीरिक क्रियाओं के माध्यम से कर सके। इस जिम्मेदारी को विद्यालय अच्छी तरह निभा सकता है। पुस्तकालय भी बालक के चर्तुमुखी विकास में अपना योगदान देते है। एक अच्छा अध्यापक वही होता है, जिसके पास किताबों का भण्डार हो, किताबों को इकट्ठा करना व उनको छात्रों के लिए उपलब्ध कराना अध्यापक की जिम्मेदारी होती है। अतः शिक्षा के औपचारिक, अनौपचारिक व निरौपचारिक विकास की जिम्मेदारी को अध्यापक महसूस करें व इन साधनों के द्वारा छात्रों का विकास करें।

2.7 शब्दावली

1. निरौपचारिक शिक्षा :. एक समय में बहुत अधिक लोगों को शिक्षित किया जा सकता है। अतः जिन देशों में जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है, वहाँ यह बहुत उपयोगी है।
2. औपचारिक शिक्षा :- . औपचारिक शिक्षा में शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, स्थान, समय, अध्यापक आदि सुनिश्चित कर लिए जाते है।

2.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. औपचारिक साधन - विद्यालय, पुस्तकालय एवं संग्रहालय।
2. अनौपचारिक साधन - परिवार, समाज व राज्य।
3. व्यावसायिक साधन - प्रेस, रेडियो, समाचार-पत्र।
4. अव्यावसायिक साधन - खेल संघ, समाज कल्याण केन्द्र।

5 सत्य

6 सत्य

7 असत्य

8 गलत

9 सही

10 सही

2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक अग्रवाल प्रकाशन आगरा।
2. सक्सेना (डॉ) सरोज शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार साहित्य प्रकाशनआगरा।
3. मित्तल एमएल (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउसमेरठ।
4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय रजत प्रकाशन नई दिल्ली।

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. शिक्षा के अभिकरणों से आप क्या समझते है? शिक्षा के औपचारिक, अनौपचारिक व निरौपचारिक साधनों में अन्तर बताइये।
2. छात्रों के विकास हेतु विभिन्न साधनों में समन्वय होना आवश्यक है। इस कथन की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
3. विद्यालय से आप क्या समझते है? औपचारिक साधन के रूप में विद्यालय की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
4. शिक्षा के अनौपचारिक साधन की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
5. शिक्षा के निरौपचारिक साधन से आप क्या समझते है? शिक्षा के निरौपचारिक साधनों के दोष बताइये।

इकाई 3: प्रकृतिवाद Naturalism

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 प्रकृतिवाद
3.3.1 प्रकृतिवादी दर्शन का अर्थ
3.3.2 प्रकृतिवाद की परिभाषाएं
3.3.3 प्रकृतिवाद के दार्शनिक स्वरूप
3.4 प्रकृतिवाद के प्रमुख सिद्धान्त
3.4.1 प्रकृतिवाद व शिक्षा के उद्देश्य
3.4.2 प्रकृतिवाद व पाठ्यक्रम
3.4.3 प्रकृतिवाद व शिक्षण विधियां
3.5 प्रकृतिवाद की प्रमुख विशेषताएं
3.6 शिक्षा में प्रकृतिवाद की देन
3.7 सारांश
3.8 शब्दावली
3.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.11 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

दर्शन की समस्या के रूप में तत्व की खोज तो अनादि काल से हो रही है और इसी आधार पर दार्शनिकों को समूहों में बांट दिया गया है। जो एक तत्व मानते हैं वे एकतत्ववादी अथवा अद्वैतवादी, जो दो तत्वों में विश्वास करते हैं वे द्वितत्ववादी अथवा द्वैतवादी और बहुतत्व मानने वाले बहुततत्ववादी कहलाते हैं। साधारणतया एकतत्ववादी विचारधारा ही प्रबल है। ब्रह्माण्ड का मूल कारण चेतन है अथवा अचेतन? उसका रूप पौद्गलिक है अथवा मानसिक? इन प्रश्नों का उत्तर यह प्रकट कर देगा कि विचारक विचारवादी है अथवा प्रकृतिवादी। विचारवादी प्रत्ययों को शाश्वत मानता है और उन सब प्रत्ययों का भी मूल किसी एक प्रत्यय को ही मानता है। यह मूल तत्व उसके अनुसार मानसिक है। यह तत्व चेतन है। इस पर आधारित शिक्षा-प्रणाली उस शिक्षा प्रणाली से भिन्न

होगी जो पुद्गल को ही प्रथम कारण मानते हैं और साथ-साथ उसे स्वयं प्रेरक, परिवर्तनशील और प्रयोजनहीन मानते हैं। यह मूल तत्व पुद्गल है और प्रयोजनहीन है तो शिक्षा का उद्देश्य प्रयोजनशील नहीं हो सकता। केवल जीवित रहने के योग्य बनाना ही शिक्षा का लक्ष्य रहेगा।

एक प्रकृतिवादी विचारधारा यांत्रिक भौतिकवाद से मिलती है। भौतिकवादी के लिए पुद्गल मूल तत्व है, मनस् है मस्तिष्क उसकी क्रिया। पुद्गल ही मनस् का उद्गम है, न कि मनस् पुद्गल का प्रेरक। चेतना इस मस्तिष्क का उपफल है। भौतिकवादी संसार को एक यंत्र मानते हैं और उनके लिए जीवित प्राणी तो केवल अणु-परमाणु इत्यादि का जोड़ है। प्राकृतिक चुनाव के द्वारा उच्च प्रकार की चेतन-मशीनों की उत्पत्ति संभव है। अतः भौतिकवादियों के लिए मनुष्य एक यंत्र है। प्रयोजनहीन, लक्ष्यहीन और निर्माण की शक्ति से च्युत मनुष्य केवल एक यंत्र है और मनोविज्ञान के लिए व्यवहारवादी शाखा इस दर्शन की देन है। व्यवहारवादी मनोविज्ञान के अनुसार मनोविज्ञान मनुष्य के केवल बाह्य व्यवहार का अध्ययन करता है और जिन्हें हम मानसिक क्रियायें कहते हजैं वे केवल बाह्य उत्तेजन की प्रतिक्रिया मात्र हैं। आत्मा और परमात्मा की मान्यता इस विचारधारा के अनुसार नहीं के बराबर है। चार्वाक का मत भी इस विचारधारा से मिलता-जुलता सा ही है।

3.2 उद्देश्य

1. प्रकृतिवाद के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
2. प्रकृतिवाद व शिक्षा के संबंध में जान सकेंगे।
3. प्रकृतिवादी दर्शन के अर्थ का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
4. प्रकृतिवाद के दार्शनिक रूपों का अध्ययन कर सकेंगे।
5. प्रकृतिवाद के प्रमुख सिद्धान्तों के बारे में जान सकेंगे।
6. प्रकृतिवाद की प्रमुख विशेषताओं के बारे में जान सकेंगे।

3.3 प्रकृतिवाद और शिक्षा (Naturalism and Education)

प्रकृतिवाद यह मानता है कि ''वास्तविक संसार भौतिक संसार है'' (Material word is the real word) इसी कारण हम प्रकृतिवाद को भौतिकवादी दर्शन भी कहते हैं। प्रकृतिवाद इस सृष्टि की रचना के लिए प्रकृति को ही उत्तरदायी मानता है। इसके अनुसार सभी दार्शनिक समस्याओं का प्रत्युत्तर प्रकृति में निहित होता है। (Nature alone Contain the final answer to all philosophical Problems)

दार्शनिक प्रकृति की व्याख्या सामान्यतया इस रूप में करते हैं कि प्रकृति सामान्य व स्वाभाविक रूप से विकसित होने वाली एक प्रक्रिया है। इस ब्रह्माण्ड की वह सभी वस्तुएं जिनकी रचना या निर्माण में मनुष्य का शून्य योगदान है, वही प्रकृति है। इसके साथ ही कुछ दार्शनिक विचारधारा मानती है कि

प्रकृति वह है जो सर्वत्र तथा सर्वदा विद्यमान है और इसकी गतिविधियां निश्चित व प्राकृतिक नियमों द्वारा संचालित व नियंत्रित होती हैं। साथ ही इनका यह भी विचार है कि प्रकृति में अनेक पदार्थ होते हैं जिनके परस्पर सहयोग से विभिन्न प्रकार की रचनाएं जन्म लेती हैं। यह पदार्थ गतिशील व क्रियाशील होते हैं। इसी कारण प्रकृतिवाद, भौतिकवाद भी कहा जाता है। दर्शनशास्त्र में प्रकृति को ही सर्वोपरि सत्ता के रूप में स्वीकार किया जाता है परन्तु प्राकृतिक दार्शनिक विचारधारा बहुत ही व्यापक रूप में प्रकृति को स्वीकार करती है। एक ओर तो वह प्रकृति को भौतिक जगत के रूप में देखती है, जिसका हम प्रत्यक्ष दर्शन कर सकते हैं तो दूसरी ओर प्रकृति की व्याख्या जीव-जगत के रूप में भी की जाती है। साथ ही तीसरे अर्थ में देश-काल की सभ्ज्ञी बातें भी प्रकृति में निहित होती हैं।

3.3.1 प्रकृतिवादी दर्शन का अर्थ (meaning of Naturalistic Philosophy)-

प्रो. सोर्ले के अनुसार प्रकृतिवाद को नकारात्मक रूप से भली-भांति समझाया जा सकता है। यह वह विचारधारा है जिसके अनुसार स्वाभाविक या निर्माण की शक्ति मनुष्य के शरीर को नहीं दी जा सकती। प्रकृतिवादी विचारक बुद्धि का स्थान मानते हैं, पर कहते हैं कि उसका अर्थ केवल बाह्य परिस्थितियों तथा विचारों को काबू में लाना है जो उसकी शक्ति से बाहर जन्म लेते हैं। एक प्रकार से प्रकृतिवादी भी भौतिकवादियों की भांति आत्मा-परमात्मा, स्पष्ट प्रयोजन, इत्यादि की सत्ता में विश्वास नहीं करते। प्रकृतिवाद सभ्यता की जटिलता की प्रतिक्रिया के रूप में हमारे सम्मुख आया है। इसके मुख्य नारे ''प्रकृति की ओर लौटो'', ''समाज के बंधनों को तोड़ो'' इत्यादि हैं। सभ्यता का लचीलापन समाप्त होने पर यह वाद जन्म लेता है। पर प्रकृति का अर्थ क्या है ? सर जान एडम्स ने कहा है कि यह शब्द बड़ा ही जटिल है। इसकी अस्पष्टता के कारण बहुत सी भूलें और अन्धकार का फैलाव होता है। इसका अर्थ तीन प्रकार से किया जा सकता है। प्रथम अर्थ में प्रकृति का तात्पर्य है निहित गुण और विशेषकर वे गुण जो जीवन के विकास और क्रमशः उन्नति की ओर ले जाने के लिए सहायक हों। यदि हम बालक को पढ़ाना चाहते हैं तो उसके विकास के नियम हमें ज्ञात होने चाहिए। प्रकृति का इस प्रकार अर्थ करने का गौरव रूसो को प्राप्त है। डॉ. हॉल जिसे बाल-केन्द्रित शिक्षा कहते हैं, उसे रूसो ने प्रेरणा दी थी, यद्यपि उससे पूर्व क्विन्टिलियन भी इसे जानता था। इस संदर्भ में हम कह सकते हैं कि प्रथम अर्थ में प्रकृति का तात्पर्य बहुत कुछ स्वभाव से लगाया जाता है।

प्रकृति का द्वितीय अर्थ है बनावट के ठीक विपरीत। जिस कार्य में मनुष्य ने सहयोग न दिया वही प्राकृतिक है। यह सत्य है कि मनुष्य प्रकृति में अपनी क्रियात्मकता से परिवर्तन लाया करता है। पर इसका अर्थ बनावट तो नहीं है। क्योंकि उक्त परिवर्तन अप्राकृतिक कैसे हो सकता है, जबकि मनुष्य स्वयं प्रकृति के कारण जीवित है और वह प्राकृतिक प्राणी है। बस इसका अर्थ यह है कि हम आदि काल की बात सोचने लगें। उस समय मनुष्य पशु था अथवा एक साधु अवस्था में, इसका निर्णय कठिन है। फिर एक चोर चोरी करने में क्या अपने स्वभाव का सहारा नहीं लेता ? फिर उसे सजा क्यों

मिलती है ? क्या हमें बालक को मूल्य प्रवृत्ति या संवेगों की शिक्षा देनी है ? हम ठीक नहीं बता सकते। हमारा हृदय केवल उपयुक्त और हृष्ट-पुष्ट मनुष्यों को ही जीवित रहने में सहायता पहुंचाना नहीं है वरन् आधे से अधिक मनुष्यों को जीवित रखने के योग्य बनाना है और हम यहां प्रकृति को स्वाभाविक तथा बनावटी दोनों ही रूपों में लेते हैं।

प्रकृति का तृतीय अर्थ है समस्त विश्व तथा उसकी क्रिया और इस अर्थ में मनुष्य जो कुछ भी करता है वह प्राकृतिक है। शिक्षा में इसका अर्थ होगा विश्व की क्रिया का अध्ययन और उसे जीवन में उतार देना। इसका अर्थ हुआ कि एक सुस्त और कामचोर को भी इस प्रकार कहने का अवसर मिल सकता है कि वह बहुत से कीटाणुओं की भांति स्वाभाविक रूप से कार्य नहीं कर सकता। इस प्रकार हिंसक प्रवृत्ति का व्यक्ति अपनी हिंसात्मक कार्यवाहियों को भी प्राकृतिक कहने की धृष्टता कर सकेगा। कुछ विद्वानों का मत है कि मनुष्य को प्रकृति की विकासवादी श्रृंखला में बाधक नहीं बनना चाहिए वरन् उसे उस क्रिया से अलग ही रहना ठीक है। विकास किसी व्यक्तित्व के बिना नहीं हो सकता, व्यक्तित्व बिना प्रयोजन काम नहीं कर सकता। इसलिए हमें कुछ विद्वानों के अनुसार इस विकास के नियम का अध्ययन करना चाहिए तथा प्रकृति का अनुयायी हो जाना चाहिए। शिक्षा का उद्देश्य इस विकास को समझाना तथा इसका अनुयायी बनने में सहायता करना है। शिक्षा संभव हो सके, इसलिए हमें बहुत सी बनावटी बातों पर भी बल देना होगा। इस प्रकार हमने देखा कि प्रकृति के अर्थ का निर्णय कठिन है। फिर भी हम इस बात को जानते हैं कि हरबर्ट स्पेसर तथा रूसो को प्रकृतिवादी माना जाता है।

3.3.2 प्रकृतिवाद की परिभाषाएं (Definition of Naturalism)

प्रकृतिवाद की परिभाषा को हम निम्न प्रकार समझ सकते हैं:-

जेम्स बार्ड- ''प्रकृतिवाद वह सिद्धान्त है, जो प्रकृति को ईश्वर से पृथक करता है, आत्मा को पदार्थ के अधीन करता है और अपरिवर्तनीय नियमों को सर्वोच्चता प्रदान करता है।''

थॉमस और लेंग के अनुसार- ''प्रकृतिवाद आदर्शवाद के विपरीत मन को पदार्थ के अधीन मानता है, और यह विश्वास करता है कि अंतिम वास्तविकता-भौतिक है, आध्यात्मिक नहीं।''

जायस के अनुसार- ''प्रकृतिवाद एक ऐसा दार्शनिक तंत्र है, जिसमें प्रभुत्व विशेषता के रूप में आध्यात्मिक, अन्त ज्ञानात्मक एवं पदार्थ जगत से परे की अनुभूतियों को बहिष्कृत किया जाता है।''

पैरी के अनुसार- ''प्रकृतिवाद, विज्ञान नहीं है, वरन् विज्ञान के बारे में दावा है। अधिक स्पष्ट रूप में यह इस बात का दावा है कि वैज्ञानिक ज्ञान अंतिम है, जिसमें विज्ञान से बाहर या दार्शनिक ज्ञान का कोई स्थान नहीं है।''

ब्राइस के अनुसार- ''प्रकृतिवाद एक प्रणाली है और जो कुछ आध्यात्मिक है, उसका बहिष्कार ही उसकी प्रमुख विशेषता है।''

रस्क के अनुसार- ''प्रकृतिवाद एक दार्शनिक स्थिति है जिसे वे लोग अपनाते हैं, जो दर्शन की व्याख्या वैज्ञानिक दृष्टिकोण से करते हैं।''

3.3.3 प्रकृतिवाद के दार्शनिक स्वरूप (Philosophy Form of Naturalism)

दार्शनिक सिद्धान्त की दृष्टि से प्रकृतिवाद के निम्नलिखित तीन रूप माने जाते हैं:-

(1) भौतिक जगत का प्रकृतिवाद (Naturalism of Physical Words) - यह सिद्धान्त मानव क्रियाओं व्यक्तिगत अनुभवों, संवेगों, अनुभूतियों आदि की भौतिक विज्ञान से व्याख्या करना चाहता है। यह भौतिक विज्ञान के द्वारा समस्त जगत की व्याख्या करना चाहता है। इसका शिक्षा के क्षेत्र पर विशेष प्रभाव नहीं है। इसने विज्ञान को ज्ञान में सबसे ऊंचे आसन पर बैठा दिया है। विज्ञान न केवल एक मात्र ज्ञान है बल्कि उसके अलावा कोई ज्ञान संभव नहीं है। इस प्रकार भाववाद के रूप में इस सिद्धान्त में दार्शनिक ज्ञान को भी व्यर्थ माना जाता है।

(2) यांत्रिक प्रकृतिवाद (Mechanical Naturalism) - इस सिद्धान्त के अनुसार समस्त जगत एक यंत्र के समान कार्य कर रहा है और वह यंत्र जड़तत्व का बना है जिसमें स्वयं उसको चलाने की शक्ति है। इस प्रकार प्रकृतिवाद का यह रूप जड़वाद है। जड़वाद के अनुसार जड़तत्व ही सब कुछ है और जो कुछ है वह जड़ है। व्यक्ति एक सक्रिय यंत्र से अधिक कुछ नहीं है। उसमें परिवेश के प्रभाव के कारण कुछ सहज क्रियायें होती हैं। यंत्रवाद के प्रभाव से मनोविज्ञान में व्यवहारवादी सम्प्रदाय का जन्म हुआ जिसके अनुसार समस्त मानव-व्यवहार की व्याख्या उत्तेजना और अनुक्रिया के शब्दों में की जा सकती है। व्यवहारवादी जड़तत्व से अलग चेतना का कोई अस्तित्व नहीं मानते और चिन्तन, कल्पना, स्मृति आदि सभी मानसिक प्रक्रियाओं की व्याख्या शारीरिक शब्दों के द्वारा करते हैं। इनके अनुसार मनुष्य और पशु की क्रियाओं में कोई अन्तर नहीं है, इन दोनों की ही व्याख्या उत्तेजना-अनुक्रिया के शब्दों में की जा सकती है। इस प्रकार व्यवहारवाद समस्त मानव-व्यवहार की यांत्रिक प्रक्रिया के रूप में व्याख्या करता है। प्रकृतिवाद के इस रूप ने शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक प्रभाव डाला है।

(3) जैवकीय प्रकृतिवाद (Biological naturalism) - प्रकृतिवाद के इस रूप ने शिक्षा के क्षेत्र में सबसे अधिक प्रभाव डाला है। इसी ने प्राकृतिक मानव का सिद्धान्त उपस्थित किया। विकासवाद पशु और मानव विकास को एक ही क्रम में मानता है। वह मनुष्य की आध्यात्मिक प्रकृति को नहीं मानता और उसकी प्रकृति को मानव पूर्वजो से मिला हुआ मानता है। इसलिए मनुष्य और पशु स्वभाव में बहुत कुछ समानता है। जैवकीय प्रकृतिवाद के अनुसार जगत में समस्त प्रक्रियाओं और समस्त प्रकृति की व्याख्या भौतिक अथवा यांत्रिक क्रियाओं के रूप में नहीं की जा सकती क्योंकि

जीव जगत में विकास मुख्य घटना है। सभी प्राणियों में जीवन की प्रेरणा होती है और इसलिए जीवन का निम्न से उच्च स्तरों का विकास होता है। विकास के समस्त लक्षण मानव व्यक्ति के जीवन में देखे जा सकते हैं। वह क्या रूप लेगा और किस प्रकार वृद्धि करेगा यह सब विकास के सिद्धान्तों से निश्चित होता है। जबकि पशु-जगत में विकास की प्रक्रिया केवल भौतिक स्तर तक ही सीमित है। मानव-प्राणियों में वह सबसे अधिक मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक स्तरों पर ही बढ़ती है। केवल मानव व्यक्ति ही नहीं बल्कि मानव समूहों में भी विकास की प्रेरणा होती है और इसलिए वे विकसित होते हैं तथा उनमें विकास के वे ही नियम काम करते हैं जो व्यक्ति के विषय में लागू होते हैं। चार्ल्स डार्विन ने विकास की प्रक्रिया में अस्तित्व के लिए संघर्ष (Struggle for Existence) और उपयुक्ततम की विजय (Survival of the Fittest) के सिद्धान्तों को महत्वपूर्ण माना है। इसके अनुसार आत्म-संरक्षण (Self preservation) ही प्राकृतिक जगत में सबसे बड़ा नियम है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. पुदगल से क्या अभिप्राय है ?
2. प्रकृति से आप क्या समझते हैं ?
3. ''प्रकृतिवाद आदर्शवाद के विरूद्ध मन को पदार्थ के अधीन मानता है और यह विश्वास करता है कि अंतिम वास्तविकता भौतिक है, आध्यात्मिक नहीं।'' यह परिभाषा किस विद्वान की है ?

   (अ) जेम्स वार्ड (ब) थॉमस और लैग (स) जायस (द) पैरी
4. यांत्रिक प्रकृतिवाद से आप क्या समझते हैं ?

3.4 प्रकृतिवाद के प्रमुख सिद्धान्त (Principles of Naturalism)

प्रकृतिवाद के प्रमुख सिद्धान्त निम्नवत् हैं:-

a. इस सृष्टि का निर्माण वस्तु या तत्व से हुआ है। मानव भी वस्तु का ही एक रूप है।
b. प्रकृतिवाद में धर्म एवं ईश्वर का कोई स्थान नहीं है।
c. मस्तिष्क की क्रिया फल ही अनुभव है।
d. प्रकृतिवाद के अनुसार समाज व्यक्ति के लाभ के लिए है। अतः समाज का स्थान व्यक्ति के बाद आता है।
e. मानव की मूल प्रवृत्ति पशुओं के समान होती है।
f. प्रकृति अंतिम सत्ता या वास्तविकता है।
g. नैतिक मूलप्रवृत्ति, जन्मजात अन्तरात्मा, परलोक, वैयक्तिक अमरता, चमत्कार, ईश्वर-कृपा, प्रार्थना-शक्ति और इच्छा की स्वतंत्रता, भ्रम है।

h. मनुष्य के सांसारिक जीवन की भौतिक दशाएं विज्ञान की खोजों और मशीनों के आविष्कारों द्वारा बदल दी गई।
i. विकास की प्रक्रिया में मस्तिष्क एक घटना है। यह उच्चकोटि के जीवों में अधिक विकसित नाड़ी मण्डल का समूह है।
j. हर वस्तु का जन्म प्रकृति के ही सान्निध्य में होता है और मृत्युपरांत प्रकृति (पंचतत्व) में ही विलीन हो जाता है।
k. ज्ञान और सत्य का आधार-इन्द्रियों का अनुभव है।
l. प्रकृति के नियम अपरिवर्तनीय हैं। अपरिवर्तनीय प्राकृतिक नियम सब घटनाओं को भली प्रकार स्पष्ट करते हैं।
m. वास्तविकता की व्याख्या केवल प्राकृतिक विज्ञानों द्वारा की जा सकती है।
n. मस्तिष्क मानव की शक्ति एवं क्रिया का स्रोत है।

3.4.1 प्रकृतिवाद व शिक्षा के उद्देश्य Naturalism and aims of Education

प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री रूसो (Rousseau) ने कहा कि शिक्षा का शिक्षा का उद्देश्य मानव को प्रकृति के अनुकूल जीवन व्यतीत करने हेतु योग्य बनाना है। शिक्षा के द्वारा हम मानव में कुछ नया उत्पन्न नहीं करते वरन् मानव की मौलिकता को बनाये रखने का प्रयास करते हैं और मानव संसर्ग के फलस्वरूप उसमें जो कृत्रिमता आ जाती है, उसका विनाश करने का प्रयास करते हैं। रूसो ने कहा कि ''रोजमर्रा के व्यवहार को (समाज-सम्मत व्यवहार को) बदल डालो और सदा सर्वदा तुम्हारा कृत्य सही होगा।'' रूसो ने हर स्थान पर सामाजिक संस्थाओं की अवहेलना की है। वह कहता है कि ''मानवीय संस्थाएं मूर्खता तथा विरोधाभास के समूह हैं।'' परन्तु वह प्रकृति को ईश्वरीय सृष्टि मानता है और मनुश्य को ईश्वरीय कृति।

जैवकीय प्रकृतिवाद के अनुसार शिक्षा के तीन प्रमुख उद्देश्य माने जाते हैं:-

i. 1 व्यक्ति को इस योग्य बनाना जिससे कि वह इस जगत में अपने आपको जिन्दा रख सके, जीवन के संघर्षो का मुकाबला कर सके तथा सफलता प्राप्त करने हेतु प्रयास कर सके।
ii. शिक्षा का उद्देश्य है व्यक्ति को उसके वातावरण के साथ सामंजस्य स्थापित करने की योग्यता प्रदान करना।
iii. 3.बर्नार्ड शॉ के अनुसार, ''शिक्षा का उद्देश्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक जातीय संस्कृति का संरक्षण, हस्तान्तरण व वृद्धि होना चाहिए। यह उद्देश्य आदर्शवादी उद्देश्य के निकट है।''

संक्षेप मेंप्रकृतिवाद के अनुसार हम शिक्षा के निम्न उद्देश्य बता सकते हैं -

i. शिक्षा द्वारा बालक को प्राकृत जीवन व्यतीत करने हेतु तैयार करना।

ii. बालक की प्राकृतिक शक्तियों का विकास करना।
iii. बालक को इस प्रकार का ज्ञान व दक्षता प्रदान करना जिससे कि वह अपने पर्यावरण के साथ समायोजित हो सके।
iv. मानव में उचित तथा उपयोगी सहज क्रियाओं को उत्पन्न करना अर्थात् मनुष्य में शिक्षा द्वारा ऐसी आदतोंएवं शक्तियों का विकास करना जो मशीन के पुर्जे की भांति अवसरानुकूल प्रयुक्त की जा सकें।
v. बालक को जीवन संघर्षो के योग्य बनाना।
vi. जातीय निष्पत्तियों का संरक्षण करना व विकास करना।
vii. बालक का आत्मसंरक्षण व आत्मसंतोष की प्राप्ति।
viii. मूल प्रवृत्तियों का शोधन एवं मार्गान्तरीकरण।
ix. बालके के व्यक्तित्व का स्वतंत्र विकास।

3.4.2 प्रकृतिवाद व पाठ्यक्रम Naturalism of Curriculum-

प्रकृतिवाद के शिक्षा के उद्देश्य के संबंध में स्पेन्सर ने पांच उद्देश्यों की चर्चा की है। वह प्रकृतिवाद के पाठ्यक्रम को भी इन उद्देश्यों की पूर्ति का एक सासधन मानते हुए कहते हैं:-वास्तव में यदि देखा जाए तो प्रकृतिवादी पाठ्यक्रम का संगठन अपने ही ढंग से करते हैं और मानते हैं कि बालक की प्रकृति, नैसर्गिक रूचि, योग्यता, अनुभव व स्वाभाविक क्रियाओं के आधार पर ही पाठ्यक्रम का संगठन होना चाहिए और पाठ्यक्रम में वह विषय रखे जाने चाहिए जो बालक के विकास की विभिन्न अवस्थाओं के अनुरूप हों। पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्तों के संबंध में प्रकृतिवादी विचारधारा इस प्रकार हैः-

i. पाठ्यक्रम निर्माण का आधार बाल हो।
ii. पाठ्यक्रम में विज्ञान विषयों को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाये।
iii. पाठ्यक्रम व्यावहारिक व जीवनोपयोगी हो।
iv. पाठ्यक्रम अनुभव-केन्द्रित हो।

3.4.3 प्रकृतिवाद व शिक्षण विधियां Naturalism and method of Teaching

प्रकृतिवाद शिक्षण विधियों के परम्परागत प्रारूप की आलोचना करता है और इस विचार को मान्यता देता है कि शिक्षण विधियों में भी नित्य नवीन परिवर्तन होने चाहिए। रूसो Rousseau) ने कहा है कि अपने शिक्षार्थी को कोई भी शाब्दिक पाठ न पढ़ाओ वरन् उसे अनुभव द्वारा सीखने के अवसर दो। (Give your scholar no verbal lesson, he should be taught by experience alone) प्रकृतिवाद का केन्द्रबिन्दु छात्र है। इस कारण वह यह मानते हैं कि जिन विधियों के द्वारा छात्रों को पढ़ाया जाये, वह निम्न तीन सिद्धान्तों पर आधारित हों:-

i. विकास या उन्नति का सिद्धान्त (Principal of growth)
ii. छात्र क्रिया का सिद्धान्त(Principal of pupil Activity)
iii. वैयक्तिकता का सिद्धान्त (Principal of Individualization

स्पेन्सर (Spencer) महोदय ने प्रकृतिवादी शिक्षण विधियों की चर्चा की है, जो इस प्रकार है -

1. प्रकृति के अनुरूप शिक्षा (Education according to Nature) शिक्षा बालक के लिए संचालित की जाने वाली एक प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य बालक का स्वाभाविक रूप से विकास करना है। अतः शिक्षा के द्वारा बालक की नैसर्गिक वृद्धि होनी चाहिए और शिक्षण प्रक्रिया व बालक के अनुभवों के बीच सामंजस्य स्थापित किया जाना चाहिए।
2. शिक्षा आनन्द प्रदायनी Education for Enjoyment : हम शिक्षण की जो विधि अपनाएं, उसका उद्देश्य बालक में शिक्षण के प्रति रूचि जागृत करना होना चाहिए। चूंकि जब तक बालक किसी चीज में रूचि नहीं लेगा, तब तक वह शारीरिक व मानसिक रूप से किसी भी बात को सीखने हेतु तत्पर नहीं होगा। इसी कारण प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक थार्नडाइक ने कहा था कि शिक्षण विधि में अभिप्रेरणा सिद्धान्त, प्रभाव का नियम तथा तत्परता का नियम (Law of Effect) को समाहित किया जाना चाहिए।
3. स्वचालित आत्म-क्रिया (Spontaneous self-activity): स्पेन्सर का विचार था कि बालक किन्ही अन्य के प्रयासों द्वारा नहीं सीखता, अपितु वह स्वयं अपनी आत्म-क्रिया सीखता है और स्वयं के प्रयासों द्वारा अर्जित ज्ञान ही वास्तविक व चिरस्थाई होता है।
4. शिक्षा में शारीरिक व मानसिक विकास का संतुलन (Balance in Physical and mental development) : शिक्षण विधियां इस विचार को ध्यान में रखते हुए अपनाई जानी चाहिए कि शिक्षा को बालक के व्यक्तित्व के दो प्रमुख पक्षों (मानसिक व शारीरिक) का समान रूप से विकास करना है। किसी की भी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए।
5. नकारात्मक शिक्षा (Negative Education) - नकारात्मक शिक्षा से आशय है कि शिक्षा हमें सत्यता व पुण्य का पाठ नहीं पढ़ाये वरन् हमें असत्यता व पाप से दूर रहना सिखाए। अर्थात् नकारात्मक शिक्षा गुण आरोपित नहीं करती वरन् अवगुणों से बचाती है। यह वह मार्ग प्रशस्त करती है जो व्यक्ति को अवगुणों से परे रखता है।
6. शिक्षण विधि आगमनात्मक हो (Teaching Method should be Inductive) - इस संदर्भ में प्रकृतिवाद ने जिस विधि को जन्म दिया, उसे ह्यूरिस्टिक विधि (Heuristic Method) के नाम से जाना जाता है। बालक को प्रत्यक्ष रूप से सीखने के अवसर मिलने चाहिए, जिसमें छात्र को एक अन्वेषक या आविष्कारक की भूमिका अदा करनी होती है। इसी को आगमन विधि कहते हैं।

3.5 प्रकृतिवाद की प्रमुख विशेषताएं (Chief Characteristics of Nature)

1. **प्रकृति ही वास्तविकता है (Nature is Ultimate Reality)**- प्रकृतिवाद प्रकृति को अंतिम सत्ता मानता है और मानव प्रकृति पर अधिक बल देता है। यह इस बात पर विश्वास करता है कि वास्तविकता व प्रकृति (Reality and Nature) में कोई अन्तर नहीं है। अर्थात् जो वास्तविक है, वह प्रकृति है या जो प्रकृति है, वह वास्तविक है। हॉकिंग (Hocking) के शब्दों में- ''प्रकृतिवाद इस बात को अस्वीकार करता है कि प्रकृति से परे, प्रकृति के पीछे या प्रकृति के अलावा कोई चीज अपना अस्तित्व रखती है, चाहे वह सांसारिक परिधि में हो या आध्यात्मिक परिधि में।'' (Naturalism denies existence of anything nature, behind nature such as the supernatural of other worldy)
2. **मन व शरीर में कोई अंतर नहीं है (No distinction between mind and body) -** प्रकृतिवादी विचारधारा मन व शरीर में कोई अंतर नहीं करती। वह यह मानती है कि मानव पदार्थ है, चाहे उसका मन हो या शरीर, दोनों ही इस पदार्थ का परिणाम हैं।
3. **वैज्ञानिक ज्ञान पर बल (Emphasis on Scientific knowledge) -** प्रकृतिवाद यह भी मानता है कि वैज्ञानिक ज्ञान ही उचित ज्ञान होता है और हमारा प्रयास यह होना चाहिए कि हम इस वैज्ञानिक ज्ञान को जीवन से जोड़ सकें।
4. **वैज्ञानिक विधि द्वारा ज्ञान प्राप्ति पर बल (Emphasis on acquiring knowledge through scientific method) -** प्रकृतिवाद के अन्तर्गत आगमन (Inductive) विधि द्वारा ज्ञानार्जन की चर्चा की गई है, साथ ही वह इस बात की भी चर्चा करते हैं कि ज्ञान-प्राप्ति का सर्वोचित तरीका निरीक्षण विधि है।
5. **ज्ञान-प्राप्ति हेतु इन्द्रियों की आवश्यकता (Need of sense for Acquiring Knowledge) -** प्रकृतिवाद यह भी मानता है कि मानव इस जगत पर जो भी ज्ञान प्राप्त करता है, उसका माध्यम इन्द्रियां होती हैं। बिना इन्द्रिय सहयोग के मानव ज्ञानार्जन नहीं कर सकता।
6. **प्रकृति ही वास्तविक सत्ता ;(Nature as a big Power) -** प्रकृतिवादी विचार यह भी मानता है कि इस संसार में सर्वोच्च शक्ति प्रकृति के हाथों में ही निहित रहती है और प्रकृति के नियम अपरिवर्तनशील हैं।
7. **मानव प्रकृति का ही अंग है (Man is a Segment of Nature)-** प्रकृतिवादी समाज के अस्तित्व के प्रति कोई आस्था नहीं रखते। इस कारण मनुष्य को समाज का अंग नहीं मानते। उनका विचार है कि मनुश्य प्रकृति का ही अभिन्न अंग होता है।
8. **मूल्य प्रकृति में ही निहित है (Value Lie in Nature) -** मूल्य का निर्धारण आदर्शवादी के अनुसार समाज द्वारा होता है। जबकि प्रकृतिवादी यह मानते हैं कि मूल्य प्रकृति में ही विद्यमान

रहते हैं और यदि मानव मूल्यों की प्राप्ति चाहता है तो उसे प्रकृति से घनिष्ठ संबंध स्थापित करना होगा।

9. **आत्मा और परमात्मा का कोई महत्व नहीं (No Importance of Soul and God) -** प्रकृतिवाद किसी आध्यात्मिक शक्ति में या आत्मा में विश्वास नहीं रखते। वह मानते हैं कि मानव की रचना प्रकृति के द्वारा हुई है और मनुष्य के शरी का नाश होते ही उसका चेतन तत्व भी समाप्त हो जाता है।
10. **भौतिक सुख की प्राप्ति (To achieve Material Prosperity)** - प्रकृतिवाद मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य भौतिक सम्पन्नता की प्राप्ति मानता है। इस कारण मानव परिस्थितियों को अपने अनुकूल ढालता है। वह मानव को इस संसार का श्रेष्ठतम पदार्थ मानता है जो बुद्धि, तर्क व चिन्तन के कारण अन्य पशुओं से सर्वोपरि है।
11. **वैयक्तिक स्वतंत्रता पर बल (Emphasis on Scientific Knowledge) -** प्रकृतिवाद यह भी मानता कि व्यक्ति दुःखी इस कारण है चूंकि वह प्रकृति से दूर होता जा रहा है। व्यक्ति को इतनी स्वतंत्रता मिलनी चाहिए कि वह प्रकृति से समीपता स्थापित कर सके।

3.6 शिक्षा में प्रकृतिवाद की देन (Contribution of naturalism in education)

1. बालक का प्रमुख स्थान प्रकृतिवाद की विशेषता है। आज हमें इस बात पर आश्चर्य नहीं होता किन्तु 19वीं शताब्दी के अन्त तक लोग बालक को प्रौढ़ का छोटा रूप मानते थे, उसका अलग व्यक्तित्व मानने को तैयार न थे। 'बाल केन्द्रित शिक्षा' प्रकृतिवाद की देन है।
2. बाल-मनोविज्ञान के अध्ययन की प्रेरणा भी इसी विचारधारा ने दी। बालक को पढ़ाने के लिए उसके मनोविज्ञान को जाने की आवश्यकता की पूर्ति हेतु मनोविज्ञान के क्षेत्र में खोज प्रारम्भ हुई। मनोविज्ञान ने बताया कि बालक विकास काल में विभिन्न स्थितियों से होकर गुजरता है। यही नही मनोविज्ञान की एक विशेष शाखा-मस्तिष्क विश्लेषण को तो विशेष प्रोत्साहन मिला। बालक को व्यर्थ ही दबाना नहीं चाहिए। लिंग-भेद की ओर इस मनोविज्ञान की विशेष देन है। इसके प्रति इसने एक स्वस्थ विचारधारा को जन्म दिया।
3. शिक्षा की विधि में प्रकृतिवाद ने शब्दों की अपेक्षा अनुभवों पर बल दिया। केवल शब्द शिक्षा के लिए आवश्यक गुण नहीं है, अनुभव भी आवश्यक हैं। इसलिए अब भूगोल तथा इतिहास के पाठ केवल कक्षा की चाहरदीवारी के अन्दर न पढाकर परिभ्रमण एवं शिक्षा-यात्राओं के माध्यम से पढाये जाते हैं।
4. शिक्षा में खेल की प्रमुखता इस विचारधारा की ही देन है। इससे पूर्व खेल व्यर्थ की चीज समझा जाता था। प्रकृतिवाद ने खेल को स्वाभाविक तथा आवश्यक सिद्ध किया।

5. 'प्रकृति की ओर लौटो' इस विचारधारा का नारा है। इसका कथन है 'सभ्यता की जटिलता से दूर प्रकृति की शान्तिमयी गोद की ओर चलो।' इस प्रवृत्ति ने प्रकृति-प्रेम में वृद्धि की।
6. केवल पुस्तकीय ज्ञान को हटाकर अनुभव तथा ज्ञान को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया।
7. अन्त में यह कह देना आवश्यक होगा कि इंग्लैण्ड में नील के स्कूल में तथा डोरा रसेल के स्कूल में इस प्रक्रियावादी विचारधारा पर आधारित, स्वतंत्रता तथा सरलता के वातावरण में, मूल प्रवृत्ति के आधार पर, स्वयंचालित शिक्षा दी जाती थी। इन स्कूलों में भेद न होने के कारण तथा स्वस्थ विचारधाराओं के कारण चरित्र संबंधी शिकायत कभी नहीं चलती थी। यहां शिक्षा भी खेल के ऊपर आधारित थी। पुस्तकीय ज्ञान का महत्व कम है। अतः डोरा रसेल के विद्यालय में इस पर अधिक बल नहीं था। पर, यह कहना भ्रामक न होगा कि केवल प्रकृतिवाद ही बालक की रूचि पर बल देने वाली विचारधारा नहीं है। आदर्शवाद भी बालक के महत्व को कम न करेगा। कहना न होगा कि यदि प्रकृति को आदर्शवाद का संबल मिल जाये तो पाशविक एवं आध्यात्मिक दोनों अवस्थाओं से मनुष्य का उचित संबंध स्थापित हो जाएगा।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

5. ''मन व शरीर में कोई अन्तर नहीं है।'' ;(No distinction between mind and body) विचारधारा है-
   (अ) आदर्शवाद(ब) प्रयोजनवाद(स) अस्तित्ववाद(द) प्रकृतिवाद
6. ''वैज्ञानिक ज्ञान ही उचित ज्ञान होता है। हम इस वैज्ञानिक ज्ञान को जीवन से जोड़ सकें।'' यह विचारधारा है-
   (अ) आदर्शवाद(ब) प्रकृतिवाद(स) प्रयोजनवाद(द) अस्तित्ववाद
7. ''इस संसार में सर्वोच्च शक्ति प्रकृति के हाथों में निहित है और प्रकृति के नियम अपरिवर्तनशील हैं''। यह विचारधारा है-
   (अ) आदर्शवाद(ब) प्रकृतिवाद(स) अस्तित्ववाद(द) प्रयोजनवाद
8. किसने शिक्षा की विधि में शब्दों की अपेक्षा अनुभवों पर बल दिया है ?
   (अ)प्रकृतिवाद(ब) प्रयोजनवाद(स) आदर्शवाद(द) अस्तित्ववाद
9. ''सभ्यता की जटिलता से दूर प्रकृति की शान्तिमयी गोद की ओर चलो''। यह विचारधारा है-
   (अ)अस्तित्ववाद(ब)प्रकृतिवाद(स)प्रयोजनवाद(द) आदर्शवाद

3.7 सारांश

शिक्षा के क्षेत्र में प्रकृतिवाद का प्रभाव दो रूपों में दिखलाई पड़ता है- एक तो दर्शन के रूप में उसने शिक्षा के लक्ष्यों और उद्देश्यों को निश्चित किया है। दूसरे उसने मानव प्रकृति की व्याख्या करके शिक्षण विधियों और शिक्षा के साधनों की व्याख्या की है। शिक्षा के क्षेत्र में प्रकृतिवाद न तो भौतिक जगत का प्रकृतिवाद है, न यांत्रिक प्रकृतिवाद और न जैवकीय प्रकृतिवाद। इन तीनों से भिन्न वह एक नमनीय व्याख्या है जो कि शिक्षा को बालक के संपूर्ण अनुभव पर आधारित करना चाहती है और किताबी ज्ञान के विरूद्ध अर्थात् प्रकृतिवाद के बनाए हुए शिक्षा के चित्र में बालक सबसे आगे होता है। शिक्षक, विद्यालय, पुस्तकें, पाठ्यक्रम आदि सब पृष्ठभूमि में होते हैं। सर जॉन एडम्स ने इस प्रवृत्ति को बाल केन्द्रित अभिवृत्ति (Paidocentric attitude) कहा है। प्रकृतिवादियों के अनुसार बालक पर पूर्ण आयोजित शिक्षा लादी नहीं जानी चाहिए। चाहे वह कितनी भी वैज्ञानिक क्यों न हो। शिक्षा में बालक को स्वतंत्र चुनाव का अवसर देना चाहिए। वह क्या पढ़ेगा, किस तरह व्यवहार करेगा, किस तरह खेलेगा-कूदेगा, कैसे बैठेगा आदि बातें उसकी इच्छा पर छोड़ देनी चाहिए। साथ ही शिक्षा का स्थान शासक का नहीं बल्कि मित्र और साथी का है। शिक्षक का कार्य उसे सामग्री जुटाना, अवसर उत्पन्न करना, आदर्श परिवेश का निर्माण करना है। जिससे बालकों का सर्वांगीण विकास हो सके। प्रकृतिवादी शिक्षा-प्रणालियों के विषय में खेल प्रणाली पर जोर देता है तथा पाठ्यक्रम बहुमुखी और व्यापक हो, इसमें समाजशास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक तथा वैज्ञानिक प्रवृत्ति के अतिरिक्त शिक्षा के लक्ष्यों और पाठ्यक्रम की ओर समाहारक प्रवृत्ति दिखलाई पड़ती है। लगभग बहुमुखी पाठ्यक्रमों और पाठ्यक्रमोत्तर कार्यक्रमों का महत्व स्वीकार किया गया है।

3.8 शब्दावली

1. भौतिक जगत का प्रकृतिवाद- यह सिद्धान्त मानव-क्रियाओं, व्यक्तिगत अनुभवों, संवेगों, अनुभूतियों आदि की भौतिक विज्ञान से व्याख्या करना चाहता है। यह भौतिक विज्ञान के द्वारा समस्त जगत की व्याख्या करना चाहता है।
2. स्वचालित आत्म-क्रिया (Spontaneous Self-activity) - स्पेन्सर का विचार है कि बालक किन्हीं अन्य के प्रयासों द्वारा नहीं सीखता, अपितु वह स्वयं अपनी आत्म-क्रिया से सीखता है और स्वयं के प्रयासों द्वारा अर्जित ज्ञान ही वास्तविक व चिरस्थाई होता है।
3. प्रकृतिवाद की ओर लौटो- प्रकृतिवादी चाहते हैं कि सभ्यता की जटिलता से दूर प्रकृति की शान्तिमयी गोद की ओर चलो ताकि बालक का नैसर्गिक विकास हो सके।
4. यांत्रिक प्रकृतिवाद- इस सिद्धान्त के अनुसार समस्त जगत एक यंत्र के समान कार्य कर रहा है। व्यक्ति एक सक्रिययंत्र से अधिक कुछ नहीं है। उसमें परिवेश के प्रभाव के कारण कुछ सहज क्रिया होती है। यंत्रवाद के प्रभाव से मनोविज्ञान में व्यवहारवादी सम्प्रदाय का जन्म हुआ।

3.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. भौतिकवाद के लिएपुदगल मूल तत्व है, मनस् है मस्तिष्क $ उसकी क्रिया। पुदगल ही मनस का उद्गम है, न कि मनस पुदगल का प्रेरक। चेतना इस मस्तिष्क का उपफल है। भौतिकवादी संसार को एक यंत्र मानते हैं और उनके लिए जीवित प्राणी तो केवल अणु-परमाणु इत्यादि का जोड़ है।
2. प्रकृति से हमारा अभिप्राय समस्त विश्व तथा उसकी क्रिया और इस अर्थ में मनुष्य जो कुछ भी करता है, वह प्राकृतिक है। शिक्षा में इस का अर्थ होगा विश्व की क्रिया का अध्ययन और उसे जीवन में उतार देना।
3. (ब) थॉमस और लैग
4. यांत्रिक प्रकृतिवाद (Mechanical Naturalism) समस्त जगत एक यंत्र के समान कार्य कर रहा है और वह यंत्र जड़तत्व का बना है, जिसमें स्वयं उसको चलाने की शक्ति है। इस प्रकार प्रकृतिवाद का यह रूप जड़वाद है। व्यक्ति एक सक्रिय यंत्र से अधिक कुछ नहीं है। उसमें परिवेश के प्रभाव के कारण कुछ सहज क्रियाएं होती हैं।
5. (D)
6. (C)
7. (D)
8. (A)
9. (B)

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।
2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।

3.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. प्रकृतिवाद के अनुसार शिक्षा के उद्देश्यों और पाठ्यक्रम के स्वरूप की व्याख्या कीजिए।
2. प्रकृतिवादी शिक्षा के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।
3. प्रकृतिवाद का क्या अर्थ है? शिक्षा के सिद्धान्त को इसने किस प्रकार प्रभावित किया है ?
4. प्रकृतिवादी दर्शन की प्रमुख विशेषताएं क्या हैं ? व्याख्या कीजिए।
5. प्रकृतिवादी शैक्षिक उद्देश्यों का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
6. प्रकृतिवाद के विविध रूप कौन-कौन से हैं ?

इकाई 4 : आदर्शवाद Idealism

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 आदर्शवाद और शिक्षा
 4.3.1 आदर्शवाद का अर्थ
 4.3.2 आदर्शवाद की परिभाषाएं
 4.3.3 जीवन दर्शन के रूप में आदर्शवाद
4.4 शिक्षा के उद्देश्य
 4.4.1 आदर्शवाद व शिक्षा के उद्देश्य
 4.4.2 आदर्शवाद और पाठ्यक्रम
 4.4.3 शिक्षण पद्धतियां
4.5 आदर्शवाद व शिक्षक
4.6 आदर्शवाद एवं बालक
4.7 आदर्शवाद का मूल्यांकन
4.8 सारांश
4.9 शब्दावली
4.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
4.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची
4.12 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

मानव सभ्यता के उदभव और विकास के समय से ही आदर्शवादी विचारधारा का किसी न किसी रूप में अस्तित्व रहा है। आधुनिक काल में जब मानव ने चिन्तन एवं मनन आरम्भ किया तब से आदर्शवादी विचारधारा निरन्तर पुष्पित एवं पल्लवित होती है। आदर्शवादी विचारधारा जीवन की निश्चितताओं से जुड़ी हुई है। इसका आशय है-जीवन के लिए निश्चित आदर्शो व मूल्यों का निर्धारण कर मनुष्य को उनके अनुकरण हेतु निर्देशित करना। यह विचारधारा भौतिक वस्तुओं की अपेक्षा विचारों पर अधिक बल देती है। आदर्शवादी दर्शन का प्रतिपादन सुकरात, प्लेटो, डेकॉर्टो, स्पनोसा,

वर्कलकान्ट, फिटशे, रोलिग, हीगल, ग्रीन जेन्टाइल आदि अनेक पाश्चात्य तथा वेदों व उपनिषदों के प्रणेता महर्षियों से लेकर अरविन्द घोष तक अनेक पूर्वी दार्शनिकों ने किया है।

4.2 उद्देश्य

1. आदर्शवाद का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
2. आदर्शवाद का अर्थ, परिभाषाएं व जीवन दर्शन के रूप में आदर्शवाद को समझ सकेंगे।
3. आदर्शवाद व शिक्षा के उद्देश्यों को जान सकेंगे।
4. आदर्शवाद में पाठ्यक्रम व शिक्षण पद्धति का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
5. आदर्शवाद में शिक्षक व बालक के गुणों को समझ सकेंगे।

4.3 आदर्शवाद और शिक्षा (Idealism and Education)

आदर्शवाद दार्शनिक जगत में प्राचीनतम विचारधाराओं में से है। एडम्स के शब्दों में ''आदर्शवाद एक अथवा दूसरे रूप में दर्शन के समस्त इतिहास में व्याप्त है। आदर्शवाद का उदगम स्वयं मानव प्रकृति में है। आध्यात्म शास्त्रीय दृष्टि से आध्यात्मवाद है। अर्थात् इसके अनुसार विश्व में परम सद्वस्तु की प्रकृति आध्यात्मिक है। समस्त विश्व आत्मा या मनस से अवस्थित है। प्रमाण शास्त्र की दृष्टि से आदर्शवाद प्रत्यवाद है। अर्थात् इसके अनुसार विचार ही सत्य है। यह प्रत्यवाद प्राचीन यूनानी दार्शनिक प्लेटो के विचारों में मिलता है। जिसके अनुसार विचारों का जगत वस्तुजगत से कहीं अधिक यथार्थ है। मूल्यात्मक दृष्टि से इस दर्शन को आदर्शवाद कहा जाता है।

आदर्शवाद के दर्शन को संक्षेप में उपस्थित करते हुए जी.टी. डब्ल्यू पैट्रिक ने लिखा है, ''आदर्शवादी यह मानने से इन्कार करते हैं कि जगत् एक विशाल यंत्र है। वे हमारे जगत् की व्याख्या में जड़तत्व, यंत्रवाद और ऊर्जा के संरक्षण को सर्वोच्च्व महत्व से इन्कार करते हैं। वे अनुभव करते हैं कि किसी न किसी प्रकार से कुछ विज्ञान जैसे मनोविज्ञान, तर्कशास्त्र, नीतिशास्त्र, सौन्दर्यशास्त्र आदि का आधारभूत और अंतरंग चीजों से संबंध है कि वे प्रकृति के रहस्यों को समझने के लिए वैसी ही कुंजी है जैसे कि भौतिकशास्त्र और रसायनशास्त्र है। वे यह विश्वास करते हैं कि जगत का एक अर्थ है एक प्रयोजन है। शायद एक लक्ष्य है। अर्थात् जगत के हृदय और मानव की आत्मा में एक प्रकार का आन्तरिक समन्वय है, जिसमें कि मानवबुद्धि प्रकृति के बाहरी आवरण को छेद सकती है। आदर्शवाद की इस व्याख्या में जड़वाद के विरूद्ध आदर्शवाद के लक्षण दिखाई बतलाए गये हैं।

कोई भी दार्शनिक सिद्धान्त दो प्रकार से समझा जा सकता है- एक तो उन सिद्धान्तों को समझकर, जिनका कि वह प्रतिपादन करता है और दूसरे उन बातों को जानकर जिनका कि वह निराकरण करता है। क्योंकि प्रत्येक दर्शन कुछ सिद्धान्तों के समर्थन और कुछ बातों के निराकरण पर आधारित होता

है। इस दृष्टि से आदर्शवाद की स्थिति की व्याख्या करते हुए डब्लू.ई. हाकिग ने लिखा है कि आदर्शवाद के अनुसार प्रकृति आत्मनिर्भर नहीं है। वह स्वतंत्र दिखलाई पड़ती है। किन्तु वास्तव में वह मनस् पर आधारित है। दूसरी ओर मनस् आत्मा या प्रत्यय ही वास्तविक सद्वस्तु है।

4.3.1 आदर्शवाद का अर्थ Meaning of Idealism

आदर्शवाद, जिसे हम अंग्रेजी में (Idealism) कहते हैं, दो शब्दों से मिलकर बना है- Ideal+ism लेकिन कुछ विचारक यह मानते हैं कि इसमें दो शाब्द हैं - Ideal+ism इसमें स् सुविधा के लिए जोड़ दिया गया है। वास्तव में यदि देखा जाये तो इसे Idea या विचार से ही उत्पन्न होना माना जाना चाहिए। चूंकि इसके प्रवर्तक दार्शनिक विचार की चिरन्तन सत्ता में विश्वास करते हैं, इस कारण इसे विचारधारा का प्रत्ययवाद की संज्ञा दी जाती है। परन्तु प्रचलन में हम आदर्शवाद का प्रयोग ही करते हैं। यह दर्शन वस्तु की अपेक्षा विचारों, भावों तथा आदर्शो को महत्व देते हुए यह स्वीकार करता है कि जीवन का लक्ष्य आध्यात्मिक मूल्यों की प्राप्ति तथा आत्मा का विकास है। इसी कारण यह आध्यात्मिक जगत को उत्कृष्ट मानता है और उसे ही सत्य व यथार्थ के रूप में स्वीकार करता है।

4.3.2 आदर्शवाद की परिभाषाएं Definition of Idealism

रास (Ross) . ''आदर्शवादियों के अनेक रूप हैं, किन्तु सबका सार यह है कि मन या आत्मा ही इस जगत का पदार्थ है और मानसिक स्वरूप सत्य है।'' (Idealism Philosophy takes many and varied from, but the postulate underlying all is that mind or sprit is essential word stuff that the true reality is of a Mental character)

ब्रूवेकर (Brubacher)''आदर्शवादियों के अनुसार- इस जगत को समझने के लिए मन केन्द्रीय बिन्दु है। इस जगत को समझने हेतु मन की क्रियाशीलता से बढ़कर उनके लिए अन्य कोई वास्तविकता नहीं है।'' (The Idealism point out that It is mind that is central in understanding the world . To them nothing gives greater sense of reality then the activity of mind lugged in typing to comprehended its words.

हैण्डरसन (Handerson)''आदर्शवाद मनुष्य के आध्यात्मिक पक्ष पर बल देता है, क्योंकि आदर्शवादियों के लिए आध्यात्मिक मूल्य जीवन के तथा मनुष्य के सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू हैं। एक तत्वज्ञानी आदर्शवादी का विश्वास है कि मनुष्य का सीमित मन असीमित मन से पैदा होता है। व्यक्ति और जगत दोनों बुद्धि की अभिव्यक्ति हैं और भौतिक जगत की व्याख्या मन से की जा सकती है।''

डी.एम.दत्ता (D.M.datta)''आदर्शवाद वह सिद्धान्त है जो अन्तिम सत्ता आध्यात्मिकता को मानता है।''

राजन के अनुसार . ''आदर्शवादियों का विश्वास है/ कि ब्रह्माण्ड की अपनी बुद्धि एवं इच्छा है और सब भौतिक वस्तुओं कों उनके पीछे विद्यमान मन द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।''

4.3.3 जीवन दर्शन के रूप में आदर्शवाद (Idealism of Philosophy of life)

आदर्शवाद जीवन की एक प्राचीन विचारधारा है। आज भी इस बात का पर्याप्त सम्मान है। जीवन दर्शन के रूप में इसने विश्व के उच्च कोटि के दार्शनिकों को आकृष्ट किया है। सुकरात, प्लेटो, कान्ट आदि दार्शनिक आदर्शवादी थे। संक्षेप में आदर्शवाद के मूल सिद्धान्त निम्न हैं:-

a. आदर्शवाद के अनुसार पदार्थ अन्तिम सत्य नहीं है। पदार्थ का प्रत्यय वास्तविक है, पदार्थ का भौतिक रूप असत्य है।
b. भौतिक सृष्टि सत्व का आभासमात्र है। इस सृष्टि के पीछे कोई मानसिक सत्य है जो सृष्टि के प्रकाशन का आधार है। सृष्टि वस्तुतः तार्किक एवं मानसिक ही है। इसका बाह्य रूप तो कल्पनाजन्य है।
c. जो अन्तिम सत्य है वही वास्तविक शिव है। अन्य भौतिक पदार्थो में भद्र अथवा शिव को देखना भ्रम है। जो सत्य है और शिव है, वही वास्तव में सुन्दर भी है। संसार के भौतिक पदार्थो में सुन्दरता का आभास मात्र है। अतः उनमें आसक्ति व्यर्थ है। 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' की यह व्याख्या आदर्शवाद की आत्मा है।
d. भौतिक जगत नश्वर है, परिवर्तनशील है। सत्य को स्थायी एवं अपरिवर्तनशील होना चाहिए। अतः सत्य विचारात्मक एवं मानसिक है क्योंकि विचार एवं प्रत्यय में स्थायित्व होता है।
e. इस आधार पर शरीर नश्वर है, अतः असत्य है, आत्मा अनश्वर सत्य है।
f. मानव जीवन का लक्ष्य इसी अनश्वर, अजर, अमर एवं अपरिवर्तनशील आत्मा की प्राप्ति है।
g. आदर्शवाद विकास में विश्वास करता है, किन्तु उसका विकासवाद प्रकृतिवादी विकासवाद से भिन्न है। आदर्शवाद के अनुसार विकास का अन्तिम लक्ष्य आत्मा की प्राप्ति ही है न कि निचले स्तर से ऊंचे स्तर के प्राणी में विकास करना।
h. मन और पदार्थ भिन्न हैं। मन पर नैतिकता एवं आदर्शो का प्रभाव पड़ता है, पदार्थ पर नहीं। मन चेतन है, पदार्थ जड़। जड़ से चेतनता का उदय नहीं हो सकता।
i. इन्द्रियों की अपेक्षा मस्तिष्क अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि विचारात्मक सत्य का ज्ञान इन्द्रियों से संभव नहीं।
j. 10. अंतिम सत्य का ज्ञान ही वास्तविक ज्ञान है, शेष तो अज्ञान अथवा ज्ञानाभास है। यह ज्ञान तर्कजन्य है, चिन्तन एवं मनन तथा अंतदृष्टि का परिणाम है। यह इन्द्रियों का विषय नहीं है।
k. इस प्रकार विज्ञान द्वारा प्राप्त ज्ञान अपूर्ण है। वास्तविक ज्ञान तो व्यक्ति के अपने प्रयासों का परिणाम है।
l. आदर्शवाद धार्मिकता एवं नैतिकता का समर्थन करता है।

m. प्रकृति अपने आप में अपूर्ण है। वह स्वयं किसी सत्य पर आश्रित है। अतः प्रकृति का ज्ञान सम्पूर्ण ज्ञान नहीं। भारतीय सांख्य-दर्शन प्रकृति एवं पुरूष में मौलिक भेद करता है।
n. आदर्शवाद अनेकता में एकता का दर्शन करता है। सत्य मानसिक है। सृष्टि के अनेक रूपों में उस एक चरम सत्य को देखना ही अनेकता में एकता का दर्शन करना है।

इस प्रकार हम देख रहे हैं कि आदर्शवाद सृष्टि के आध्यात्मिक पहलू पर अधिक बल देता है। प्राकृतिक वातावरण की अपेक्षा आध्यात्मिक वातावरण अधिक महत्वपूर्ण है। आदर्शवाद व्यक्ति एवं सृष्टि पर इसी दृष्टिकोण को महत्वपूर्ण बताता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. किसके अनुसार ''आदर्शवाद एक अथवा दूसरे रूप में दर्शन के समस्त इतिहास में व्याप्त है।''
   (अ) एडम्स (ब) जी.टी. डब्ल्यू पैट्रिक (स) डब्ल्यू.ई. हाकिग(द) हटसन
2. आदर्शवाद का दूसरा नाम है-
   (अ) आत्मवाद (ब) विचारधारा का प्रत्यवाद (स) प्रकृतिवाद(द) प्रमाण-शास्त्र
3. शरीर नश्वर है अतः असत्य है, आत्मा अनश्वर अतः असत्य है। यह विचारधारा है-
   (अ) प्रकृतिवाद (ब) प्रयोजनवाद (स) अस्तित्ववाद(द) आदर्शवाद
4. प्रकृति अपने आप में अपूर्ण है। वह स्वयं किसी सत्य पर आश्रित है। अतः प्रकृति का ज्ञान सम्पूर्ण ज्ञान नहीं है। यह विचारधारा है-
   (अ) प्रकृतिवादी (ब) आदर्शवादी (स) प्रयोजनवादी(द) अस्तित्ववादी
5. निम्न में कौन विचारक आदर्शवादी थे ?
   (अ) सुकरात (ब) लॉक (स) गैलीलियो (द) हांकिग

4.4 शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Education)

आदर्शवादी दार्शनिकों के मतानुसार मानव के जीवन का लक्ष्य, मोक्ष की प्राप्ति, आध्यात्मिक विकास और साक्षात्मक करना या उसे जानना है। इस कार्य के लिए मानव को चार चरणों पर सफलता प्राप्त करनी होती है। प्रथम चरण पर उसे अपने प्राकृतिक 'स्व' का विकास करना होता है। इसके अंतर्गत मनुष्य का शारीरिक विकास आता है। दूसरे चरण पर उसे अपने सामाजिक 'स्व' का विकास करना होता है। इसके अंतर्गत सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक, चारित्रिक एवं नागरिकता का विकास आता है। तीसरे चरण पर उसे अपने मानसिक 'स्व' का विकास करना होता है। इसके अंतर्गत मानसिक, बौद्धिक एवं विवेक शक्ति का विकास करना होता है। और चौथे तथा अंतिम

चरण पर उसे अपने आध्यात्मिक 'स्व' का विकास करना होता है। इसके अंतर्गत आध्यात्मिक चेतना का विकास आता है। आदर्शवादी इन्हीं सबको शिक्षा के उद्देश्य निश्चित करते हैं।

4.4.1 आदर्शवाद व शिक्षा के उद्देश्य (Idealism and Objectives of Education)

1. **आत्मनुभूति का विकास (Development of self –realization)** - आदर्शवादी विचारधारा यह मानती है कि प्रकृति से परे यदि कोई चेतन सत्ता के अनुरूप है तो वह है 'मनुष्य'। इस कारण विश्व व्याप्त चेतन सत्ता की अनुभूति मनुष्य तब तक नहीं कर सकता जब तक उसके अंदर व्याप्त चैतन्यता का विकास न हो। इस कारण शिक्षा का सर्वोच्च कार्य यह है कि वह मनुष्य को इतना सक्षम बनाये कि वह अपने वास्तविक स्वरूप को पहचाने व उसकी अनुभूति कर सके। इस आत्मानुभूति के प्रमुख रूप से चार सोपान होते हैं:-

4. आध्यात्मिक 'स्व' (spiritual self)
3. बौद्धिक 'स्व' Intellectual self
2. सामाजिक 'स्व' (Social self)
1. शारीरिक व जैविकीय (Physical Self)

शारीरिक 'स्व' आत्मानुभूति का निम्नतम सोपान है, जिसे प्रकृतिवादी आत्माभिव्यक्ति (Self expression) संज्ञा देते हैं। सामाजिक 'स्व' को अर्थ क्रियावादी महत्व देता है, इसमें व्यक्ति सामाजिक हित की परिकल्पना करता है व सामाजिक कल्याण हेतु व्यक्तिगत स्वार्थो का परित्याग कर देता है। बौद्धिक अनुभूति के स्तर पर व्यक्ति विवेक द्वारा 'स्व' की अनुभूति करता है व सामाजिक नैतिकता से ऊपर उठकर सद्-असद् में भेद कर सकता है और उसका आचरण चिन्तन तथा विश्वास विवेकपूर्ण हो जाता है। आध्यात्मिक 'स्व' स्वानुभूति का सर्वोच्च स्तर है जहां व्यक्ति गुणों को अपने व्यक्तित्व में अंगीकृत सहज प्रक्रिया द्वारा ही कर लेता है व अपने अंदर विश्वात्मा का तादाम्य करने लगता है। इस विश्वात्मा को हम तीन रूपों में अभिव्यक्त करते हैं:- सत्य, शिव व सुन्दर। आदर्शवादी जब आत्मानुभूति के लिए शिक्षा देने की बात करते हैं तो उनका एक ही लक्ष्य होता है, ''अपने आपको पहचानो'' (To Know Thyself)

2. **आध्यात्मिक मूल्यों का विकास (Development of Spiritual Values)** - आदर्शवादी विचारधारा भौतिक जगत की अपेक्षाकृत आध्यात्मिक जगत को महत्वपूर्ण मानती है। अतः शिक्षा के उद्देश्यों में भी बालक के आध्यात्मिक विकास को महत्व देते हैं। यह मनुष्य को एक नैतिक प्राणी के रूप में अवलोकित करते हैं व शिक्षा का उद्देश्य चरित्र निर्माण को मानते हैं। वह 'सत्यं शिवं सुन्दरं' के मूल्यों का विकास करते हुए इस बात की भी चर्चा करते हैं कि शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य बालक में आध्यात्मिक दृष्टि से विकास करना है।
3. **बालक के व्यक्तित्व का उन्नयन (To Exalt Child's Personality) -** बोगोस्लोवस्की के अनुसार-'' हमारा उद्देश्य छात्रों को इस योग्य बनाना है कि वे सम्पन्न तथा सारयुक्त जीवन

बीता सकें , सर्वागीण तथा रंगीन व्यक्तित्व का निर्माण कर सकें, सुखी रहने के उल्लास का उपभोग कर सकें। यदि तकलीफ आये तो गरिमा एवं लाभ के साथ उनका सामना कर सकें तथा इस उच्च जीवन को जीने में दूसरे लोगों की सहायता कर सकें''।

व्यक्तित्व के उन्नयन की चर्चा करते हुए प्लेटो व रॉस भी यह मानते हैं कि शिक्षा के द्वारा मानव व्यक्तित्व को पूर्णता प्राप्त की जानी चाहिए और साथ ही उसके व्यक्तित्व का उन्नयन होना चाहिए।

4. **अनेकता में एकता के दर्शन (To Establish Unity in Diversity) -** आदर्शवाद इस विचारधारा का समर्थन करते हुए इस बात पर बल देता है कि शिक्षा का उद्देश्य बालक को इस दृष्टि से समर्थ बनाना होना चाहिए कि वह संसार में विद्यमान भिन्न-भिन्न बातों को एकता के सूत्र में बांध सके अर्थात् बालक के अंदर यह समझ उत्पन्न करनी चाहिए कि वह इस संसार के संचालन करने वाली एक परम सत्ता है जो ईश्वर के नाम से जानी जाती है और यह ईश्वर की सत्ता जगत के सभी प्राणियों का संचालन करती है। इस ईश्वरीय सत्ता की अनुभूति कराना ही शिक्षा का लक्ष्य होना चाहिए। इसकी अनुभूति होने पर ही व्यक्ति इस संसार के साथ तादात्म्य स्थापित कर सकता है व व्यक्तित्व को पूर्णता प्रदान कर सकता है।
5. **सभ्यता एवं संस्कृति का विकास Development of Culture and Civilization -** आदर्शवाद यह मानता है कि व्यक्ति जिस समाज का सदस्य है, उस समाज की संस्कृति से उसका परिचय होना परम आवश्यक है। साथ ही बालक यदि समाज को जीवित रखना चाहता है तो उसे समाज की धरोहर के रूप में जो सभ्यता व संस्कृति प्राप्त होती है, उसकी भी रक्षा करनी चाहिए। सभ्यता व संस्कृति तो वह आधार प्रस्तुत करती है जिसके द्वारा समाज का विकास संभव होता है। आदर्शवाद व्यक्ति की अपेक्षा समाज को महत्व देता है। इसी कारण वह शिक्षा का उद्देश्य सभ्यता व संस्कृति का विकास करना मानते हैं। रस्क का विचार है कि ''सांस्कृतिक वातावरण मानव का स्वरचित वातावरण है अथवा यह मनुष्य की सृजनात्मक क्रिया का परिणाम है जिसकी रक्षा व विकास करना शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।'' (Culture Environment is an environment of man's creative activity. The aim of idealistic education is the preservation as well as environment of Culture. (Rusk) ।
6. **वस्तु की अपेक्षा विचारों का महत्व (Idea are Important than Objective) -** आदर्शवाद यह मानता है कि इस संसार में पदार्थ नाशवान है व विचार अमर। विचार सत्य, वास्तविक व अपरिवर्तनशील है। विचार ही मनुष्य को ज्ञान प्रदान करने का माध्यम है। यह संसार मनुष्य के विचारों में ही निहित होता है। वह यह मानते हैं कि यह जगत यंत्रवत् नहीं है। चूंकि इस जगत में विद्यमान वस्तुओं का जन्म मानसिक प्रक्रियाओं के फलस्वरूप ही होता है। इनका विचार है कि ''यह विश्व विचार के समान है, यंत्रवत् नही। (Universe is like a thought than a machine)

7. **जड़ प्रकृति की अपेक्षा मनुष्य का महत्व (Man is Important then Nature)** - आदर्शवादी मनुष्य का स्थान ईश्वर से थोड़ा ही नीचा मानते हैं। (Man is little lower than angels) इनका विचार है कि मनुष्य इतना सक्षम होता है कि वह आध्यात्मिक जगत का अनुभव कर सके व ईश्वर से अपना तादात्म्य स्थापित कर सके या उसकी अनुभूति कर सके। इस कारण वह जड़ प्रकृति से बहुत महत्वपूर्ण है। वह यह भी मानते हैं कि मनुष्य बुद्धिपूर्ण व विवेकपूर्ण प्राणी है और बुद्धि ही मनुष्य के विभिन्न प्रकार के क्रिया-कलापों का आधार बनती है, जिससे मानव अपने आपको पशुवत् गुणों से ऊंचा उठा लेता है।
8. **समाज हित का उद्देश्य (Aims of the Welfare of the Society) -** आदर्शवाद जब शिक्षा के उद्देश्यों की चर्चा करता है तो व्यक्तित्व के विकास पर बल देता है और व्यक्तित्व विकास में सामाजिक हित अन्तर्निहित होता है। जब आदर्शवाद आत्मानुभूति में व्यष्टि या स्वार्थपरता निहित न होकर समष्टि या परमार्थ भाव निहित होता है। प्रसिद्ध आदर्शवादी दार्शनिक हॉकिंग (Hocking) जब शिक्षा के उद्देश्यों की चर्चा करता है तो वह शिक्षा के दो उद्देश्य बताता है-
    a. सम्प्रेषण (Communication)
    b. विकास के लिए प्रावधान (Development of the Society)

सम्प्रेषण में वह यह मानता है कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है कि वह समाज की संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक स्थानान्तरित करें, सिर्फ संस्कृति का सम्प्रेषण मात्र करना ही शिक्षा का उद्देश्य नहीं है। चूकि सम्प्रेषण कर देने से संस्कृति अवरूद्ध हो जायेगी। अतः शिक्षा द्वारा प्रत्येक पीढ़ी को इस बात के लिए तैयार किया जाना चाहिए कि वह उस संस्कृति में विकास कर सके। इसके लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा उचित सामाजिक वातावरण तैयार करे जो समाज के विकास में सहयोग दे। हॉर्न (Horn) इन दोनों पक्षों (व्यक्तिगत व सामाजिक) के मध्य संश्लेषण करते हुए कहता है, ''शिक्षा द्वारा बालक की संस्कृति का ज्ञान व उसमें विकास करना आना चाहिए, साथ ही उसमें सामाजिक कुशलता व नागरिकता का विकास भी होना चाहिए।''
आदर्शवादी विचारधारा ने मुख्यतया शिक्षा के उद्देश्यों की चर्चा की है, परन्तु इन्होंने शिक्षा के अन्य पक्षों पर भी थोड़ा प्रकाश डाला है, उनकी उपेक्षा नहीं की है। अब हम इस बात की चर्चा करेंगे कि आदर्शवाद ने पाठ्यक्रम, पाठन विधि, शिक्षक, अनुशासन आदि के संबंध में क्या विचार दिये हैं।

4.4.2 आदर्शवाद और पाठ्यक्रम (Idealism and Curriculum)

अब प्रश्न उठता है कि उपर्युक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए पाठ्यक्रम किस प्रकार का होना चाहिए? छात्र जिस प्रकार के वातावरण में जन्म लेता है उसी प्रकार के वातावरण में रहने का आदी हो जाता है। यह निश्चित है कि हम पाठ्यक्रम की योजना बनाते समय इस वातावरण की उपेक्षा नहीं कर सकते। संभव है कि हम पाठ्यक्रम में ऐसी सूचनाओं एवं क्रियाओं को भी स्थान दें जिन्हें हम पूर्णतः सत्य नहीं मानते। आदर्शवाद भौतिक जगत को अंतिम सत्य नहीं मानता किन्तु सत्य का

आभास तो मानता ही है। सत्य को इसी भौतिक जगत में रहकर एवं भौतिक वातावरण के सहयोग से ही आदर्शवाद चरम सत्य को प्राप्त करने का परामर्श देता है। मनुष्य का आध्यात्मिक वातावरण अधिक महत्वपूर्ण होता है किन्तु प्राकृतिक वातावरण की उपेक्षा नहीं की जा सकती। व्यक्ति शरीर और मन का संयोग है जिसमें मन अधिक महत्वपूर्ण है। किन्तु यदि शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति न की गयी तो मानसिक क्रिया भी दुःसाध्य हो जायेगी। व्यक्ति आत्मानुभूति की ओर तभी आगे बढ़ सकता है जबकि उसने शारीरिक आवश्यकताओं को वश में कर लिया हो। अतः भौतिक जगत की जानकारी भी आवश्यक है। छात्र को प्राकृतिक वातावरण का ज्ञान होना चाहिए। इसके साथ ही आध्यात्मिक वातावरण पर विशेष दृष्टि होनी चाहिए। आध्यात्मिक वातावरण में व्यक्ति के बौद्धिक, सौन्दर्यानुभूति संबंधी, नैतिक एवं धार्मिक सभी क्रिया-कलाप आते हैं। उसका ज्ञान, कला, नीति तथा धर्म इसी आध्यात्मिक वातावरण के अंतर्गत हैं। समाज की प्राकृतिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार की आवश्यकताएं हैं। प्राकृतिक वातावरण से मानव समाज प्रभावित होता रहता है। उसने कला, धर्म एवं नीति आदि का विकास करके आध्यात्मिक वातावरण का सृजन किया है। समाज अपने ज्ञान को स्थायी बनाना चाहता है कि उसके भावी सदस्य प्राकृतिक विषयों एवं आध्यात्मिक विषयों का ज्ञान प्राप्त करें। वह यह नहीं चाहता कि समाज में एक प्रकार के ही व्यक्ति हों। अतः समाज एवं व्यक्ति दोनों की दृष्टि से ही पाठ्यक्रम में प्राकृतिक एवं आध्यात्मिक वातावरण के ज्ञान का समावेश होना चाहिए। व्यक्ति आत्मानुभूति भी तभी कर सकता है जब दोनों प्रकार की आवश्यकता की पूर्ति में सचेष्ट हो।

इस दृष्टि से आदर्शवाद शारीरिक प्रशिक्षण की उपेक्षा नहीं कर सकता। शारीरिक शिक्षा भी उसके पाठ्यक्रम में होगी। प्राकृतिक वातावरण की जानकारी प्राकृतिक विज्ञानों से होती है, अतः भौतिकी, रसायनिकी, भूमिति, भूगोल, खगोल, भूगर्भ विज्ञान, वनस्पतिशास्त्र, जीव-विज्ञान आदि विषयों को आदर्शवाद तिलांजलि नहीं देता। आध्यात्मिक विकास के लिए कला, साहित्य, नीतिशास्त्र, दर्शन, धर्म, मनोविज्ञान, संगीत आदि विषय अधिक महत्वपूर्ण हैं। इन विषयों के अध्ययन से मानव की आत्मा का विकास होता है। यदि इन विषयों का अध्ययन न किया जाये तो व्यक्ति प्राकृतिक वातावरण तक ही सीमित रह जायेगा।

4.4.3 शिक्षण पद्धतियां (Teaching Method)

i. **स्वाध्याय विधि -** आदर्शवादी दार्शनिक प्राचीन साहित्य का आदर करते हैं। वे मानते हैं कि हमारे प्राचीन साहित्य में हमारे पूर्वजों द्वारा खोजा हुआ ज्ञान भरा पड़ा है, हमें उससे लाभ उठाना चाहिए। प्राचीन साहित्य के अध्ययन के लिए वे स्वाध्याय विधि के पक्षधर हैं। पर इस विधि का प्रयोग शिक्षा के उच्च स्तर पर ही किया जा सकता है।

ii. **आगमन एवं निगमन विधि -** प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तू इन विधियों द्वारा शिक्षा दिये जाने पर बल देते हैं। आगमन विधि में सामान्य से विशिष्ट की ओर चला जाता है और निगमन विधि में

विशिष्ट से सामान्य की ओर चला जाता है। पहले वे उदाहरण प्रस्तुत कर सामान्यीकरण करते थे और फिर इस प्रकार प्राप्त सिद्धान्त का प्रयोग करते थे।

iii. **प्रश्नोत्तर एवं संवाद विधि -** प्रश्नोत्तर एवं संवाद पद्धति के जनक प्रख्यात दार्शनिक सुकरात थे। संदर्भ विषयों की व्याख्या करके और तदुपरान्त पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देकर सुकरात तत्कालीन समय में विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान किया करते थे। वे किसी स्थान पर युवकों को एकत्रित कर उनके सामने प्रश्न प्रस्तुत करते थे, युवक उन प्रश्नों पर विचार करते थे, उत्तर देते थे, तब वे उन प्रश्नों के संदर्भ में अपना मत स्पष्ट करते थे। प्लेटो ने प्रश्नोत्तर विधि के आधार पर संवाद विधि का विकास किया। प्लेटो ने अपनी अधिकतर रचनाएं भी संवादों के रूप में लिखी हैं। प्लेटो के संवाद विश्वविख्यात हैं।

इसके अतिरिक्त आधुनिक आदर्शवादी दार्शनिकों ने तर्क विधि, खेल विधि, अनुदेशन विधि एवं आवृत्ति विधि का विकास किया है।

iv. **अनुकरण विधि -** आदर्शवादी दार्शनिकों के अनुसार बालक अनुकरण द्वारा भी सीखता है। अतः शिक्षकों, बालकों के सामने अपने उच्च आचरण प्रस्तुत करने चाहिए। शिक्षकों से यह अपेक्षा करते हैं कि वे बच्चों के सम्मुख लेख, चित्रकला व संगीत आदि के उत्कृष्ट नमूने प्रस्तुत करें, जिनका अनुकरण कर वे इनको सीखें। वे शिक्षकों से यह भी अपेक्षा रखते हैं कि वे छात्रों में अच्छे से अच्छा कर दिखाने की प्रेरणा व स्पर्धा उत्पन्न करें। उस स्थिति में अनुकरण विधि द्वारा शिक्षण अति लाभकारी होता है। बच्चों के मूल्यों के विकास और उनके चरित्र निर्माण के लिए वे बच्चों के सामने धर्मग्रन्थों और साहित्य के धीरोदात्त नायकों के चरित्र प्रस्तुत करने पर बल देते हैं। आदर्शवादियों का विश्वास है कि मनुष्य की प्रकृति अच्छे बुरे में भेद करने की होती है, वे इन धीरोदात्त नायकों के गुणों का अनुकरण कर अच्छे मनुष्य बन सकेंगे।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

6. आदर्शवादियों के अनुसार मानव को मोक्ष प्राप्त करने के लिए कितने चरणों (सोपान) पर सफलता प्राप्त करनी होती है?
   (अ) पांच चरण (ब) चार चरण (स) तीन चरण (द) दो चरण
7. ''अपने आपको पहचानो'' (To Know Thyself) यह विचारधारा है-
   (अ) प्रकृतिवाद (ब) अस्तित्ववाद (स) आदर्शवाद (द) प्रयोजनवाद
8. ''संसार में पदार्थ नाशवान हैं, विचार अमर, विचार सत्य, वास्तविक व अपरिवर्तनशील हैं'' यह विचारधारा है-
   (अ) आदर्शवाद (ब) प्रकृतिवाद (स) प्रयोजनवाद (द) अस्तित्ववाद
9. ''सृष्टि की आत्मा चरम सत्य है, वही शिव है, वही सुन्दर है'', यह कथन है-
   (अ) प्रकृतिवादी (ब) प्रयोजनवादी (स) अस्तित्ववादी (द) आदर्शवादी

10. तर्क विधि, खेल विधि, अनुदेशन विधि एवं आवृत्ति विधि का विकास किया है-
(अ) प्रकृतिवादी (ब) प्रयोजनवादी (स) आदर्शवादी (द) अस्तित्ववादी

4.5 आदर्शवाद व शिक्षक (Idealism and Teacher)

जेण्टील (Gentile) का कथन है कि ''अध्यापक सही चरित्र का आध्यात्मिक प्रतीक है'' (Teacher is Spiritual Symbol of right Conduct) । आदर्शवादी विचारक शिक्षक को उस अनुपम स्थिति में रखते हैं जिसमें शिक्षण प्रक्रिया का कोई अन्य अंश नहीं रखा जा सकता। आदर्शवादी दार्शनिक शिक्षक में जिन गुणों की परिकल्पना करते हैं, उनकी चर्चा बटलर ने इस प्रकार की है-

i. शिक्षक बालक के लिए सत्ता का साकार रूप होता है।
ii. अध्यापक को छात्रों की व्यक्तिगत, सामाजिक व आर्थिक विशेषताओं का ज्ञाता होना चाहिए। 3. शिक्षक को अध्यापन कला का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए व उसमें व्यावसायिक कुशलता होनी चाहिए।
iii. अध्यापक का व्यक्तित्व प्रभावशाली होना चाहिए जिससे वह छात्रों को अपनी ओर आकर्षित कर सके।
iv. अध्यापक एक दार्शनिक, मित्र व पथ-प्रदर्शक के रूप में होना चाहिए।
v. अध्यापक का व्यक्तित्व अच्छे गुणों से परिपूर्ण होना चाहिए जिससे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में वह छात्रों को सद्गुणों के ढांचे में ढाल सके।
vi. छात्रों के व्यक्तित्व को पूर्णता प्रदान करना अध्यापक के जीवन का परम लक्ष्य होना चाहिए।
vii. शिक्षक को अपने विषय का पूर्ण एवं सही ज्ञान होना चाहिए।
viii. अध्यापक में स्व-अध्ययन का गुण होना चाहिए जिससे वह निरन्तर नवीन ज्ञान की ओर उन्मुख हो सके।
ix. अध्यापक को प्रजातंत्र की सुरक्षा रखने का प्रयास करना चाहिए।

प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री फॉबेल ने कहा है कि बालक एक पौधे के समान है और अध्यापक एक माली के सदृश, जो पौधे को आवश्यकतानुसार सींचकर, खाद आदि डालकर तथा काट-छांटकर सुव्यवस्थित रूप में पनपाता है, जिससे वह एक सुन्दर और मनमोहक वृक्ष बन सके। शिक्षक के महत्व के संबंध में रॉस ने भी कहा है-''प्रकृतिवादी तो जंगली गुलाब से संतुष्ट हो सकता है, किन्तु आदर्शवादी तो एक सुन्दर व सुविकसित गुलाब की परिकल्पना करता है।'' यह दार्शनिक विचारधारा यह मानकर चलती है कि बालक के विकास हेतु उपर्युक्त सामाजिक वातावरण एवं शिक्षक का सही मार्गदर्शन आवश्यक है।

4.6 आदर्शवाद एवं बालक (Idealism and Child)

आदर्शवाद में बालक को शिक्षण प्रक्रिया का मुख्य बिन्दु नहीं माना जाता। उनके अनुसार शिक्षण प्रक्रिया में भावों, विचारों व आदर्शो का महत्वपूर्ण स्थान है और इनको प्रदान करने के माध्यम के रूप में वह अध्यापक को महत्वपूर्ण स्थान देते हैं व बालक को गौण। वह छात्रों को एक आध्यात्मिक प्राणी मानते हैं व यह स्वीकार करते हैं कि आध्यात्मिक सत्ता भी होती है। वे मन को शरीर से अधिक महत्व देते हैं। हॉर्न ने इस संबंध में कहा है, ''विद्यार्थी एक परिमित व्यक्ति है किन्तु उचित शिक्षा मिलने पर वह परम पुरूष के रूप में विकसित होता है। उसकी मूल उत्पत्ति दैविक है, स्वतंत्रता उसका स्वभाव है और अमरत्व की प्राप्ति उसका लक्ष्य है।''

4.7 आदर्शवाद का मूल्यांकन (Evaluation of Idealism)

गुण (Merits)

i. बालक के व्यक्तित्व के पूर्ण विकास पर बल देना।
ii. बालक में आत्मानुभूति की क्षमता उत्पन्न करना।
iii. सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् को शिक्षा का आधार मानना।
iv. शिक्षा के उद्देश्यों पर विस्तृत रूप में विचार करना।
v. शिक्षण प्रक्रिया में अध्यापक को महत्वपूर्ण स्थान देना।
vi. आत्मानुशासन व आत्म-नियंत्रण पर बल देना।
vii. शिक्षण विधियों को उद्देश्यों के अनुरूप बनाने की बात करना।

अवगुण (Demerits)

i. बालक के मनोवैज्ञानिक प्रारूप या विशेषताओं की उपेक्षा करना।
ii. अध्यापक को आवश्यकता से अधिक महत्व देना।
iii. कठोर सामाजिक व्यवस्था की परिकल्पना करना।
iv. इनके द्वारा निर्धारित लक्ष्य वास्तविक न होकर काल्पनिक हैं। इसी कारण इनकी प्राप्ति असंभव है।
v. लक्ष्य वर्तमान पर आधारित न होकर भविष्य पर आधारित हैं।
vi. मानववाद पर आवश्यकता से अधिक महत्व।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

11. ''अध्यापक सही चरित्र का आध्यात्मिक प्रतीक है'' यह परिभाषा है-
    (अ) फ्रॉवेल (ब) जेण्टील (स) रॉस (द) फिक्टे
12. ''प्रकृतिवादी तो जंगली गुंलाब से संतुष्ट हो सकता है किन्तु आदर्शवादी तो एक सुन्दर व सुविकसित गुलाब की परिकल्पना करता है।'' यह परिभाषा है-
    (अ) फ्रॉवेल (ब) जेण्टील (स) रॉस (द) फिक्टे
13. ''अध्यापक में स्व-अध्ययन का गुण होना चाहिए, जिससे वह निरन्तर नवीन ज्ञान की ओर उन्मुख हो सके।'' यह विचारधारा है-
    (अ) प्रकृतिवादियों (ब) आदर्शवादियों (स) अस्तित्ववादिया (द) प्रयोजनवादियों
14. ''सत्यम् शिवम् सुन्दरम्'' को शिक्षा का आधार मानते है-
    (अ) प्रकृतिवादी (ब) आदर्शवादी (स) अस्तित्ववादी (द) प्रयोजनवादी
15. आत्मानुशासन व आत्म-नियंत्रण पर बल देता है-
    (अ) आदर्शवादी (ब) प्रकृतिवादी (स) प्रयोजनवादी (द) अस्तित्ववादी

4.8 सारांश

आदर्शवादी शिक्षा को पवित्र कार्य मानता है। शिक्षार्थी का व्यक्तित्व उसके लिए महान है। अतः वह छात्र के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करना चाहता है। यह विकास सही दिशा में होना चाहिए। विकास की दिशा ऐसी हो कि बालक आत्मानुभूति की ओर बढ़ सके और ''सत्यम् शिवम् सुन्दरम्'' का दर्शन कर सके। विश्व में इससे बढ़कर न तो कोई लक्ष्य हो सकता है, न ही इससे बढ़कर कोई उपलब्धि हो सकती है। आदर्शवादी परम-सत्य में विश्वास करता है। वह परम-सत्य लक्ष्यों का लक्ष्य है, विभिन्न सत्यों का आधार, सुन्दरों में सौन्दर्य का मूल तथा साक्षात् शिवम् है। जीवन की पूर्णता उसी दिशा में चलने में है। अतः हम यह कह सकते हैं कि आदर्शवाद ने शिक्षा की दिशा निश्चित करने में शिक्षाशास्त्रियों का मार्ग-दर्शन किया है। शिक्षा के उद्देश्य निश्चित करते समय हम कभी-कभी दूर दृष्टि से काम नहीं लेते। आदर्शवाद हमें इस खतरे से सावधान करता है। आदर्शवादने आत्मानुभूति जैसा शिक्षा का उद्देश्य देकर, अनेकता में एकता की अंतदृष्टि प्रदान करके एवं ''सत्यम् शिवम् सुन्दरम्'' की प्राप्ति की दूर-दृष्टि देकर शिक्षा का बड़ा उपकार किया है।

आदर्शवाद ने शिक्षक के स्थान को बड़ा महत्व दिया है। इसका परिणाम यह होता है कि शिक्षक अत्यधिक सक्रिय रहता है और छात्र निष्क्रिय हो जाते हैं। छात्र इससे निरूत्साहित होता है और स्वयं सीखने के लिए इच्छा नहीं करता।

उपर्युक्त दोषों में कुछ सत्यता अवश्य है, किन्तु कभी-कभी किसी दार्शनिक विचारधारा को ठीक से न समझने के कारण ही उसकी आलोचना की जाती है। आदर्शवाद का परम-सत्य सबकी समझ में नहीं आ पाता। अतः वे उसे काल्पनिक और अयथार्थ समझते हैं। जहां तक शिक्षण-विधियों का प्रश्न है, आदर्शवाद ने अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए जिस विधि को उचित समझा, उसे अपनाया।

अन्त में हम यह कह सकते हैं कि जहा तक शिक्षा के उद्देश्यों का संबंध है, आदर्शवाद के सामने कोई दूसरी विचारधारा टिक नहीं सकती। शिक्षा के अन्य अंगों के क्षेत्र में आदर्शवाद ने अधिक ध्यान नहीं दिया।

4.9शब्दावली

1. **जगत -** जगत से हमारा अभिप्राय संसार अर्थात् पूरे विश्व में व्याप्त भूमण्डल।
2. **आध्यात्मिक** - आध्यात्मिक से हमारा अभिप्राय धार्मिक क्रिया-कलापों, पूजा-पाठ व ईश्वर में ध्यान, सत्य का मार्ग आदि।
3. **नश्वर** - इस संसार में प्रत्येक वस्तु नश्वर है। अर्थात् जिसका जन्म हुआ है या निर्माण हुआ वह एक दिन समाप्त अवश्य ही होती है।
4. **संस्कृति** - संस्कृति से हमारा अभिप्राय हमारे रीति-रिवाज, परम्पपराएं, आचरण व धार्मिक क्रिया-कलाप, हमारी संस्कृति हैं।

4.10स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. एडम्स
2. (ब) विचारधारा या प्रत्यवाद
3. (द) आदर्शवाद
4. (ब) आदर्शवाद
5. सुकरात
6. (ब) चार चरण
7. (स) आदर्शवाद
8. आदर्शवाद
9. (द) आदर्शवाद
10. (स) आदर्शवाद
11. (ब) जेण्टील
12. (स) रॉस
13. (ब) आदर्शवादियों

14. (ब) आदर्शवादी
15. आदर्शवादी

4.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।
2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।

4.12निबंधात्मक प्रश्न

1. आदर्शवाद से आप क्या समझते हैं? जीवन दर्शन के रूप में आदर्शवाद की विस्तृत चर्चा कीजिए।
2. आदर्शवाद में शिक्षा के प्रमुख उद्देश्यों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
3. आदर्शवादी पाठ्यक्रम और शिक्षण पद्धतियों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
4. आदर्शवादी शिक्षक एवं बालकों के प्रमुख गुणों का विस्तृत वर्णन कीजिए।

इकाई- 5: प्रयोजनवाद Pragmatism

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 प्रयोजनवाद और शिक्षा
5.3.1 प्रयोजनवाद की तत्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा, आचार मीमांसा
5.3.2 प्रयोजनवाद का अर्थ
5.3.3 प्रयोजनवाद की परिभाषाएं
5.4 प्रयोजनवाद की प्रमुख विशेषताएं
5.5 प्रयोजनवाद के आधारभूत सिद्धान्त
5.5.1 प्रयोजनवादी पाठ्यक्रम
5.5.2 प्रयोजनवादी शिक्षण पद्धति
5.6 आदर्शवाद व प्रयोजनवाद में अंतर
5.7 प्रकृतिवाद व प्रयोजनवाद में अंतर
5.8 प्रयोजनवाद का आधुनिक शिक्षा पर प्रभाव
5.9 सारांश
5.10 शब्दावली
5.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
5.12 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
5.13 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रयोगवाद एक आधुनिक अमेरिकी जीवन दर्शन है। यह अमेरिकी राष्ट्र के जीवन तथा विचार का प्रतिनिधित्व करता है। वस्तुतः अमेरिका नव निवासियों का देश है। विशेषकर पश्चिमी यूरोप के प्रगतिशील निवासी ही वहां जाकर 16वीं-17वीं शताब्दी में बस गए। वहाँ उन्हें सर्वथा नई स्थितियां, समस्याओं एवं वातावरण का सामना करने के लिए कोई पूर्व निर्मित समाधान नहीं था। इसलिए वे अपने जीवन का मार्ग खुद प्रस्त किए । जीवनगत समस्याओं का समाधान भी उन्हें नये तरीके से स्वयं ढूंढना पड़ा। यहां तक कि पूर्व मान्यताएं स्वतः ही बिखरने लगीं तथा नवीन उपयोगी विचारधारा का जन्म हुआ। यही विचारधारा प्रयोजनवाद के नाम से अभिहित हुई। उसके अनुसार

वही दर्शन सही है जिसका नाता मानव जीवन तथा मानव क्रियाकलापों से ही प्रयोजनवाद निश्चित एवं शाश्वत् मूल्यों के सिद्धान्त को स्वीकार नहीं करता है। वह तो जीवन और समाज के लिए उपयोगी एवं व्यावहारिक सिद्धान्तों को स्वीकार करता है। जिनके सहारे मानव अपनी जीवनगत समस्याओं का समाधान ढूंढने में सफल होता है। यह आसमान को कम, धरती को ज्यादा महत्व देता है।

प्रयोजनवाद का उत्पत्ति स्थल अमेरिका है, जहां एक दर्शन के रूप में इसका विकास हुआ। चार्ल्स पियर्स तथा विलियम जेम्स इस विचारधारा के प्रतिपादक माने जाते हैं। जेम्स ने मानव अनुभव के महत्व को स्पष्ट किया और मानव को समस्त वस्तुओं और क्रियाओं की सत्यता की कसौटी बताया। जेम्स के बाद अमेरिका के ही एक विचारक जॉन डीवी ने इस विचारधारा को आगे बढ़ाया। डीवी ने व्यक्ति की इच्छा को सामाजिक परिप्रेक्ष्य में स्वीकार किया। उनके अनुसार मानव प्रगति का आधार सामाजिक बुद्धि ही होती है। डीवी के बाद अमेरिका में उनके शिष्य किलपैट्रिक ने इस विचारधारा को आगे बढ़ाया और इंग्लैण्ड में शिलर महोदय ने। इन सबमें डीवी का योगदान सबसे अधिक है।प्रयोजनवादी किसी निश्चित सत्य में विश्वास नहीं करते। उनके विचार से दर्शन भी सदा निर्माण की स्थिति में रहता है। चूंकि मानव जीवन परिवर्तनशील है, अतः इस प्रकार की शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्य चर्चा आदि का निर्माण न करके उनके निर्माण के सिद्धान्त प्रस्तुत किए गये हैं। इस विचारधारा के प्रमुख दार्शनिक एवं शिक्षाविद् जॉन डीवी माने जाते हैं।

5.2 उद्देश्य

1. प्रयोजनवाद व शिक्षा के संबंध में जान सकेंगे।
2. प्रयोजनवाद दर्शन के अर्थ और परिभाषाएं का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
3. प्रयोजनवाद के दार्शनिक रूपों का अध्ययन कर सकेंगे।
4. प्रयोजनवाद के प्रमुख सिद्धान्तों के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
5. प्रयोजनवाद की प्रमुख विशेषताओं के बारे में जान सकेंगे।
6. अस्तित्ववादी शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
7. अस्तित्ववादी शिक्षक, विद्यार्थी व शिक्षण विधि के बारे में जान सकेंगे।

5.3 प्रयोजनवाद (Pragmatism)

प्रयोजनवाद एक व्यावहारिक व अद्वितीय दर्शन है, जिसमें प्रकृतिवाद व आदर्शवाद की प्रमुख विशेषताओं को समन्वित करने का प्रयास किया है। जॉन ड्यूवी ने अर्थ क्रियावाद की उपयोगिता को शिक्षा के क्षेत्र में भी बहुत अधिक माना है। कुछ शिक्षा दार्शनिक तो यहां तक कहते हैं कि आधुनिक शिक्षा का युग प्रयोजनवाद का युग है। प्रसिद्ध दार्शनिक ड्यूवी ने शिक्षा के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा है, ''शिक्षा अनुभव का पुनर्निर्माण अथवा पुनर्रचना करने वाली प्रक्रिया है जिससे कि विवृद्ध

वैयक्तिक कुशलता के माध्यम द्वारा उसे अधिक सामाजिक मूल्य प्राप्त होता है।'' वह यह मानता है कि मनुष्य की शिक्षा की प्रक्रिया अनवरत चलती रहती है। चूंकि अनुभव द्वारा वह कुछ न कुछ ग्रहण करता रहता है। नित्य प्रति मानवीय परिस्थितियां बदलती हैं और मनुष्य उनके अनुकूल अपनी क्रियाओं को भी बदल लेता है। नये परिवेश में व्यक्ति जब अपनी समस्याओं का हल ढूंढता है तो उसके अनुभव विकसित होने लगते हैं। यह समृद्ध अनुभव ही शिक्षा है। जॉन ड्यूवी शिक्षा को एक व्यापक प्रक्रिया के रूप में देखते हैं जो विद्यालय के साथ ही समाज में भी चलती रहती है। इसी कारण अर्थ क्रियावादी यह मानता है कि शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली एक प्रक्रिया है अथवा शिक्षा जीवन है और जीवन शिक्षा।

5.3.1 प्रयोजनवाद की तत्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा, आचार मीमांसा

Metaphysics, Epistemology and Ethics of Pragmatism

प्रयोजनवाद की तत्व मीमांसा Metaphysics of Pragmatism

प्रयोजनवादी इस ब्रह्माण्ड की रचना के संबंध में विचार करने के स्थान पर मनुष्य जीवन के वास्तविक पक्ष पर अपना ध्यान केन्द्रित रखते हैं। वे इस ब्रह्माण्ड के बारे में केवल इतना ही कहते हैं कि यह अनेक वस्तुओं और अनेक क्रियाओं का परिणाम है, वस्तु और क्रियाओं की व्याख्या के झमेले में ये नहीं पड़ते। इस इन्द्रियग्राह संसार के अतिरिक्त ये किसी अन्य संसार के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करते। ये आत्मा-परमात्मा के अस्तित्व को भी नहीं स्वीकारते। इनके अनुसार मन का ही दूसर नाम आत्मा है और मन एक पदार्थ जन्म क्रियाशील तत्व है।

प्रयोजनवाद की ज्ञान मीमांसा Epistemology of Pragmatism

प्रयोजनवादियों के अनुसार अनुभवों की पुनर्रचना ही ज्ञान है। ये ज्ञान को साध्य नहीं अपितु मनुष्य जीवन को सुखमय बनाने का साधन मानते हैं। इसकी प्राप्ति सामाजिक क्रियाओं में भाग लेने से स्वयं होती है। कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों को ये ज्ञान का आधार मानते हैं और मस्तिष्क तथा बुद्धि को ज्ञान का नियंत्रक।

प्रयोजनवाद की आचार मीमांसा Ethics of Pragmatism

प्रयोजनवादी निश्चित मूल्यों और आदर्शो में विश्वास नहीं करते इसलिए ये मनुष्य के लिए कोई निश्चित आचार संहिता नहीं बनाते। इनका स्पष्टीकरण है कि मनुष्य जीवन में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है इसलिए उसके आचरण को निश्चित नहीं किया जा सकता। उसमें तो वह शक्ति होनी चाहिए कि वह बदले हुए पर्यावरण में समायोजन कर सके। वे बच्चों में केवल सामाजिक कुशलता का विकास करना चाहते हैं। सामाजिक कुशलता से व्यावहारिकतावादियों का तात्पर्य समाज में समायोजन करने, अपनी जीविका कमाने, मानव उपयोग की वस्तु एवं क्रियाओं की खोज करने और नई-नई समस्याओं का समाधान करने की शक्ति से होता ह

5.3.2 प्रयोजनवाद का अर्थ Meaning of Pragmatism

प्रयोजनवाद आंग्ल भाषा के 'प्रैग्मैटिज्म' (Pragmatism) शब्द का हिन्दी रूपान्तर है, जिसकी व्युत्पत्ति ग्रीक भाषा के 'प्रैग्मा' (Prama)शब्द से हुई है, जिसका तात्पर्य है 'क्रिया' अर्थात् 'व्यावहारिक' या 'व्यवहार्य'। दूसरे शब्दों में प्रयोजनवाद वह विचारधारा है जो उन्हीं बातों को सत्य मानती है, जो व्यावहारिक जीवन में काम आ सकें। प्रयोजनवादी मूर्त वस्तुओं, शाश्वत सिद्धान्तों और पूर्णता तथा उत्पत्ति में विश्वास नहीं करते। इनके अनुसार सदैव देशकाल तथा परिस्थिति के अनुसार सत्य परिवर्तित होता रहता है, क्योंकि एक वस्तु जो एक देश, काल तथा परिस्थिति में उपयोगी होती है वह दूसरे में नहीं। प्रयोगवाद को 'प्रयोजनवाद' भी कहा जाता है, क्योंकि यह 'प्रयोग' (Experiment0 को ही सत्य की एकमात्र कसौटी मानता है। इसे हम 'फलवाद' भी कह सकते हैं, क्योंकि इसमें किसी कार्य का मॅलय उसके परिणाम या फल के आधार पर आंका जाता है।

इस प्रकार, ''प्रयोजनवाद जिसे हम प्रयोगवाद या फलवाद भी कह सकते हैं, वह विचारधारा है जो उन्हीं क्रियाओं, वस्तुओं, सिद्धान्तों तथा नियमों को सत्य मानती है, जो किसी देश, काल और परिस्थिति में व्यावहारिक तथा उपयोगी हो।''

5.3.3 प्रयोजनवाद की परिभाषाएं Definition of Pragmatism

1. रस्क के अनुसार (According to Rusk) - ''प्रयोजनवाद एक प्रकार से नवीन आदर्शवाद के विकास की अवस्था है, एक ऐसा आदर्शवाद जो वास्तविकता के प्रति पूर्ण न्याय करेगा, व्यावहारिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों का समन्वय करेगा और इसके परिणामस्वरूप उस संस्कृति का निर्माण होगा जिसमें निपुणता का प्रमुख स्थान होगा, न कि उसकी उपेक्षा होगी।''
2. जेम्स के अनुसार (According to Jams) - ''प्रयोजनवाद मस्तिष्क का स्वभाव तथा मनोवृत्ति है। यह विचारों की प्रकृति एवं सत्य का भी सिद्धान्त है और अपने अंतिम रूप में यह वास्तविकता का सिद्धान्त है।'' (Pragmatism is a temper of mind an attitude. It Is also a thing of nature of ideas and truth and finally it is a thing about reality)
3. रॉस के अनुसार (According to Ross)- ''प्रयोजनवाद एक मानवीय दर्शन है जो यह स्वीकार करता है कि मनुष्य क्रिया की अवधि में अपने मूल्यों का निर्माण करता है और यह स्वीकार करता है कि वास्तविकता सदैव निर्माण की अवस्था में रहती है।'' (Pragmatism is essently a humanistic philosophy, maintain that man creates his own values in course of activity, that reality is still in making and awaits its past of completion from that future)

4. जैम्स प्रैट के अनुसार (According to Jams Prett) - ''प्रयोजनवाद हमें अर्थ का सिद्धान्त, सत्य का सिद्धान्त, ज्ञान का सिद्धान्त और वास्तविकता का सिद्धान्त देता है।'' (Pragmatism offers us a theory of meaning, a theory of truth , a theory of knowledge and a theory of Knowledge.)
5. रोजन के अनुसार (According to Rosen) - ''प्रयोजनवाद के अनुसार सत्य को उसके व्यावहारिक परिणामों द्वारा जाना जा सकता है। इस कारण सत्य निरपेक्ष न होकर व्यक्तिगत या सामाजिक समस्या है।'' (Pragmatism states that truth can be known only through its practical consequence and is thus an Individual or social matter rather than an absolute)

वास्तव में देखा जाए तो अर्थ क्रियावाद व्यावहारिकता या क्रिया पर बल देता है।

5.4 प्रयोजनवाद की प्रमुख विशेषताएं (Chief Assertion of Pragmatism)

i. **परम्पराओं व मान्यताओं का विरोधी (Pragmatism, a revolt against traditionalism)-** अर्थ क्रियावाद निर्धारित आस्थाओं का विरोधी है। प्रकृतिवाद द्वारा प्रकृति के अस्थित्व में विश्वास रखना अथवा आदर्शवाद द्वारा एक चिरस्थायी सत्य को यह स्वीकार नहीं करता। यह विचारों की अपेक्षा क्रिया को अधिक महत्व देता है व यह मानता है कि वास्तविकता एक निर्माणशील प्रक्रिया है और उसके संबंध में हम किसी भी सामान्य सिद्धान्त का प्रतिपादन नहीं कर सकते हैं। वह यह मानते हैं कि सत्य तो व्यावहारिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है और ज्ञान भी क्रियाओं का ही परिणाम है। क्रियाओं को सुचारू रूप से चलाने हेतु ज्ञान की आवश्यकता होती है।

ii. **शाश्वत मूल्यों का बहिष्कार (Rejects Ultimate Value)-** प्रयोजनवाद किसी निश्चित अथवा शाश्वत सत्य अथवा सिद्धान्त की सत्ता को स्वीकार नहीं करता। वह यह मानते हैं कि मूल्य तो मानव की व्यक्तिगत व सामाजिक घटनाओं के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं जो सदैव परिवर्तनशील होते हैं। वह यह मानते हैं कि विश्व गतिशील है। अतः मूल्य भी गतिशील होते हैं। वास्तव में मूल्यों का निर्माण तो व्यक्ति स्वयं अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप करता है। आज जो 'सत्य' है, वह कल भी 'सत्य' होगा। सोचना गलत है चूंकि सत्य तो देश, काल व परिस्थितियों के अनुकूल बदलता रहता है।

iii. **विचार क्रिया के अधीन होते हैं (Though is Subordinate to Action) -** प्रयोजनवाद क्रिया को सर्वोच्च स्थान देता है व यह मानता है कि कोई भी विचार तभी सार्थक हो सकता है जब हम उसे क्रिया रूप में हस्तांतरित करें। वास्तव में देखा जाए तो क्रिया ही विचारों को अर्थ

प्रदान करती है और उनका महत्व निर्धारित करती है। हॉ, इस बात को भी स्वीकार करते हैं कि विचार आंतरिक वस्तु है व क्रिया बाह्य।

iv. **किसी सार्वभौमिक सत्ता में आस्था न होना (No faith in Supreme Power)-** प्रयोजनवाद ईश्वरीय सत्ता को स्वीकार नहीं करता। वह यह मानता है कि ईश्वरा मिथ्या है। आत्मा के अस्तित्व को वह मानता अवश्य है परन्तु उसे एक क्रियाशील तत्व के रूप में स्वीकार करता है। उनके अनुसार सर्वाच्च सत्ता समाज की होती है।

v. **उपयोगिता के सिद्धान्त पर बल (Emphasis on Principal of utility)-** प्रयोजनवाद यह मानता है कि किसी भी सिद्धान्त अथवा विश्वास की कसौटी उपयोगिता है। यदि कोई सिद्धान्त हमारे उद्देश्यो का पूरक है व हमारे लिए लाभप्रद है तो ठीक है अन्यथा नहीं। कोई भी सिद्धान्त स्वयं में उपयोगी या अनुपयोगी नहीं होता। अगर उसका फल उपयोगी है तो ठीक है और अगर फल अनुपयोगी है तो सिद्धान्त भी ठीक नहीं है।

vi. **व्यक्ति के सामाजिक जीवन पर बल (Emphasis on Individual's School life)-** प्रयोजनवाद व्यक्ति को एक सामाजिक इकाई के रूप में स्वीकार करता है व बालक के व्यक्तित्व के सामाजिक पक्ष के विकास की अधिकांशतया चर्चा करता है। व्यक्ति समाज में रहकर अपने जीवन को सफल बना सके, इसे वह महत्व देता है व इसके लिए यह भी अनिवार्य मानता है कि व्यक्ति में सामाजिक कुशलता का विकास किया जाए।

vii. **मनुष्य एक मनोशरीरिक प्राणी (Man is a Psychological Individual)-** प्रयोजनवाद मनुष्य को एक मनोशारीरिक प्राणी मानता है। इनके अनुसार मनुष्य को विचार व क्रिया करने की शक्तियां प्राप्त हैं, जिनके माध्यम से मनुश्य समस्या को समझने व उनका हल ढूंढने का प्रयास करता है और अन्ततोगत्वा वह स्वयं को अपने वातावरण के अनुकूल ढालने का प्रयास करता है।

viii. **बहुतत्ववादी विचारधारा (Pluralist Ideology)-** प्रयोजनवाद यह मानता है कि इस संसार की रचना अनेक तत्वों से मिलकर हुई है और इन तत्वों के मध्य क्रिया चलती रहती है, जिसके परिणामस्वरूप रचनात्मक कार्य होता है। सबसे बड़ी बात यह है कि यह क्रिया सदैव चलती रहती है व संसार की रचना करती रहती है। इसी कारण प्रयोजनवाद के अनुसार यह संसार सदैव निर्माण की अवस्था में रहता है। मनुष्य इस संसार का सृजनशील प्राणी है। अतः मनुष्य भी सदैव क्रियाशील रहता है।

ix. **दर्शन, शिक्षा का सिद्धान्त (Philosophy as the Theory of Education) -** प्रयोजनवाद यह मानता है कि शैक्षिक अभ्यासों के फलस्वरूप ही दर्शन का जन्म होता है। जॉन ड्यूवी ने इस संबंध में कहा कि सामान्य रूप से दर्शन शिक्षा का सिद्धान्त है। (Philosophy is the theory of education in its most general phase) वास्तव में दर्शन द्वारा निर्धारित सिद्धान्त ही सत्य व व्यवहार्य होते हैं।

x. प्रजातंत्र **में आस्था (Faith in Democracy)-** अर्थ क्रियावाद प्रजातंत्र शासन व्यवस्था पर बल देकर उसके प्रति अपनी आस्था अभिव्यक्त करता है। वह प्रजातंत्र को जीवन का एक तरीका व अनुभवों का आदान-प्रदान करने की एक व्यवस्था के रूप में देखता है। वह जीवन, शिक्षा व प्रजातंत्र को एक-दूसरे से संबंधित प्रक्रिया मानते हैं।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. प्रयोजनवाद की उत्पत्ति स्थल किस देश को माना जाता है?
   A. भारत B. अमेरिका C. इंग्लैण्ड D. रूस
2. जॉन ड्यूवी किस देश के रहने वाले थे?
   A. भारत B. चीन C. अमेरिका D. जर्मनी
3. प्रयोजनवाद को किस-किस नाम से जाना जाता है?
4. प्रयोजनवाद क्रिया को सर्वोच्च स्थान देता है (सत्य/ असत्य)
5. प्रयोजनवाद क्रिया की अपेक्षा विचारों को अधिक महत्व देता है- (सत्य/ असत्य)
6. ''शिक्षा बालक के लिए है, बालक शिक्षा के लिए नहीं'' यह विचारधारा है-
   A. प्रयोजनवाद B. प्रकृतिवाद C. आदर्शवाद D. अस्तित्ववाद

5.5 प्रयोजनवाद के आधारभूत सिद्धान्त (Fundamental Principles of Pragmatism)

i. सत्य का हमेशा परिवर्तनशील होना Truth is always Changeable)- प्रयोजनवाद के अतिरिक्त जितनी भी दार्शनिक विचारधाराएं हुई हैं, वे सत्य को अपरिवर्तनशील मानती हैं, परन्तु प्रयोजनवाद के अनुसार सत्य सदैव देश, काल एवं परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। जो वस्तु एक स्थान पर सत्य है आवश्यक नहीं है कि वह दूसरे स्थान पर भी सत्य होगी। इसी प्रकार जो वस्तु आज सत्य है आवश्यक नहीं कि कल भी सत्य होगी। इस प्रकार प्रयोजनवाद के अनुसार 'सत्य सदा परिवर्तनशील है।' प्रयोजनवाद के जन्मदाता विलियम जेम्स ने ठीक ही कहा, ''सत्यता किसी विचार का स्थायी गुण धर्म नहीं है। वह तो अकस्मात् विचार में निर्वासित होता है। " The Truth an idea is not a stagnate property inherent in it. Truth happens an Idea)

ii. समस्याएं सत्य की प्रेरक हैं (Problem are the motives of Truth) - प्रयोजनवादियों का विचार है कि मानव जीवन में एक न एक नवीन समस्याएं आती रहती हैं। इन समस्याओं का समाधान करने के लिए व्यक्ति अपने जीवन में बहुत से प्रयोग करता है। प्रयोग की

सफलता सत्य का रूप ग्रहण कर लेती है। इस प्रकार हमारे जीवन की समस्याऐं ही सत्य की खोज के लिए हमें प्रेरणा प्रदान करती है।

iii. सत्य मानव निर्मित होता है (Truth is Man-Made) - प्रयोजनवादियों के अनुसार सत्य कोई ऐसी चीज नहीं जो पहले से विद्यमान हो। परिस्थितियों में परिवर्तन होने के फलस्वरूप मनुष्य के सामने अनेक समस्याएं उत्पन्न होती हैं। जिनकी पूर्ति के लिए मनुष्य चिन्तन करने लगता है, किन्तु चिन्तन में आए सभी विचार तो सत्य नहीं होते, सत्य तो केवल वही विचार होते हैं, जिनका प्रयोग करने पर सन्तोषजनक फल प्राप्त हो।

iv. बहुत्ववाद का समर्थन (Vindication of Pluarism)- अंतिम सत्ता एक है, दो या अनेक इस संबंध में मुख्यतः तीन वाद हैं। 1. एकत्ववाद (Mononism)2. द्वैतवाद (Dualism) तथा 3. बहुत्ववाद (Plualism)। प्रयोजनवाद बहुत्ववाद का समर्थक है। रस्क महोदय ने इस तथ्य पर विचार करते हुए लिखा है-''प्रकृतिवाद प्रत्येक वस्तु को जीवन या (भौतिक तत्व), आदर्शवाद मन या आत्मा मानता है। प्रयोजनवाद इस बात की आवश्यकता नहीं समझता कि संसार का किसी एक तत्व या सिद्धान्त के आधार पर स्पष्टीकरण करे। प्रयोजनवाद अनेक सिद्धान्तों को स्वीकार करने में संतोष अनुभव करता है। इस तरह वह बहुत्ववादी है।''

"Naturalism reduces everything to life, idealism to mind or spirit. Pragmatism sees no necessity for seeking one fundamental principal of explanation. It is quite content to admit several principles and accordingly is pluralistic" –Rusk.

v. उपयोगिता के सिद्धान्त का समर्थन (To Support the Principal of Utility)- प्रयोजनवाद के अनुसार केवल वही वस्तु अथवा विचार ठीक है जो हमारे लिए उपयोगी है और इसके विपरीत जो वस्तु या विचार हमारे लिए उपयोगी नहीं है वह हमारेलिए व्यर्थ है। इस प्रकार प्रयोजनवादी उपयोगिता के सिद्धान्त का समर्थन करते हैं।

vi. मानवीय शक्ति पर बल (Emphasis on human power)- प्रयोजनवादी मानव की शक्ति पर विशेष बल देता है, क्योंकि वह उसके द्वारा अपनी आवश्यकतओं के अनुसार वातावरण बना लेता है। वह सफलतापूर्वक समस्याओं का समाधान करके अपने लिए सुन्दर वातावरण निर्मित कर लेता है।

vii. सामाजिक प्रथाओं एवं परम्पराओं की उपेक्षा (Negligence of Social Customs and Traditions)- प्रयोजनवादी समाज में नाना प्रकार की प्रचलित रूढ़ियों, बंधनों एवं परम्पराओं की सर्वथा उपेक्षा करते हैं। ये लोग 'विचार' की अपेक्षा 'क्रिया' को विशेष महत्व देते हैं, क्योंकि उनका विचार है कि विचार हमेशा 'क्रिया'से ही उत्पन्न होते हैं।

viii. आध्यात्मिक तत्वों की उपेक्षा (Negligence of Spiritual Elements)- प्रयोजनवादी व्यावहारिक जीवन से संबंध रखना उचित समझते हैं। ईश्वर, आत्मा, धर्म इत्यादि का

व्यावहारिक जीवन से संबंध न होने के कारण इनका कोई महत्व नहीं है। हॉ, यदि व्यावहारिक जीवन में उनकी आवश्यकता अनुभव हो तो वे उन्हें स्वीकार करने में भी नहीं चूकते। कुछ भी हो प्रयोजनवादी आध्यात्मिक तत्वों की उपेक्षा करते हैं।

5.5.1 प्रयोजनवादी पाठ्यक्रम Pragmatism Curriculum)

प्रयोजनवादी पाठ्यक्रम निम्नलिखित बातों पर आधारित हैः-

i. **उपयोगिता सिद्धान्त (Principle of Utility) -** प्रयोजनवादियों के अनुसार पाठ्यक्रम में ऐसे नियमों को स्थान देना चाहिए जो बालकों के भावी जीवन में काम दें और उन्हें ज्ञान तथा सफल जीवन की क्षमता प्रदान करें। इस दृष्टि से उनके अनुसार पाठ्यक्रम में भाषा, स्वास्थ्य विज्ञान, शारीरिक प्रशिक्षण, इतिहास, भूगोल, गणित, विज्ञान-बालिकाओं को गृह-विज्ञान आदि विषयों को स्थान देना चाहिए जो कि मानव प्रगति में सहायक हों।

ii. **सानुबंधित का (Principle of Integration) -** प्रयोजनवादियों का विचार है कि जो विषय पाठ्यक्रम में निर्धारित किए जाएँ उन सबमें आपस में संबंध होना चाहिए, क्योंकि ज्ञान का पृथक-पृथक विभाजन नहीं होता। उनका विचार है कि बालकों को समस्त विषय एक-दूसरे से संबंधित कर पढ़ाने चाहिए, जिससे न केवल बालकों का ज्ञान प्राप्त करना सार्थक हो वरन् शिक्षकों को पढ़ाने में भी सुविधा हो।

iii. **बाल केन्द्रित पाठ्यक्रम (Child-Centered Curriculum)-** प्रयोजनवादियों का विचार है कि पाठ्यक्रम का संगठन इस प्रकार करना चाहिए कि उसमें बालक की प्राकृतिक अभिरूचियों को पूर्ण स्थान हो। बालक की ये अभिरूचियां मुख्य रूप से चार हैं- 1. बातचीत करना, 2. खोज करना, 3. कलात्मक अभिव्यक्ति एवं 4. रचनात्मक कार्य करना। इस दृष्टि से पाठ्यक्रम में लिखने, पढ़ने, गिनने, प्रकृति विज्ञान, हस्तकार्य एवं ड्राइंग का अध्ययन करने के साधनों को स्थान मिलना चाहिए।

iv. **बालक के व्यवसाय, क्रियाओं एवं अनुभव पर आधारित (On the base of Child's Occupation Activities and Experience)-** प्रयोजनवादियों का विचार है कि पाठ्यक्रम का संगठन बालक के व्यवसायों एवं अनुभव पर आधारित होना चाहिए। उनका विचार है कि किताबों को केवल रट लेना शिक्षा नहीं है बल्कि यह तो एक सुविचार प्रक्रिया है, फलस्वरूप पाठ्यक्रम में शिक्षा विषयों के अतिरिक्त सामाजिक, स्वतंत्र एवं उद्देश्यपूर्ण क्रियाओं को स्थान मिलना चाहिए, जिससे कि बालकों में नैतिक गुणों का विकास होगा, स्वतंत्रता की भावना का संचार होगा, उन्हें नागरिकताकी प्रतिक्षा मिलेगी तथा उनमें आत्म-अनुशासन की भावना पैदा होगी।

5.5.2 प्रयोजनवादी शिक्षण पद्धति Pragmatic Method of Teaching

प्रयोजनवादी शिक्षाशास्त्रियों ने प्राचीन एवं रूढ़िवादी शिक्षा पद्धतियों का विरोध करते हुए वर्तमान शिक्षण विधियों का प्रतिपादन किया। उनका विचार है कि कोई पद्धति इसलिए स्वीकार नहीं करनी चाहिए, क्योंकि वह पहली से शिक्षा के क्षेत्र में प्रयोग होती आ रही है बल्कि उनका विचार है कि परिस्थितियों के अनुसार नवीन पद्धतियों की रचना करनी चाहिए। इस दृष्टिकोण से उन्होंने शिक्षण पद्धति के कुछ सिद्धान्त प्रतिपादित किए हैं, जिनके आधार पर उसका निर्माण होना चाहिए। ये सिद्धान्त निम्नलिखित हैं:-

i. **बाल केन्द्रित पद्धति (Child- Centered Method) -** प्रयोजनवादियों का विचार है कि प्रत्येक शिक्षण पद्धति को 'बाल केन्द्रित' (Child-Center) होना चाहिए, अर्थात् शिक्षा पद्धति इस प्रकार होनी चाहिए जो बालक की अभिरूचियों, आवश्यकताओं, उद्देश्यों आदि के अनुकूल हो, जिससे कि बालक प्रसन्नतापूर्वक अपने जीवन में काम आने वाली शिक्षा ग्रहण कर सके।

ii. **करके सीखने अथवा स्वानुभव से सीखने की पद्धति (Method of Learning by doing or Experience)-** प्रयोजनवादी विचार अथवा शब्द की अपेक्षा क्रिया पर अधिक जोर देते हैं। उनका विचार है कि बालकों को पुस्तकों की अपेक्षा क्रियाओं और अनुभवों से अधिक सीखना चाहिए जिससे कि उनके ज्ञान का व्यावहारिक मूल्य अधिक हो, फलस्वरूप वह 'करके सीखने अथवा स्वानुभव द्वारा सीखने' (Learning by doing or Experience) पर विशेष महत्व देते हैं।

iii. **सानुबन्धता की पद्धति ((Method of Integration)**- प्रयोजनवादियों ने शिक्षा-पद्धतियों के निर्माण का तीसरा सिद्धान्त प्रतिपादित किया है, जिसे सानुबन्धता का सिद्धान्त (Principal of Integration or Correlation))- कहते हैं। प्रयोजनवादी 'विभिन्नता में एकता के सिद्धान्त' (Principal of Unity in Divedrsity) का समर्थन करते हुए कहते हैं कि समस्त विषयों को परस्पर संबंधित कर पढ़ाना चाहिए, जिससे बालक जो ज्ञान और कौशल सीखते हैं, उनमें एकता स्थापित हो जाती है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

7. ''सत्य सदैव देश, काल एवं परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होता रहता है, जो वस्तु एक स्थान पर सत्य है आवश्यक नहीं कि वह दूसरे स्थान पर भी सत्य होगी।'' यह विचारधारा है-

   A. अस्तित्ववाद B. प्रयोगवाद C. आदर्शवाद D. प्रकृतिवाद

8. प्रयोजनवाद समर्थन करता है-

A. एकत्ववाद (Mononism)B. द्वैतवाद (Dualism)C.बहुत्ववाद (Pluralism)

9. ''विभिन्नता में एकता के सिद्धान्त (Principal of Utility In Diversity) का समर्थन करते हैं।'' यह विचारधारा है-

A. फलवाद/प्रयोजनवादB. आदर्शवाद C. प्रकृतिवाद D. अस्तित्ववाद

10. ''प्रत्येक शिक्षण पद्धति को बाल केन्द्रित (Child-Cented) होना चाहिए।'' यह विचारधारा है-

A. प्राचीनकालीन B. आधुनिक C. अस्तित्ववादीD. प्रयोजनवादी

11. ''मूल्य तो मानव की व्यक्तिगत व सामाजिक घटनाओं के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं जो सदैव परिवर्तनशील होते हैं।'' यह विचारधारा है-

A. प्रयोजनवाद B. अस्तित्ववाद C. प्रकृतिवाद D. आदर्शवाद

12. प्रयोग (Experiment) को ही सत्य की एकमात्र कसौटी कौन मानता है ?

A. प्रकृतिवाद B. अस्तित्ववाद C. प्रयोजनवाद D. आदर्शवाद

5.6 आदर्शवाद व प्रयोजनवाद में अंतर (Difference Between Idealism and Pragmatism)

दार्शनिक अंतर (Philosophical Difference)

आदर्शवाद (Idealism)	**प्रयोजनवाद (Pragmatism)**
1. आदर्शवाद एक 'अंतिम सत्ता' (Ultimate Reality) मानते हैं। 2. अंतिम सत्ता आध्यात्मिक स्वरूप की है। 3. आदर्शवादी शाश्वत मूल्यों तथा सत्यों पर विश्वास करते हैं। 4. आदर्शवादी 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' को शाश्वत मूल्य बताते हैं जो संसार की व्यवस्था के पहले से भी विद्यमान है। 5. आदर्शवाद के अनुसार अंतिम सत्ता ईश्वर ही है जो संपूर्ण जगत् का नियंत्रण तथा पालन करता है। 6. आदर्शवादी विचार को अधिक महत्व देते हैं। 7. आदर्शवादी बुद्धि को अधिक महत्व देते हैं।	1. प्रयोजनवाद अनेक सत्ताओं या तत्वों के आधार पर विश्व की व्याख्या करता है। 2. ये अनेक अलग-अलग प्रकृति के हो सकते हैं। 3. प्रयोजनवादियों के अनुसार सत्य सदैव परिवर्तनशील है। 4. प्रयोजनवादी किसी पूर्व-निश्चित मूल्य को स्वीकार न कर मनुष्य की क्रिया द्वारा मूल्यों की सृष्टि बतलाते हैं। 5. प्रयोजनवादी यदि व्यवहार में ईश्वर की आवश्यकता अनुभव करते हैं तभी ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं। 6. प्रयोजनवादी विचार की अपेक्षा क्रिया को अधिक महत्व देते हैं।

8. आदर्शवादी ऐहिक या लौकिक जीवन को महत्व न देकर पारलौकिक जीवन को विशेष महत्व देते हैं।	7. प्रयोजनवादी बुद्धि के स्थान पर भावना तथा परिस्थितियों को अधिक महत्व देते हैं। 8. प्रयोजनवादी लौकिक या भौतिक जीवन को अधिक महत्व देते हैं।
शैक्षणिक अंतर (Educational Difference)	
9. आदर्शवाद के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य शाश्वत मूल्यों को प्राप्त करना है। 10. आदर्शवादी पाठ्यक्रम में शाश्वत मूल्यों से संबंधित विषयों को महत्वपूर्ण स्थान देते हैं। 11. आदर्शवादी शिक्षक को बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान देते हैं। 12. आदर्शवाद प्रभावात्मक अनुशासन पर विशेष बल देता है।	9. प्रयोजनवाद के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य सामाजिक तथा व्यावहारिक जीवन उचित रूप से बिताने के लिए तत्वसंबंधी गुणों को विकसित करना है। 10. प्रयोजनवादी पाठ्यक्रम में व्यावहारिक जीवन से संबंधित विषयों को अधिक महत्व देता है। 11. प्रयोजनवादी शैक्षिक परिस्थितियों के सृजन के लिए शिक्षक को आवश्यक बतलाते हैंं। 12. प्रयोजनवाद सीमित मुक्त्यात्मक अनुशासन पर विश्वास करता है।

5.7 प्रकृतिवाद व प्रयोजनवाद में अंतर Difference Between Naturalism and Pragmatism

दार्शनिक अंतर (Philosophical Difference

प्रकृतिवाद Naturalism	प्रयोजनवाद (Pragmatism
1. प्रकृतिवादी 'पुद्गल' (Matter) से संसार की समस्त वस्तुओं तथा विचारों की उत्पत्ति मानते हैं। इस तरह से वे एकत्ववादी हैं। 2. प्रकृतिवादी पदार्थ विज्ञान संबंधी प्राकृतिकनियमों की 'सार्वभौमिकता' (Generalization)तथा 'वस्तुनिष्ठता' (Objectivity) पर जोर देते हैं। 3. प्रकृतिवाद के अनुसार समानता सत्य की	1. प्रयोजनवादी संसार की व्याख्या अनेक तत्वों के आधार पर करते हैं। इस प्रकार के बहुत्ववादी हैं। 2. प्रयोजनवादी किसी भी नियम या सिद्धान्त को सार्वभौमिक तथा वस्तुगत नहीं मानता बल्कि प्रयोजनवादी जेम्स के अनुसार समस्त नियमों का विकास देश, काल तथा परिस्थिति के अनुसार होता है।

कसौटी है। 4. प्रकृतिवादी आदर्शो एवं मान्यताओं को पूर्णरूपेण स्वीकार नहीं करते। 5. प्रकृतिवादियों का दृष्टिकोण यांत्रिक तथा अवैयक्तिक है। इसी दृष्टि से ही तो 'व्यवहारवाद' ;ठमींअपवनतपेउद्ध को जन्म मिला। 6. प्रकृतिवादी ईश्वर के अस्तित्व को किसी भी माने में स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं।	3. प्रयोजनवाद के अनुसार 'पुनः निरीक्षण'(Observation) सत्यकी कसौटी है। 4. प्रयोजनवादी किसी न किसी रूप में आदर्शो तथा मान्यताओं को स्वीकार करते हैं। ड्यूवी के अनुसार यदि पूर्व-निश्चित मान्यताएं प्रयोग तथा अनुभव द्वारा सिद्ध होती हैं तो उन्हें भी स्वीकार कर लेना चाहिए। 5. प्रयोजनवादी मानव की प्रवृत्तियों, अनुभूतियों तथा भावनाओं पर बल देते हैं। इस दृष्टि से यह मानवीय विचारधारा कही जा सकती है। 6. यदि ईश्वर की मान्यता द्वारा मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके तो प्रयोजनवादी ईश्वर को मानने में नहीं चूकते हैं।
शैक्षणिक अंतर (Educational Difference)	
7. प्रकृतिवादी शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य आत्म-प्रकाशन या वैयक्तिकता का विकास मानते हैं। 8. प्रकृतिवादी बालक में किसी भी प्रकार की आदत निर्माण करने के विरोध में हैं। 9. प्रकृतिवादी पाठ्यक्रम में उन विषयों को रखने पर बल देते हैं जिनसे आत्म-प्रकाशन तथा आत्म-रक्षा संभव हो सके। 10. प्रकृतिवादी बालक की शिक्षा में शिक्षक की पूर्ण उपेक्षा करते हैं। 11. प्रकृतिवादी प्राकृतिक परिणामों द्वारा अनुशासन के सिद्धान्त अर्थात् मुक्त्यात्मक अनुशासन का समर्थन करते हैं। 12. प्रकृतिवादी शिक्षा नकारात्मक विचारधारा पर आधारित है।	7. प्रयोजनवादी शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक कल्याण तथा कार्य निपुणता को मानते हैं। 8. प्रयोजनवादी कार्य निपुणता या 'स्वभाव निर्माण' को ही शिक्षा का केन्द्र बिन्दु मानते हैं। 9. प्रयोजनवादी पाठ्यक्रम में उन विषयों को विशेष स्थान देते हैं जिनसे कि सारे समाज की प्रगति हो। 10. प्रयोजनवादी बालक में उत्तम गुणों के विकास के लिए शिक्षक को महत्वपूर्ण स्थान देते हैं 11. प्रयोजनवादी प्राकृतिक दुष्परिणामों से बालवक की रक्षा करने की दृष्टि से सीमित मुक्त्यात्मक अनुशासन पर बल देते हैं। 12. प्रयोजनवादी शिक्षा सकारात्मक विचारधारा पर आधारित है।

तीनों विचारधाराओं में सामंजस्य आवश्यक हैं

उपर्युक्त शब्दों का यह निष्कर्ष न निकालना चाहिए कि चूंकि इन तीनों वादोंमें अंतर है। अतः शिक्षा के क्षेत्र में ये तीनों अलग-अलग कार्य करेंगे। वास्तव में रॉस के शब्दों में - ''यदि आदर्शवादी अपने आपको प्रगतिशील रखें तो प्रयोजनवाद एवं आदर्शवाद के बीच का अंतर कम हो जाता है।'' जहां तक मानव द्वारा निर्मित मूल्यों एवं आदर्शों का संबंध है वहां प्रयोगवाद प्रगतिशील आदर्शवाद से और जहां तक बालक एवं उसकी प्रगति अध्ययन का संबंध है वहां प्रयोगवाद प्रकृतिवाद से मिलता जुलता है। इसीलिए तो शायद प्रयोगवाद के प्रवर्तक जेम्स का कथन है, ''प्रयोगवाद को आदर्शवाद एवं प्रकृतिवाद की मध्यावस्था कहा जा सकता है।''

"Pragmatism is described as a Via-media between Idealism Naturalism" James

5.8 प्रयोजनवाद का आधुनिक शिक्षा पर प्रभाव (Impact of Pragmatism on Modern Education)

दर्शन के रूप में नहीं वरन् व्यवहार के रूप में प्रयोजनवाद ने आधुनिक शिक्षा पर बहुत प्रभाव डाला है। शिक्षा एक व्यावहारिक कला है और व्यावहारिक दृष्टि से प्रयोजनवाद शिक्षा से पुनःनिर्माण में बहुत सहायक सिद्ध हुआ। प्रयोजनवादी शिक्षा की निम्नलिखित धाराएं आज भी भारतीय शिक्षा में स्पष्ट हैः-

i. शिक्षा व्यापक रूप से विकास वृद्धि या व्यहार परिवर्तन का रूप लेती है।
ii. शिक्षा के निकट के उद्देश्य बहुत महत्व रखते हों और उनकी प्राप्ति के लिए शिक्षण विधियां प्रगतिशील हों।
iii. शिक्षा जीवन केन्द्रित हो और एक प्रगतिशील समाज में वह भी प्रगति का परिचय दे।
iv. शिक्षा के सामाजिक प्रक्रिया है और समाज का पोषण है।
v. समाज शिक्षा संस्थाओं को अपने आदर्शो की पूर्ति के लिए स्थापित करता है। अतः शिक्षण संस्थाएं समाज का बन्धु रूप है।
vi. जनतंत्रीय समाज के लिए जनतंत्रीय शिक्षा की आवश्यकता है।
vii. ज्ञान की उत्पत्ति क्रिया से होती है, क्रिया प्रधान है, सफलतापूर्वक क्रिया का संपादन करने के लिए वह ज्ञान आता है और बालक क्रिया द्वारा सीखता है।
viii. शिक्षा बालक की नैसर्गिक प्रवृत्तियों, रूचियों, शक्तियों आदि को केन्द्र बनाकर दी जाये परन्तु उसको साथ ही साथ सामाजिक रूप भी दिया जाये। बालक अपने हित के साथ-साथ समाज का हित करने की क्षमता भी सीख ले।

ix. परम्परागत, रूढ़िगत तथा कठोर विधियों व विचारों को शिक्षा में लाकर एक लचकदार समाज में एक लचकदार शिक्षा की आवश्यकता है।

x. शिक्षा जीवन की तैयारी ही नहीं जीवन का लक्ष्य है। भविष्य अनिश्चित है। अतः वर्तमान अधिक मूल्य रखता है। शिक्षा द्वारा बालकों को वह गुण, ज्ञान, मनोवृत्तियां व कौशल दिये जाएँ जो उन्हें एक बदलते हुए समाज में परिस्थितियों के अनुकूल अपना समाज में स्थान लेने योग्य बनाएं।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

13. प्रयोजनवादी शाश्वत मूल्यों पर विश्वास करते हैं:-
    A. सत्य B. असत्य
14. प्रयोजनवादी भावना तथा परिस्थितियों से अधिक बुद्धि को अधिक महत्व देते हैं:-
    A. सत्य B. असत्य
15. प्रयोजनवादी शिक्षा में गतिशीलता व परिवर्तनशीलता पायी जाती है:-
    A. सत्य B. असत्य
16. प्रयोजनवादी 'पुद्गल' Metter से संसार की समस्त वस्तुओं तथा विचारों की उत्पत्ति मानते हैं। इस तरह से वे एक तत्ववादी हैं-
    A. सत्य B. असत्य
17. ''परम्परागत, रूढ़िगत तथा कठोर विधियों व विचारों को शिक्षा में लाकर एक लचकदार समाज में एक लचकदार शिक्षा की आवश्यकता है।'' यह विचारधारा है-
    A. अस्तित्ववादी B. प्रकृतिवादी C. आदर्शवादी D. प्रयोजनवादी

5.9 सारांश

शिक्षा दर्शन के रूप में प्रयोजनवाद का एक प्रगतिशील दर्शन है। वह शिक्षा को सामाजिक (Social), गतिशील (Dynamic) और विकास की प्रक्रिया (Process of Development) मानता है। उसके इस विचार ने प्रगतिशील शिक्षा (Progressive Education) को जन्म दिया है। वास्तववाद और प्रकृतिवाद ने शिक्षा को मनोवैज्ञानिक और वैज्ञानिक आधार ही दिए थे, व्यावहारिकतावाद ने उसे एक तीसरा आधार भी दिया, जिसे हम सामाजिक आधार कहते हैं।

जहां तक शिक्षा के उद्देश्यों की बात है, व्यावहारिकतावाद उन्हें निश्चित करने के पक्ष में नहीं है। उसका स्पष्टीकरण है कि यह संसार और मनुष्य जीवन परिवर्तनशील है, इसलिए शिक्षा के कोई निश्चित उद्देश्य नहीं हो सकते, अगर शिक्षा का कोई उद्देश्य हो सकता है तो यही कि उसके द्वारा मनुष्य का सामाजिक विकास कर उसे इस योग्य बनाया जाए कि वह बदलते हुए समाज में अनुकूलन

कर सके और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सामाजिक पर्यावरण पर नियंत्रण रख सके और उसमें परिवर्तन कर सके। परन्तु जब तक मनुष्य यह नहीं जानता कि उसे सामाजिक पर्यावरण में किस सीमा तक अनुकूलन करना है और उसे अपनी किन आवश्यकताओं की पूर्ति करनी है तब तक वह उचित मार्ग पर नहीं चल सकता। व्यावहारिकतावाद इन प्रश्नां के सही उत्तर नहीं देता, इसलिए उसके द्वारा निश्चित शिक्षा के ये उद्देश्य अपने में अपूर्ण हैं। डीवी महोदय ने सामाजिक कुशलता के विकास और किलपैट्रिक महोदय ने लोकतंत्रीय जीवन के विकास पर बल दिया है। हमारी दृष्टि से तो शिक्षा को मनुष्य का सर्वागीण विकास करना चाहिए।

शिक्षण विधियों के क्षेत्र में प्रयोजनवादियों की देन बड़ी मूल्यवान है। जिन मनोवैज्ञानिक तथ्यों का उद्घाटन एवं प्रयोग वास्तववादियों और प्रकृतिवादियों ने किया, व्यावहारिकतावादियों ने उसमें सामाजिक पर्यावरण के महत्व को और जोड़ दिया। उन्होंने बच्चों की जन्मजात शक्तियों को पहचाना, उनके व्यक्तिगत भेदों का आदर किया और ज्ञानेन्द्रियों द्वारा सीखने, करके सीखने और अनुभव द्वारा सीखने पर बल दिया और इसके साथ-साथ इस बात पर भी बल दिया कि बच्चों को जो कुछ भी सिखाया जाये उसका संबंध उनके वास्तविक जीवन से होना चाहिए और उन्हें व्यावहारिक क्रियाओं के माध्यम से अनुभव करने के अवसर देने चाहिए। समस्त विषयों एवं क्रियाओं की शिक्षा एक ईकाई के रूप में देने पर भी इन्होंने बल दिया है। इन सिद्धान्तों पर डीवी महोदय ने समस्या समाधान विधि (Problem Solving Method) और किलपैट्रिक ने प्रोजेक्ट विधि (Project Method) का निर्माण किया। ईकाई विधि (Unit Technique0 भी इन्हीं सिद्धान्तों पर आधारित है। आज संसार के सभी देशों की शिक्षा में इन विधियो को अपनाया जाता है।प्रयोजनवादी व्यक्ति और समाज दोनों के हित साधन के लिए विद्यालयों को समाज के सच्चे प्रतिनिधि के रूप् में देखना चाहते हैं। उनके इस विचार ने विद्यालयों को सामुदायिक केन्द्रो (Community Centered) में बदल दिया है। अब विद्यालय कोई कृत्रिम संस्थाएं नहीं माने जाते अपितु बच्चों की जैविक प्रयोगशालाओं के रूप में स्वीकार किए   जाते हैं, जहां बच्चे वास्तविक क्रियाओं में भाग लेते हैं, स्वयं क्रिया करते हैं, निरीक्षण करते हैं और वास्तविक जीवन की शिक्षा प्राप्त करते हैं।

5.10.शब्दावली

प्रयोजनवाद की तत्व मीमांसा Metaphysics of Pragmatism

यह अनेक वस्तुओं और अनेक क्रियाओं का परिणाम है, वस्तु और क्रियाओं की व्याख्या के झमेले में ये नहीं पड़ते। इस इन्द्रियग्राह संसार के अतिरिक्त ये किसी अन्य संसार के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करते। ये आत्मा-परमात्मा के अस्तित्व को भी नहीं स्वीकारते। इनके अनुसार मन का ही दूसर नाम आत्मा है और मन एक पदार्थ जन्म क्रियाशील तत्व है।

प्रयोजनवाद की ज्ञान मीमांसा Epistemology of Pragmatism

प्रयोजनवादियों के अनुसार अनुभवों की पुनर्रचना ही ज्ञान है। ये ज्ञान को साध्य नहीं अपितु मनुष्य जीवन को सुखमय बनाने का साधन मानते हैं। इसकी प्राप्ति सामाजिक क्रियाओं में भाग लेने से स्वयं होती है। कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों को ये ज्ञान का आधार मानते हैं और मस्तिष्क तथा बुद्धि को ज्ञान का नियंत्रक।

प्रयोजनवाद की आचार मीमांसा Ethics of Pragmatism

प्रयोजनवादी निश्चित मूल्यों और आदर्शो में विश्वास नहीं करते इसलिए ये मनुष्य के लिए कोई निश्चित आचार संहिता नहीं बनाते। इनका स्पष्टीकरण है कि मनुष्य जीवन में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है इसलिए उसके आचरण को निश्चित नहीं किया जा सकता। उसमें तो वह शक्ति होनी चाहिए कि वह बदले हुए पर्यावरण में समायोजन कर सके।

5.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. B. अमेरिका
2. C. अमेरिका
3. प्रयोजनवाद को हम प्रयोगवाद, फलवाद, क्रियावाद, व्यवहारवाद, कारणवाद, नैमितिकवाद, अनुभववाद आदि नामोंसे पुकारते हैं।
4. A. सत्य
5. B. असत्य
6. प्रयोजनवाद
7. B. प्रयोगवाद
8. C. बहुत्ववाद
9. A. फलवाद (प्रयोजनवाद)
10. D. प्रयोजनवाद
11. A. प्रयोजनवाद
12. C. प्रयोजनवाद
13. B. असत्य
14. B. असत्य
15. A. सत्य
16. B. असत्य
17. D. प्रयोजनवादी

5.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।
2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
5. 5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. शर्मा, रामनाथ व शर्मा राजेन्द्रकुमार (2006) एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।

5.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रयोजनवाद से आप क्या समझते हैं? प्रयोजनवाद एवं शिक्षा के संबंधों की चर्चा विस्तृत रूप से कीजिए।
2. प्रयोजनवाद में तत्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा एवं आचार मीमांसा के बारे में विस्तृत रूप से वर्णन कीजिए।
3. प्रयोजनवाद की विशेषताओं की विस्तृत रूप से व्याख्या कीजिए।
4. प्रयोजनवाद के आधारभूत सिद्धान्तों की व्याख्या कीजिए।
5. प्रयोजनवादी शिक्षण पद्धति की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
6. प्रयोजनवाद की दो परिभाषाएं देते हुए प्रयोजनवाद का आधुनिक शिक्षा पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

इकाई -6 अस्तित्ववाद Existentialism

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 अस्तित्ववाद और शिक्षा
6.3.1 अस्तित्ववाद का अर्थ
6.3.2 अस्तित्ववाद की परिभाषाएं
6.3.3 अस्तित्ववाद की विशेषताएं
6.4 अस्तित्ववादी शिक्षा
6.4.1 अस्तित्ववादी शिक्षा का अर्थ
6.4.2 अस्तित्ववादीमनोविज्ञान
6.4.3 अस्तित्ववादी शिक्षा के उद्देश्य
6.4.4 अस्तित्ववाद व पाठ्यक्रम
6.4.5 अस्तित्ववाद और शिक्षक
6.4.6 अस्तित्ववाद और विद्यार्थी
6.4.7 अस्तित्ववाद और शिक्षण विधि
6.4.8 अस्तित्ववादऔर विद्यालय
6.4.9 अस्तित्ववादऔरअनुशासन
6.5 सारांश
6.6 शब्दावली
6.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
6.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
6.9 निबंधात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

अस्तित्ववाद मनुष्य के अस्तित्व की संभावना और उसके वर्तमान रूपों से संबंधित है। स्वतंत्रता की भावना को नैसर्गिक तथा स्वतंत्रता को जन्म सिद्ध अधिकार मान लेने के बाद इस यात्रा का प्रारम्भ होता है, जिसमें मानवीय जीवन की संभावनायें प्रत्येक व्यक्ति के लिए सुलभ हो सके। सोरेन

किर्कगार्ड एवं जीन पॉल सार्त्रे ने अस्तित्ववादी चिन्तन को नया नैतिक धरातल प्रदान किया। उन्होंने स्वतंत्रता के प्रश्न को एक मानवीय प्रश्न बनाया और उसे समाज के संगठनात्मक ढांचे के अन्दर व्यवस्थित करने का प्रयास किया। मानवीय विकास के वर्तमान दौर की उसने पहली बार परिस्थितिगत तात्विक व्याख्या की और लगभग उसे कार्ल मार्क्स से मिलती-जुलती शब्दावली में वर्ग समाज कहा। सार्त्रे मनुष्य की वैयक्तिक इच्छाओं को ही अस्तित्व का केन्द्रीय बिन्दु मानता है तथा वर्तमान विघटनकारी परिस्थितियों के लिए औद्योगिक सभ्यता को उत्तरदायी ठहराता है।

वास्तव में अस्तित्ववाद पिछली दो शताब्दियों के 125 वर्षों में जिस तरह के परस्पर विरोधी विचारों को एक साथ मिला-जुलाकर एक बिन्दु पर केन्द्रित करता रहा है कि मानवीय अस्तित्व संकट के दौर से गुजर रहा है और मनुष्य के लिए अपने अस्तित्व की रक्षा का प्रश्न बन गया है। वह सभी दार्शनिकों की प्रवृतियों का प्रस्थान बिन्दु रहा है। मानवीय अस्तित्व के प्रारूप के बारे में अस्तित्वाद की धारणा अभी स्पष्ट नहीं है बल्कि स्वतंत्रता तथा परिस्थितियों की व्याख्या इसके दो मुद्दे हैं, जहां से सब कुछ नियंत्रित होता है। अस्तित्व की निरर्थकता तीसरा बिन्दु है जहां सभी विचारक सहमत होते हैं और स्वतंत्रता को चरितार्थ करने के प्रश्न पर पुनः गतिरोध उत्पन्न होता है।

6.2 उद्देश्य

1. अस्तित्ववाद और शिक्षा के संबंध में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
2. अस्तित्ववाद का अर्थ, परिभाषाएं और विशेषताओं के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
3. अस्तित्ववादी शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
4. अस्तित्ववादी शिक्षक, विद्यार्थी व शिक्षण विधि के बारे में जान सकेंगे।
5. अस्तित्ववाद और मानव जीवन का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

6.3 अस्तित्ववाद और शिक्षा(Existentialism and Education)

प्राचीन काल से आज तक दर्शन शास्त्र में सब कहीं अस्तित्व की समस्याओं पर विचार किया जाता रहा है। प्राचीन उपनिषदों में यह समस्या थी कि मनुष्य में वह तत्व क्या है जिसे उसका सच्चा अस्तित्व माना जा सकता है। पूर्व और पश्चिम में सब कहीं दार्शनिकगण अस्तित्व की प्रकृति के विषय में विचार करते रहे हैं। संक्षेप में, संसार में कोई भी दर्शन ऐसा नहीं है जो किसी न किसी अर्थो में अस्तित्ववादी न कहा जा सकता हो। तब फिर समकालीन दर्शन में अस्तित्ववादी दार्शनिक सम्प्रदाय की विशेषता क्या है? इसकी विशेषता यह है कि यह दार्शनिक समस्याओं में सत् (Being) से अधिक सम्भूति (Becoming) पर, सामान्य (Universal) से अधिक विशेष (Particulars) पर और तत्व (Essence) से अधिक अस्तित्व (Existence) पर जोर देता है। कीर्केगार्ड के शब्दों में, ''अस्तित्ववादी की मुख्य समस्या यह है कि मैं ईसाई किस प्रकार बनूंगा।''

नास्तिकवादी यहां पर ईसाई शब्द के स्थान पर प्रमाणिक सत् (Authentic Being) शब्द का प्रयोग कर सकता है। इस प्रकार अस्तित्ववादियों ने ज्ञान (knowledge) और व्याख्या (Explaining) के स्थान पर क्रिया (Action) और चुनाव (Choice) पर जोर दिया है, क्या (What) के स्थान पर कैसे (How) को महत्वपूर्ण माना है।

अस्तित्ववादी दर्शन का प्राचीन यूनानी दर्शन से संबंध बतलाते हुए सुकरात को अस्तित्ववादी माना गया है। डॉ. राधाकृष्णन् के शब्दों में ''अस्तित्ववाद एक प्राचीन प्रणाली के लिए एक नया नाम है।'' इसी बात को दूसरी तरह से रखते हुये ब्लैकहम ने लिखा है, ''यह प्रोटेस्टेंट अथवा स्टोइक प्रकार के व्यक्तिवाद की आधुनिक शब्दों में पुनः स्थापना प्रतीत होता है, जो कि पुनर्जागरण युग के अनुभववादी व्यक्तिवाद अथवा आधुनिक उदारतावाद अथवा एपीक्यूरस के व्यक्तिवाद और रोम या मास्को तथा प्लेटो की सार्वभौम व्यवस्था के विरूद्ध लड़ा हुआ दिखलाई पड़ता है। यह आदर्शो के संघर्ष में मानव अनुभव के आवश्यक सोपानों में से एक की समकालीन पुनर्जागृति है, जिसे इतिहास ने अभी समाप्त नहीं किया है।

6.3.1 अस्तित्ववाद का अर्थ Meaning of Existentialism

अस्तित्ववाद आधुनिक समाज तथा परम्परागत दर्शन की कुछ विशेषताओं के विरूद्ध एक आन्दोलन है। यह अंशतः ग्रीक की विवेकशीलता या शास्त्रीय-दर्शन के विरोध स्वरूप प्रकट हुआ। अस्तित्ववाद प्रकृति तथा तर्क के विरूद्ध वैयक्तिक की संज्ञा से प्रकट हुआ। यह विचार आधुनिक या प्रौद्योगिक युग की अवैयक्तिक प्रवृत्ति के विरोध स्वरूप प्रकट हुआ। औद्योगिक समाज व्यक्ति को मशीन के अधीन रखने पर बल देता है। इस कारण यह खतरा उत्पन्न हो गया है कि मानव एक यंत्र या वस्तु बनता जा रहा है। इस प्रकृति के विरोधस्वरूप यह विचार उभरा है। यह वैज्ञानिकवाद तथा प्रत्यक्षवाद की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप विकसित हुआ। वैज्ञानिकवाद तथा प्रत्यक्षवाद मानव की बाह्य शक्ति पर बल देते हैं तथा उसे (मानव को) भौतिक क्रियाओं के अंग के रूप में संचालित करता है। इसका अधिनायकवादी प्रवृत्ति के विरोध में विकास हुआ। अतः अस्तित्ववाद एक प्रतिक्रियात्मक सिद्धान्त के रूप में उभरा है। व्यक्ति की विषम परिस्थितियों में उत्पन्न वेदनाओं का अनुभव कर उसे स्वर देने के लिए यह विचार एक समयोचित प्रयास है, प्रभुत्व और बाह्य दर्शनों का स्वतंत्र के नाम पर विरोध किया तथा स्पष्ट किया कि व्यक्ति अपने राजनैतिक, धार्मिक, नैतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक आदि संबंधों में स्वतंत्र किन्तु दायित्वयुक्त है। यह विरोध चिन्तन या तर्क बुद्धि की खोज नहीं बल्कि भोगे हुए सत्य का परिणाम है, जिसने उनके जीवन को झकझोर दिया।

आधुनिक युग में अभ्युदय के साथ ही धर्म ने विज्ञान को अपनी ज्योतिशलाका पकड़ा दी और विज्ञान ने औद्योगिक तथा प्रौद्योगिक प्रगति के क्रम में व्यक्ति को व्यक्ति नहीं रहने दिया। उसके अस्तित्व का अर्थ उसी की आंखों में समाप्त कर दिया। इसके साथ ही हीगल के 'विश्व मन' तथा मार्क्स के 'साम्यवाद' ने भी व्यक्ति की विशिष्टता और स्वतंत्रता को कोई महत्व नहीं दिया। इन

सबके साथ युक्त होकर विश्वयुद्धों ने मूल्यों का विघटन किया। परम्परागत मूल्यों की मृत्यु ने धर्म, नैतिकता, विज्ञान, समानता भ्रातृत्व के सिद्धान्तों को धूल में मिला दिया। इस प्रकार अस्तित्ववाद शास्त्रीय तथा परम्परागत दर्शन पर एक प्रहार के रूप में विकसित हुआ, जिसने जीवन से असम्बद्ध दर्शन को समाप्त कर दिया।वस्तुतः अस्तित्ववाद मानवीय जीवन और नियति का यथार्थ परक विश्लेषण है। सोरेन किर्कगार्ड के अनुसार, अस्तित्व शब्द का उपयोग इस दावे पर बल देने के लिए किया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति या इकाई अपने आप में स्वयं जैसी या अद्भुत है तथा आध्यात्मिक या वैज्ञानिक प्रक्रिया के संदर्भ में अविश्लेषणीय है। यह वह अस्तित्वमय है, जो स्वयं चुनाव करता है एवं स्वयं चिन्तन करता है। उसका भविष्य कुछ अंशों में उसके स्वतंत्र चुनाव पर निर्भर है। अतः इस संबंध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता है।

6.3.2 अस्तित्ववाद की परिभाषाएं Definitions of Existentialism

अस्तित्ववाद की निम्न परिभाषाएं हैं:-

"जीन पॉल सार्त्रे लिखते हैं कि- ''अस्तित्ववाद अन्य कुछ नहीं वरन् एक सुसंयोजित निरीश्वरवादी स्थिति से सभी निष्कर्षो को उत्पन्न करने का प्रयास है।''

एनसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटेनिका के अनुसार- ''अस्तित्ववादी दर्शन चिन्तन का वह मार्ग है जो सम्पूर्ण पार्थिव ज्ञान का उपयोग करता है, उसे इस क्रम में परिवर्तित करता है, जिससे मानव पुनः स्वयं जैसा बन सके।''

डॉ. राधाकृष्णन के शब्दों में- ''अस्तित्ववाद एक प्राचीन प्रणाली के लिए एक नया नाम है।''

6.3.3 अस्तित्ववाद की विशेषताएं Characteristics of Existentialism

अस्तित्ववाद की निम्न विशेषताएं हैं:-

i. **आदर्शवाद की आलोचना Criticism of Idealism** - अस्तित्ववाद आदर्शवाद के विरूद्ध विद्रोह के रूप में खड़ा हुआ है। अस्तु, अस्तित्ववादी दार्शनिक आदर्शवाद अथवा प्रत्ययवाद के सिद्धान्त का खण्डन करते हैं। प्रत्ययवाद के अनुसार मानव व्यक्तित्व किसी सार्वभौम सारतत्व या आध्यात्मिक तत्व की अभिव्यक्ति है। इसके बिल्कुल विरूद्ध अस्तित्ववादियों के अनुसार मानव अस्तित्व सार्वभौम सार तत्व (Universal Essence) के पहले होताहै। प्रत्ययवाद के अनुसार मानव व्यक्तित्व की स्वतंत्रता सार्वभौम आध्यात्मिक तत्व की स्वतंत्रता पर निर्भर है।

ii. **अन्तर्द्वन्द की समस्या पर जोर Emphasis on problem of Inner conflict**- आज के जटिल संसार में सबसे बड़ी समस्या मनुष्य को किसी सिद्धान्त का अनुयायी बनाना नहीं बल्कि उसे उसकी स्वतंत्रता का बोध कराना है। ऐसा होने से आदान प्रदान सहज हो जाता है। संसार में

शान्ति केवल शान्ति-शान्ति चिल्लाने से नहीं मिलेगी। जब तक मानव वस्तु से भी निम्न बना रहेगा तब तक शान्ति नहीं हो सकती। इस प्रकार अन्य दर्शनों की तुलना में अस्तित्ववादी दर्शन अर्न्द्वन्द की समस्याओं पर विशेष जोर देता है। परम्परागत दर्शन इन समस्याओं को महत्वपूर्ण नहीं मानते। मानव की जगत से पृथकता और स्वयं अपने से पृथकता से ही दर्शन प्रारम्भ होता है।

iii. **प्रकृतिवाद की आलोचना Criticism of Naturalism**- अस्तित्ववादी दार्शनिक एक ओर आदर्शवाद और दूसरी ओर उसके विपरीत दर्शन प्रकृतिवाद की भी आलोचना करते हैं। प्रकृतिवादी दर्शन के अनुसार-मानव व्यक्तित्व प्राकृतिक नियमों से नियंत्रित होता है और वह किसी प्रकार की स्वतंत्रता नहीं रखता। दूसरी ओर अस्तित्ववादियों ने मानव को प्रकृति के द्वारा नियंत्रित न मानकर व्यक्तित्व की स्वतंत्रता की स्थापना की है।

iv. **निराशा से उत्पत्ति Born from Despair -** हमारे चारों ओर का जगत अनेक संघर्षो और समस्याओं से भरा हुआ है, किन्तु सामान्य समझदार व्यक्ति इनसे समझौता करके जीवन जीता रहता है। अस्तित्ववादी को यह जीवन असंभव लगता है और वह अपने को असहाय महसूस करता है। वह अत्यधिक चिन्ता से व्याप्त हो जाता है। उसे भय लगता है कि वह कर्तव्यों को पूरा नहीं कर सकेगा। उसे प्रतीत होता है कि वह चारों ओर के जगत को समझ नहीं पा रहा है। वह समय की आवश्यकताओं को पूरा करने में अपने को असमर्थ पाता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से कुछ लोग इसे असामान्य संवेदनशीलता कह सकते हैं।

v. **मानव व्यक्तित्व का महत्व Value of Human Personality**- अस्तित्ववादी दार्शनिक मानव व्यक्तित्व को अत्यधिक महत्वपूर्ण ठहराते हैं और इसके सामने ब्रह्म, ईश्वर, आत्मा, जगत किसी को भी इतना अधिक महत्वपूर्ण नहीं मानते। मानव व्यक्तित्व का मूल तत्व स्वतंत्रता है। समाज व्यक्ति के लिए है न कि व्यक्ति समाज के लिए है। यदि सामाजिक नियम व्यक्ति की स्वतंत्रता में बाधक हों तो व्यक्ति को इन नियमों का विरोध करने का अधिकार है। इस धारणा को लेकर अस्तित्ववादी साहित्यकारों और कलाकारों ने अपने विचारों को स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता को बनाये रखने के लिए सब कहीं भारी संघर्ष किया है और कर रहे हैं। वे इस स्वतंत्रता को अत्यधिक पवित्र मानते हैं और उसे किसी भी कीमत पर बेचने के लिए तैयार नहीं हैं। विभिन्न अस्तित्ववादी दार्शनिकों ने इस स्वतंत्रता की अलग-अलग प्रकार से व्याख्या की है।

vi. **वैज्ञानिक दर्शन की आलोचना Criticism of Scientific Philosophy**- प्रत्ययवाद और प्रकृतिवाद के अतिरिक्त अस्तित्ववादी दार्शनिक वैज्ञानिक दर्शन के आलोचक हैं। वास्तव में इन तीनों प्रकार के दर्शनों के विरूद्ध प्रतिक्रिया के रूप में ही अस्तित्ववाद का जन्म हुआ है। पाश्चात्य समाजों में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की प्रगति के साथ-साथ नगरीयता बढ़ी। बड़े-बड़े नगरों में मानव का अस्तित्व भीड़ में खो गया। विशालकाय मशीनों के सामने उसका महत्व नगण्य हो गया। कारखाने का एक पुर्जा बनकर वह अपने अस्तित्व को भूल गया। यांत्रिक

सभ्यता में उसके मूल्य खो गये। पग-पग पर वह यंत्रों और मशीनों का गुलाम बन गया। अस्तित्ववाद मानव के इसी अमानवीयकरण के विरूद्ध एक विद्रोह है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास का जो भयंकर रूप सामने आया उसे देखकर साहित्यकारों और कलाकारों ने मानव समस्याओं की ओर ध्यान देना आवश्यक समझा और मानव अस्तित्व के महत्व को फिर से स्थापित करने की आवश्यकता अनुभव की। अस्तु, साहित्य और कला के क्षेत्र में और क्रमशः धर्म व दर्शन के क्षेत्र में भी अस्तित्ववादी चिन्तन बढ़ने लगा।

vii. **दार्शनिक व्यवस्था की रचना नहीं No Construction of Philosophical system-** प्राचीनकाल से दार्शनिकगण ईश्वर, आत्मा और जगत, देश और काल, सृष्टि और विकास इत्यादि समस्याओं पर विचार करते रहे हैं। अस्तित्ववादी की समस्या व्यक्तिगत, वर्तमान और व्यावहारिक है। वह इन परम्परागत दार्शनिक प्रश्नों पर विचार नहीं करता। इसलिए वह दार्शनिक सिद्धान्त रचना को महत्व नहीं देता।

viii. **आत्मनिष्ठता का महत्व Importance of Subjectivity** - अस्तित्ववादी दार्शनिक कीर्केगार्ड ने कहा था कि सत्य आत्मनिष्ठता है। जबकि विज्ञान से प्रभावित दार्शनिकों ने आत्मनिष्ठता और व्यक्तिगत अनुभव को विशेष महत्वपूर्ण माना है। अस्तित्ववादी दर्शन मानव को उसके व्यक्तित्व के विकास में सहायता करता है और उसके प्रत्यक्ष अनुभवों जैसे-भय, आनन्द, घुटन इत्यादि की व्याख्या करके उनमें अन्तर्निहित सत् तत्व के दर्शन कराता है। प्रत्येक व्यक्ति आत्मनिष्ठ होकर ही अपने अन्दर के सम् (Being) को जान सकता है। यह एक रचनात्मक अनुभव है। इसी से मानव मूल्यों का सृजन होता है। यह एकाकीपन (Loneliness) की स्थिति है, जिसमें व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से केवल अपने अस्तित्व केसामने खड़ा होता है।

ix. **व्यक्ति और विश्व के संबंध की समस्या पर जोर Emphasis on the Problem of the individual** and Word - अन्त में अस्तित्ववादी दर्शन के अनुसार एक प्रमुख समस्या व्यक्ति और विश्व का संबंध है। इसकी जो परम्परागत व्याख्यायें की गयी हैं, उनसे यह समस्या हल नहीं होती। यदि निरपेक्ष सार्वभौम तत्व को हेगेल के समान मान लिया जाये तो व्यक्ति में किसी प्रकार की स्वतंत्रता नहीं रहती। अस्तु, अस्तित्ववादी ऐसे दर्शनों के विरूद्ध हैं क्योकि इस प्रकार के दर्शनों के रहते हुए व्यक्ति का कोई नैतिक उत्तरदायित्व नहीं बनता। अस्तित्ववादियों के अनुसार मानव को किसी भी नियम के अधीन नहीं किया जा सकता है,चाहे वह विश्व का नियम हो, प्रकृति का नियम हो, राज्य का नियम अथवा समाज का नियम। नियम कार्य की प्रमाणिकता नहीं दिखलाता, उल्टे कार्य ही नियम को प्रमाणिक बनाता है।

अस्तित्ववादी दर्शन किसी एक विचारक की सृष्टि नहीं है। यह दर्शन अनेक दार्शनिकों के लेखों में बिखरा हुआ है जिनमें प्रमुख हैं-नीत्शे (Nietzshe) सोरेन कीकेगार्ड (S.Kierkegaard), गैब्रियल मार्सेल (G.Marchel), मार्टिन हाईडैगर (M.Heideggar) ज्यां पॉल सार्त्र (J.P.Sartre), कार्ल जास्पर्स ;(K.Jaspers), एबगनामो (Abbagnamo), बरदाइयेव (Barduaev), कामू (Camus),

इत्यादि। इन दार्शनिकों ने अस्तित्व के विषय में भिन्न-भिन्न प्रकार के सिद्धान्त उपस्थित किए हैं। सार्त्र अपने दर्शन को विशेष रूप से अस्तित्ववादी कहता है जबकि मार्सेल अपने को अस्तित्ववादी मानने के लिए भी तैयार नहीं है। कीर्केगार्ड और मार्सेल दोनों आत्मवादी विचार हैं। कुछ अस्तित्ववादी आस्तिक हैं और कुछ नास्तिक हैं। जास्पर्स और सार्त्र के चिन्तन में दर्शन का मनुष्य से उतना संबंध नहीं है, जितना कि कीर्केगार्ड के दर्शन में दिखलाई पड़ता है। कीर्केगार्ड, जास्पर्स और मार्सेल ईश्वरवादी हैं। दूसरी ओर नीत्शे हाईडेगर और सार्त्र नास्तिक हैं।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. 'अस्तित्ववाद एक प्राचीन प्रणाली के लिए नया नाम है', यह परिभाषा है-
   (अ) डॉ. राधाकृष्णनन (ब) कीर्केगार्ड (स) ब्लैकहम (द) रॉस
2. कौन मानव को प्रकृति के द्वारा नियंत्रित न मानकर व्यक्ति की स्वतंत्रता की स्वतंत्रता पर बल देता है-
   (अ) प्रकृतिवादी (ब) अस्तित्ववादी (स) आदर्शवादी (द) प्रत्ययवादी
3. ब्रह्म, ईश्वर, आत्मा, जगत से भी ऊपर मानव को महत्व देते हैं-
   (अ) आदर्शवादी (ब) प्रकृतिवादी (स) अस्तित्ववादी (द) रॉस
4. 'प्रत्येक व्यक्ति आत्मनिष्ठ होकर ही अपने अन्दर के सम् (Being) को जान सकता है, यह रचनात्मक अनुभव है।' यह परिभाषा है-
5. (अ)आदर्शवाद (ब) प्रकृतिवाद (स) (अ)प्रत्ययवाद(द) अस्तित्ववाद
6. अस्तित्ववाद आदर्शवाद के विरूद्ध विद्रोह के रूप में खड़ा हुआ है-
   सत्य (ब) असत्य

6.4 अस्तित्ववादी शिक्षा(Existentialism Education)

अस्तित्ववादी शिक्षा के संबंध में पूर्ण आस्था तथा निश्चय के साथ यह नहीं कहा जा सकता है कि अमुक अस्तित्ववादी ने शिक्षा के संबंध में निश्चित ग्रन्थ या लेख में शैक्षिक विचारों को प्रकट किया है। बटलर ने कहा है कि ''अस्तित्ववादी दर्शन ने शिक्षा में कोई विशेष रूचि प्रकट नहीं की है।''

अतः जिन शैक्षिक निहितार्थो को यहां प्रस्तुत किया जा रहा है, वे अस्तित्ववादी विचारकों द्वारा निष्कर्षित नहीं किए गये हैं।

6.4.1 अस्तित्ववादी शिक्षा का अर्थ Meaning of Existentialism Education

अस्तित्ववादी विचारकों का मत है कि हम भौतिक वास्तविकताओं या सत्ताओं के जगत में निवास करते हैं तथा हमने इन सत्ताओं के विषय में उपयोगी तथा वैज्ञानिक ज्ञान का विकास कर लिया है,

लेकिन हमारे जीवन में सबसे महत्वपूर्ण पक्ष वैयक्तिक या अवैज्ञानिक है। इसलिए अस्तित्ववादी इस बात पर बल देते हैं कि सबसे महत्वपूर्ण एवं प्रमुख ज्ञान मानवीय दशाओं या चयनों से संबंधित है।

इस विचार के अनुसार शिक्षा वह प्रक्रिया है जो स्वतंत्रता के चयन के लिए चेतना विकसित करती है। शिक्षा हममें स्व-चेतना की भावना का निर्माण करती है। इसी के कारण हम मानव प्राणी कहने के अधिकारी हो जाते हैं।

6.4.2 अस्तित्ववादी मनोविज्ञान Existentialism Psychology

अस्तित्ववादी शैक्षिक चिन्तन, सीखने वाले के माध्यमिक तथा रजस्वला के उत्तरोत्तर काल पर बल देता है। अस्तित्ववादियों के अनुसार, जब बालक का जन्म होता है तब बालक के अस्तित्व को जन्म मिलता है। इसके बाद पूर्व अस्तित्व का पक्ष आता है। इस समय बालक अपने 'स्व' के प्रति चेतनशील नहीं होता है। इसके बाद 'अस्तित्ववादी आन्दोलन' आरम्भ होता है। इस समय व्यक्ति आकस्मिक रूप से अपने अस्तित्व के बारे में सचेत हो जाता है तथा यह भावना भी विकसित होती है कि पुनः अपनी बाल्यावस्था में जो कि 'स्व' की अज्ञानता का समय होता है। इस भावना को 'Pre-Existentialism Nostaligia' कहा जाता है। व्यक्ति इस भावना का बहादुरी के साथ सामना करता है। मनोवैज्ञानिक विचारधारा को निम्न रेखाचित्र से स्पष्ट किया जा रहा है-

अ	ब	स
Pre-Existentialism Phase		Existentialism Phase

(अ) जन्म (बालक का जन्म)

(ब) वह स्थिति जिसमें बाल्यवस्था की स्थिति को वापस नहीं लाया जा सकता है।

(स) मृत्यु

6.4.3 अस्तित्ववादी शिक्षा के उद्देश्य Objectives of Existentialism Education

अस्तित्ववाद का विश्वास है कि प्रत्येक व्यक्ति अद्भुत या अनोखा है। अतः शिक्षा को व्यक्ति में इस अनोखेपन को विकसित करना चाहिए। दूसरे शब्दों में, शिक्षा वैयक्तिक भेदों को संतुष्ट करे। शिक्षा का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति को अपने अद्भुत गुणों को विकसित करने के योग्य बनाना चाहिए। अर्थात् असमनुरूपता शिक्षा का एक वांछनीय गुण है।

सार्त्रे की विचारधारा के अनुसार मानव अनुभूति करने में सक्षम है। वह जो बनना चाहता है, बनने के लिए स्वतंत्र है। शिक्षा का उद्देश्य उसे अपने मूल्यों के चयन में सक्षम बनाना होना चाहिए। आज की शिक्षा में निम्न उद्देश्यों को सम्मिलित करके शिक्षा को एक नई दिशा प्रदान की जा सकती है-

a. स्वाभाविक वातावरण में शिक्षा देना।

b. प्रामाणिक अस्तित्व का निर्माण करना।
c. स्वानुभूतियों के अनुकूल व्यक्तित्व का विकास करना।
d. स्वतंत्रतापूर्वक मूल्यों के चयन के लिए प्रेरित करना।
e. उत्तरदायित्व की भावना का विकास करना।
f. व्यक्ति को जीवन के लिए तैयार करना।
g. स्वतंत्र एवं उत्तरदायित्वपूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण करना।
h. वैयक्तिता का विकास करना।

6.4.4 अस्तित्ववाद व पाठ्यक्रम Existentialism and Curriculum

अस्तित्ववादी पाठ्यक्रम की प्रस्तावना में आस्था नहीं रखते हैं। छात्र स्वयं अपने पाठ्यक्रम का चयन अपनी आवश्यकता, योग्यता तथा जीवन की परिस्थितियों के अनुकूल करे। यद्यपि वे ब्रह्माण्ड के विषय में मूलभूत ज्ञान प्रदान करने के पक्ष में नहीं हैं, फिर भी वे पाठ्यक्रम को उन सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा अन्य सामूहिक विषयों की अपेक्षा मानवीय अध्ययनों पर अधिक बल देते हैं। इन मानवीय अध्ययनों के माध्यम से मानव दुःख, चिन्ता तथा मृत्यु आदि के विषय में ज्ञान प्राप्त करता है। सार्त्रे की विचारधारानुसार मानविकी एवं सामाजिक विषयों को पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाए क्योंकि ये विषय व्यक्ति के रागात्मक पक्ष का विकास करके उसे इस जगत की वास्तविकताओं यथा-पीड़ा, व्यथा, प्रेम, घृणा, पाप, मृत्यु आदि से परिचित कराते हैं। इस प्रकार व्यक्ति जीवन में आने वाले सुख-दुःख के लिए तैयार हो जाता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

7. अस्तित्ववादी दर्शन ने शिक्षा में कोई विशेष रूचि प्रकट नहीं की है-
   (अ) बटलर (ब) सार्त्रे (स) ब्लैकहम (द) रॉस
8. ''शिक्षा हममें स्व-चेतना की भावना का निमार्ण करती है। इसी के कारण हम मानव प्राणी कहने के अधिकारी हो जाते हैं।'' यह विचारधारा है-
   (अ) अस्तित्ववाद (ब) प्रयोजनवाद (स) आदर्शवाद (द) प्रयोगात्मकवाद
9. स्वतंत्र एवं उत्तरदायित्वपूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण करना किसका उद्देश्य है-
   (अ) आदर्शवाद (ब) अस्तित्ववाद (स) प्रयोजनवाद (द) प्रयोगवाद
10. 'छात्र स्वयं अपने पाठ्यक्रम का चयन अपनी आवश्यकता, योग्यता तथा जीवन की परिस्थितियों के अनुकूल करें।'' यह विचारधारा है-
    (अ) प्रयोजनवाद (ब) प्रकृतिवाद (स) आदर्शवाद (द) अस्तित्ववाद
11. पीड़ा, व्यथा, प्रेम, घृणा, पाप, मृत्यु आदि वास्तविकताओं से परिचय कराता है-
    (अ) अस्तित्ववाद(ब) प्रयोजनवाद (स) प्रकृतिवाद (द) आदर्शवाद

6.4.5 अस्तित्ववाद व शिक्षक(Existentialism and Teacher)

अस्तित्ववादी विचारधारा में शिक्षक को आरोहण करने वाले व्यक्ति के रूप में नहीं देखा गया है। उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह विषय सामग्री को इस प्रकार प्रस्तुत करे कि बालक उसमें निहित सत्य को स्वतंत्र साहचर्य द्वारा खोज सके। शिक्षक बालक का मार्गदर्शन अवश्य करें, परन्तु छात्रों की क्षमताओं व योग्यताओं के अनुरूप प्रत्येक बालक का अपना 'स्व' होता है। शारीरिक, मानसिक तथा आंतरिकता से जो कुछ वह है, वही उसका व्यक्तित्व है। बालक का 'स्व' कुण्ठित न होने पाये। वह किसी बात को इसलिए स्वीकार न कर ले कि यह उसको स्वीकार करनी ही है। वरन् वह प्रत्येक बात का परीक्षण, आलोचना एवं जांच करके ही स्वीकार करे। शिक्षक छात्रों को अपनी आंतरिक भावनाओं के विषय में बातचीत करने के लिए प्रोत्साहित करे जिससे वे अपनी सत्ता को स्पष्ट कर सकें।

6.4.6 अस्तित्ववाद व विद्यार्थी Existentialism and Student

अस्तित्ववादी सीखने वाले व्यक्ति को महत्वपूर्ण स्थान देते हैं। ये सुव्यवस्थित व्यक्ति या सामंजस्यपूर्ण व्यक्तित्व पर बल नहीं देते हैं बल्कि व्यक्ति को अनिर्मित मानते हैं। वह स्वयं को निर्मित करने वाला है। वह स्वतंत्र रहकर अपने व्यक्तित्व को जीवन्त बनाना चाहता है। इस कारण सार्त्रे मनुष्य के उत्तरदायित्व को अधिक महत्वपूर्ण बनाता है। जिससे वह अपने मूल्यो को निर्मित कर सके। वस्तुतः अस्तित्ववादी शिक्षक-विद्यार्थी के बीच 'मैं-तू' के संबंध को स्थापित करने पर बल देता है।

6.4.7 अस्तित्ववाद व शिक्षण विधि Existentialism and Teaching Method

अस्तित्ववादी सुकराती उपागम का समर्थन करता है। वे इसी कारण 'शिक्षक-शिष्य' के मध्य मैं-तू' के संबंध स्थापित करने पर बल देते हैं। इस कारण वे विद्यालयी शिक्षा की अपेक्षा पारिवारिक शिक्षा को उपयुक्त मानते हैं। डब्ल्यू. आर.निबलैट का मत है कि अस्तित्ववादी समय-तालिका की बजाए पारस्परिक संपर्क पर अधिक बल देते हैं। सृजनात्मकता के लिए शिक्षा पर अस्तित्ववादी दार्शनिकों ने अधिक बल दिया है। इस कारण वे शिक्षण में व्यक्तिगत अवधान पर अधिक बल देते हैं।

सार्त्रे के अनुसार सच्चा ज्ञान वही है जो स्वयं मनुष्य द्वारा अर्जित किया जाये। अतः अस्तित्ववादी शिक्षा में 'करके सीखने के' सिद्धान्त पर बल दिया जाता है।

6.4.8 अस्तित्ववाद और विद्यालय Existentialism and School

अस्तित्ववादियों के अनुसार विद्यालय वह स्थान है जहां शिक्षक संवाद तथा विचार-विमर्श कर सकता है। यह विचार-विमर्श चयन तथा जीवन संबंधी मामलों कें संबंध में रहता है। इस स्थान पर विषयों के लिए विचार-विमर्श करने के लिए परिस्थितियों को निर्मित किया जा सकता है। विद्यालय में शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों प्रश्न पूछने, उत्तर सुझाने तथा संवादों में संलग्न रहने के अवसर प्राप्त करते हैं।

6.4.9 अस्तित्ववाद औरअनुशासन Existentialism and Discipline

सार्त्रे किसी भी आचार-संहिता को स्वीकार नहीं करता। वह बालक को पूर्ण स्तंत्रता प्रदान करता है। ऐसी परिस्थिति में यह संभव है कि असंख्य विद्यार्थी मनमानी करें और समाज में अव्यवस्था फैल जाये। सार्त्रे के अनुसार वैयक्तिक चेतना द्वारा इस समस्या को आसानी से सुलझाया जा सकता है। स्वतंत्र चयन से वैयक्तिक निर्वाह की क्षमता उत्पन्न होती है।

व्यक्ति जो कुछ चयन करेगा, शुभ होगा। इसी प्रकार अशुभ का चयन भी हो जाता है तो उसका भोक्ता वह स्वयं है। इस प्रकार चयन से वैयक्तिक दायित्व उत्पन्न होता है। इस उत्तरदायित्व भाव तथा स्वतंत्रता से परे कोई नैतिक गुण नहीं होता। इससे ही अनुशासन लाया जा सकता है। अस्तित्ववाद ऐसा दर्शन है जिसने क्रान्तिकारी विचारों से मानव के अस्तित्व को मिटते देखा और पुनः मानव प्रतिष्ठा को प्राप्त करने के लिए उसके न हो या उसे शिक्षित न किया जाये। आज के युग में मनुष्य के अस्तित्व की प्राथमिकता को बनाए रखते हुए अतिमानव के व्यक्तित्व की कल्पना उभारने का प्रयास अस्तित्ववाद ने किया है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

12. शिक्षक-विद्यार्थी के बीच 'मैं-तू' के संबंध को स्थापित करने पर बल देता है-
    (अ)प्रकृतिवादी (ब)प्रयोजनवादी (स)अस्तित्ववादी (द)आदर्शवादी
13. शिक्षण विधि में समय तालिका की बजाए पारस्परिक समर्पण पर अधिक बल देते हैं-
    (अ) अस्तित्ववादी(ब)प्रकृतिवादी(स) प्रयोजनवादी (द) आदर्शवादी
14. करके सीखने के सिद्धान्त पर बल देते हैं-
    (अ)प्रकृतिवादी (ब) अस्तित्ववादी(स)प्रयोजनवादी(द)आदर्शवादी
15. वैयक्तिकता का विकास संभव है-
    (अ) प्रकृतिवादियों द्वारा (ब)आदर्शवादियों द्वारा
    (स)प्रयोजनवादियों द्वारा (द)अस्तित्ववादियों द्वारा

6.5 सारांश

अस्तित्ववाद का विकास समकालीन सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक परिस्थितियों के विरूद्ध प्रतिक्रिया के रूप में हुआ, जिनमें मानव ने अपनी आत्मा खो दी है। इस दर्शन ने कला और साहित्य पर व्यापक प्रभाव डाला है। राजनीति में वह युद्ध के विरूद्ध है। उसके अनुयायी सक्रिय रूप से युद्ध का विरोध करते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में अस्तित्ववाद का योगदान अग्रलिखित हैं-

i. सम्पूर्ण विकास - अस्तित्ववादियों का लक्ष्य शिक्षा के द्वारा बालक के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास है। शिक्षा का सरोकार सम्पूर्ण मनुष्य से है। उसका लक्ष्य चरित्र निर्माण और आत्म-साक्षात्कार है।

ii. आत्मगत ज्ञान - विज्ञान के वर्तमान युग में वस्तुगत ज्ञान पर इतना अधिक जोर दिया जा रहा है कि आत्मगत शब्द अयथार्थ, व्यर्थ, अज्ञानपूर्ण और अप्रांसगिक के लिए प्रयोग किया जाता है। अस्तित्ववादियों ने यह दिखलाया कि आत्मगत ज्ञान वस्तुगत ज्ञान से भी अधिक महत्वपूर्ण उनका कहना है कि सत्य आत्मगत है। वह मानव मूल्य है और मूल्य तथ्य नहीं होते। मूल्यों में आस्था कम होती है। अस्तु, विज्ञान और गणित का शिक्षा के साथ-साथ शिक्षा के प्रत्येक स्तर पाठ्यक्रम में मानविकी अध्ययनों, कला और साहित्य को उपयुक्त स्थान दिया जाना चाहिए। आधुनिक मनुष्य की अनेक परेशानियां अत्यधिक वस्तुगत दृष्टिकोण के कारण हैं। इसके लिए अस्तित्ववादी विचारों के प्रकाश में आत्मगत सुधार जरूरी है।

iii. परिवेश का महत्व - वर्तमान औद्योगिक, आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक परिवेश मूल्यहीन हैं। अस्तु, वह सब प्रकार की अस्तव्यस्तता, भ्रष्टाचार, तनाव और संघर्ष बढ़ाता है। अस्तित्ववादियों ने एक ऐसे परिवेश जुटाने की बात की, जिसमें आत्म-विकास और आत्म-चेतना संभव हुए। विद्यालय में इस परिवेश के लिए मानविकी अध्ययनों, कला और साहित्य की शिक्षा दी जानी चाहिए। इनसे शिक्षार्थी में वैयक्तिकता का विकास होगा और वह सामाजिक पहिये का एक पुर्जा मात्र बनकर नहीं रहेगा। दूसरी ओर वह आत्म-चेतन और संवेदनशील व्यक्ति बनेगा।

अस्तित्ववाद के उपरोक्त योगदान के बावजूद एक जीवन दर्शन के रूप में उसने संतुलित विचार उपस्थित नहीं किए । उसकी प्रतिभा के बावजूद उसमें अनेक मानसिक रोग के लक्षण दिखलाई पड़ते हैं। आधुनिक अस्तित्ववाद के जनक कीर्के-गार्ड के दर्शन में अनेक असामान्य तत्व हैं। वास्तव में यदि सत्य वस्तुगत नहीं है तो आत्मगत भी नहीं है। बुद्धिवाद के विरूद्ध अस्तित्ववाद का विद्रोह महत्वपूर्ण होते हुए भी अत्यधिक सीमित है। नैतिक और धार्मिक शिक्षा के क्षेत्र में अस्तित्ववादी प्रणालियां अधिक उपयोगी होते हुए भी वे विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में उपयोगी नहीं हैं। संक्षेप में, शिक्षा के क्षेत्र में अस्तित्ववादी शिक्षा की सीमाएं निम्नलिखित हैं:-

i. शिक्षा का अस्तित्ववादी लक्ष्य अत्यधिक एकांगी है।

ii. मानविकी अध्ययनों, कला और साहित्य पर अत्यधिक जोर देना उतना ही एकांकी है, जितना कि विज्ञान कीशिक्षा पर अत्यधिक जोर देना।

iii. आत्म-साक्षात्कार के जोश में अस्तित्ववादी यह भूल जाते हैं कि जीविकोपार्जन भी शिक्षा का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य है। इस दृष्टि से शिक्षा का उपयोगितावादी लक्ष्य भी महत्वपूर्ण है।

iv. अस्तित्ववादी अध्यापन प्रणाली नैतिक और धार्मिक शिक्षा में महत्वपूर्ण हो सकती है, किन्तु वह विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अध्यापन में महत्वपूर्ण नहीं है।

शिक्षा के क्षेत्र में अस्तित्ववाद के उपयोग और सीमाओं के उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि वह शिक्षा के क्षेत्र में कुछ महत्वपूर्ण कमियों को पूरा करता है।

6.6 शब्दावली

1. अस्तित्ववाद - अस्तित्ववाद आधुनिक समाज तथा परम्परागत दर्शन की कुछ विशेषताओं के विरूद्ध एक आन्दोलन है। यह अंशतः ग्रीक की विवेकशीलता या शास्त्रीय-दर्शन के विरोध स्वरूप प्रकट हुआ।
2. प्रकृतिवाद - प्रकृतिवादी दर्शन के अनुसार मानव व्यक्तिगत प्राकृतिक नियमों से नियंत्रित होता है और वह किसी प्रकार की स्वतंत्रता नहीं रखता। दूसरी ओर अस्तित्ववादियों ने मानव को प्रकृति के द्वारा नियंत्रित न मानकर व्यक्तित्व की स्वतंत्रता की स्थापना की है।
3. अस्तित्ववादी अनुशासन - सार्त्रे किसी भी आचार संहिता को स्वीकार नहीं करता। वह बालक को पूर्ण स्वतंत्रता देता है। वह जो कुछ चयन करेगा शुभ होगा। इस प्रकार अशुभ का चयन भी हो जाता है तो उसका भोक्ता वह स्वयं है।

6.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. (अ)डॉ. राधाकृष्णन
2. (ब)अस्तित्ववाद
3. (स)अस्तित्ववाद
4. (द)अस्तित्ववाद
5. (अ)सत्य
6. (अ)बटलर
7. (अ) अस्तित्ववाद
8. (ब) अस्तित्ववाद
9. (द) अस्तित्ववाद
10. (अ)अस्तित्ववाद
11. (स)अस्तित्ववाद
12. (अ) अस्तित्ववाद
13. (ब)अस्तित्ववाद
14. (द) अस्तित्ववाद

6.8सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।
2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।

6.9निबंधात्मक प्रश्न

1. अस्तित्ववाद का अर्थ बताते हुए अस्तित्ववाद और शिक्षा में संबंधों को स्पष्ट कीजिए।
2. अस्तित्ववाद की विशेषताओं का विस्तृत वर्णन कीजिए।
3. अस्तित्ववाद की दो परिभाषाएं दीजिए व अस्तित्ववादी शिक्षा के उद्देश्यों की व्याख्या कीजिए।
4. अस्तित्ववाद में पाठ्यक्रम व शिक्षण विधि की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
5. अस्तित्ववादी शिक्षा से आप क्या समझते हैं। अस्तित्ववाद में शिक्षक की भूमिका की स्पष्ट व्याख्या कीजिए।
6. अस्तित्ववाद पर एक आलोचनात्मक लेख लिखिए।

इकाई-7 : महात्मा गाँधी Mahatma Gandhi

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 गाँधी जी के दार्शनिक विचार
 7.3.1 गाँधी जी के सर्वोदय दर्शन की तत्वमीमांसा
 7.3.2 गाँधी जी के सर्वोदय दर्शन की ज्ञानमीमांसा
 7.3.3 गाँधी जी के सर्वोदय दर्शन की मूल्यमीमांसा
7.4 महात्मा गाँधी के शैक्षिक विचार
 7.4.1 शिक्षा का संप्रत्यय
 7.4.2 शिक्षा के उद्देश्य
 7.4.3 शिक्षा का पाठ्यक्रम
 7.4.4 शिक्षण की विधियाँ
 7.4.5 अनुशासन
 7.4.6 शिक्षक
 7.4.7 शिक्षार्थी
 7.4.8 विद्यालय
 7.4.9 बेसिक शिक्षा
 7.4.10 बेसिक शिक्षा गुण
 7.4.11 बेसिक शिक्षा के दोष
7.5 सारांश
7.6 शब्दावली
7.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
7.8 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
7.9 निबंधात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

भारत के निर्माण में महात्मा गाँधी के योगदान को ध्यान में रखते हुये उन्हें सम्मान देने हेतु राष्ट्रपिता की उपाधि से नवाजा गया। गाँधी जी की विचारधारा आदर्शवादी विचारधारा से मेल खाती है। गाँधी

जी की शिक्षा के क्षेत्र में अद्वितीय देने है। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने भरतीय जीवन को दृष्टि में रखते हुये वतावरण के अनुसार ऐसी शिक्षा योजना प्रस्तुत की जिसको कार्य रूप में परिणत करने से भरतीय समाज में नया जीवन आने की सम्भावना है, गाँधी जी समस्त भारतीय नागरिकों को शिक्षित बनाना चाहते थे, शिक्षित होने से उनका तात्पर्य यह नही था कि वे केवल साक्षर बन कर रह जाएँ , क्योंकि गाँधी जी साक्षरता को शिक्षा का दर्जा नहीं देते थे। वे इसे ज्ञान या ज्ञान का माध्यम ही मानते थे।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

1. महात्मा गाँधी के दार्शनिक विचारों को स्पष्ट कर पाएंगे ।
2. महात्मा गाँधी के अनुसार शिक्षा के संप्रत्यय का वर्णन कर सकेंगे।
3. महात्मा गाँधी के शैक्षिक विचारों को अपने शब्दों को व्यक्त कर सकेंगे।
4. महात्मा गाँधी के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन कर सकेंगे।
5. महात्मा गाँधी की बेसिक शिक्षा की विशेषताएँ लिख सकेंगे।

7.3 गाँधी जी के दार्शनिक विचार(PhilosophicalThoughts of GandhiJi)

महात्मा गाँधी का जन्म 2 अक्टूबर, 1869 को गुजरात प्रान्त के पोरबन्दर नामक नगर में हुआ था। इनका पूरा नाम मोहन दास कर्मचन्द गाँधी था। इनके पिता कर्मचन्द गाँधी पोरबन्दर के दीवान थे। गाँधी जी की माता, पुतली बाई बड़ी नम्र तथा दयालु महिला थी। गाँधी जी अपने पारिवारिक वातावरण से काफी प्रभावित हुये।गाँधी जी ने अपने परिवार से में वैष्णव धर्म में शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने अपनी बाल्यावस्था में 'मनुस्मृति' का अनुवाद पढ़ लिया था। वे प्रतिदिन गीता पढ़ा करते थे। प्राथमिक एंव माध्यमिक शिक्षा पूर्ण करने के पश्चात मात्र 19 वर्ष की अवस्था में 4 सितम्बर 1888 को वकालत पढ़ने के लिए वे इंग्लैण्ड चले गये।

इन्होंने इंग्लैण्ड में बाईबल(Bible) व लाईट ऑफ एशिया (Light of Asia) पढ़ी तथा एनी बेसन्ट के साथ अच्छा समय व्यतीत किया। इस सब के आधार पर उनके धार्मिक व दार्शिनिक चिार बने, परन्तु उनका जीवन दर्शन मूलतः गीता पर आधारित था। वे गीता को 'गीता माता' कहते थे।गाँधी जी ने नया दर्शन प्रतिपादित नहीं किया। उन्होंने भारतीय दर्शन दर्शन के मूल तत्वों को वास्तविक रूप दिया। अपने वास्तविक रूप में यह हमें गाँधी जी की अन्तर्दृष्टि के बारे में बताता है, जो कि गाँधी का दर्शन, गाँधीवाद या सर्वोदय दर्शन के नाम से जाना जाता हैं।

अब आप यहाँ गाँधी जी के सर्वोदय दर्शन की तत्वमीमांसा, ज्ञानमीमांसा व मूल्य मीमांसा के विषय में पढ़ेगें।

7.3.1गाँधी जी के सर्वोदय दर्शन की तत्वमीमांसा

Metaphysics of Philosophical Thoughts of Gandhiji

गाँधी जी गीता की इस बात से सहमत थे कि मूल तत्व दो हैं- पुरूष (ईश्वर) और प्रकृति (पदार्थ) और इनमें ईश्वर श्रेष्ठ है। गाँधी जी ने ईश्वर की श्रेष्ठता को दो तथ्यो द्वारा स्पष्ट किया हैं। पहला कि ईश्वर प्रकृति के कण-कण में विद्यमान है परन्तु प्रकृति ईश्वर में विद्यमान नहीं है, दूसरा ईश्वर ही संसार का सृजक है पालनहार है और विनाशकर्ता भी है। उन्होंने ईश्वर को परम सत्य के रूप को माना, गाँधी जी ने माना कि ईश्वर अपरिवर्तनशील है। अतः वह सत्य है, और प्रकृति परिवर्तनशील है अतः असत्य है।

गाँधी जी आत्मा को परमात्मा का अशं मानते थे, और चूँकि परमात्मा सत्य है, तो आत्मा भी सत्य है। गाँधी जी मनुष्य को शरीर, मन व आत्मा का योग मानते थें, उसके जीवन का परम उद्देश्य आत्मज्ञान, ईश्वर प्राप्ति और मोक्ष प्राप्ति है।

7.3.2 गाँधी जी के सर्वोदय दर्शन की ज्ञानमीमांनसा

Epistemology and Logic of Philosophical thoughts of Gandhiji

गाँधी जी ने ज्ञान को दो वर्गो में बाँटा है भौतिक ज्ञान व आध्यात्मिक ज्ञान, भौतिक ज्ञान में उन्होंने भौतिक जगत व मनुष्य जीवन के विभिन्न पक्षों (सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक) को रखा है, और आध्यात्मिक ज्ञान में उन्होंने ब्रह्माण्ड की तत्वमीमांसा, आत्मा, परमात्मा को रखा है , गाँधी जी के अनुसार मनुष्य को दोनों प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता है। भौतिक ज्ञान, भौतिक जगत के लिए आवश्यक है। और आध्यात्मिक ज्ञान आत्म ज्ञान, ईश्वर प्राप्ति व मोक्ष प्राप्ति के लिए आवश्यक है। गाँधी जी अनुसार भौतिक ज्ञान की प्राप्ति ज्ञानेन्द्रियों द्वारा की जा सकती है तथा आध्यात्मिक ज्ञान की प्राप्ति गीता के पाठ, भजन व सत्संग द्वारा की जा सकती है।

7.3.3 गाँधी जी के सर्वोदय दर्शन की मूल्यमीमांसा

Axiology and Ethics of Philosophical thoughts of Gandhiji

गाँधी जी ने मनुष्य को शरीर, मन व आत्मा का योग माना, उनके अनुसार मानव जीवन का परम उद्देश्य मोक्ष प्राप्ति है। उन्होंने इसको मुक्ति कहा, परन्तु उन्होंने पहले भौतिक विकास कर मनुष्य को भौतिक अभावों से मुक्त होने पर बल दिया। मुक्ति के लिए गाँधी जी ने गीता के अनाशक्ति योगो को श्रेष्ठ माना है और भौतिक विकास के लिए श्रम, नैतिकता और चरित्र के महत्व को स्वीकार किया है। इन दोनों की प्राप्ति कि लिए गाँधी जी ने 'एकादश व्रत' के अनुसरण पर बल दिया है।

(सत्य, अहिंसा,अभय, अस्तेय, अपरिगृह ,अस्वाद, अस्पृश्यता निवारण, श्रम,सर्वधर्म, सम्भाव विनम्रता और ब्रह्मचर्य), गाँधी जी ने इन्हें मानव जीवन का मूल्य माना है।

गाँधी जी के जीवन के प्रमुख आर्दश व मूल्य निम्न हैं-

सत्य- गाँधी जी के अनुसार सत्य, साध्य एंव साधन दोनों है। गाँधी जी के अनुसार मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति है। और ईश्वर को प्राप्त करने का सबसे अच्छा साधन केवल एक ही है- सत्य।

साध्य रूप में सत्य वह है जिसका अस्तित्व है जिसका कभी अन्त नही होता अर्थात ईश्वर और साधन के रूप में सत्य से गाँधी जी का तात्पर्य सत्य विचार, सत्य आचरण व सत्य भाषण से हैं। गाँधी जी के लिए ईश्वर व सत्यमें कोई अन्तर नही था। गाँधी जी ने अपने सम्पूर्ण जीवन सत्य की खोज में ही व्यतीत किया।

अहिंसा- अहिंसा गाँधी जी की दार्शनिक विचारधारा का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व है। उनका विश्वास था कि सत्य का पालन केवल अहिंसा द्वारा ही सम्भव है। सत्य और अहिंसा को एक दूसरे से अलग करना प्रायः असम्भव है, यह एक सिक्के के दो पहलू है। अतः गाँधी जी ने सत्य और अहिंसा को एक दूसरे से सम्बन्धित मानते हुये इस बात पर बल दिया कि यदि जीवन का लक्ष्य उस सत्य रूपी ईश्वर को प्राप्त करना है तो उसकी प्राप्ति का साधन अहिंसा है। गाँधी जी के अनुसार अहिंसा का अर्थ है- समस्त प्राणियो के प्रति बुरी भावना, द्वेष का अभाव, अंहिसा अपने सक्रिय रूप में जीवन के प्रति सदभावना है यह शुद्व प्रेम है।

निर्भयता- निर्भयता का अर्थ स्पष्ट करते हुये गाँधी जी ने कहा है कि निर्भयता का अर्थ है समस्त भय से मुक्ति। गाँधी जी को विश्वास था कि बिना निर्भयता के सत्य तथा अहिंसा का पालन करना असम्भव है। जैसे बीमारी का भय, शारीरिक चोट तथा मृत्यु का भय, सम्पत्ति विहीन होने का भय, प्रतिष्ठा खोने का भय, अपने प्रियजन की मृत्यु का भय, अनुचित कार्य करने का भय इत्यिादि।

सत्याग्रह- सत्याग्रह का शाब्दिक अर्थ है सत्य के प्रति आग्रह, सत्य का अनुसरण करना एवं कराना। गाँधी जी के अनुसार सत्याग्रह शब्द का अर्थ है -सत्य का दृढ़ अवलम्बन, उन्होंने इसको आत्मबल के नाम से भी पुकारा है। यह सिद्वान्त सत्य तथा प्यार पर आधारित है इसके अन्तर्गत विरोधी को कष्ट नहीं दिया जाता अपितु स्वयं को कष्ट देकर विरोधी को सत्य का समर्थन कराया जाता है। सत्याग्रह के प्रयोग के प्रारम्भिक स्तरों पर उन्होंने यह खोज की कि सत्य का अनुसरण इस बात की आज्ञा नहीं देता कि कोई व्यक्ति अपने विरोधी पर बल का प्रयोग करें, इसके विपरीत उसे धैर्य और सहानुभूति से उनको गलत मार्ग से हटाना चाहिये। कारण यह है कि जो बात एक व्यक्ति को सत्य मालूम होती है, वह दूसरे को असत्य मालूम हो सकती है।

गाँधी जी के अनुंसार प्रत्येक मनुष्य को इन आदर्शो को अनुसरण करना चाहिये। वह व्यक्ति को इन आदर्शों का अनुसरण करेगा सभी मनुष्यों के हित के बारे में सोचेगा वह सच्चे अर्थो में सर्वोदयी बनेगा, गाँधी जी के विचार से ऐसा व्यक्ति ही जीवन में सुख व शान्ति की प्राप्ति कर सकता है। उसे ही आत्म ज्ञान व ईश्वर की प्राप्ति होगी।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. महात्मा गाँधी का जन्म कब और कहाँ हुआ?
2. गाँधी जी का दर्शन किस नाम से जाना जाता है?
3. गाँधी जी के अनुसार दो मूल तत्व कौन से हैं?
4. गाँधी जी ने ज्ञान को किन दो वर्गो में बाँटा है?
5. गाँधी जी अनुसार भौतिक ज्ञान की प्राप्ति ज्ञानेन्द्रियो द्वारा की जा सकती है।
6. गाँधी जी ने मनुष्य को ...., ... व .... का योग माना है।
7. गाँधी जी के जीवन के प्रमुख आदर्शों व मूल्यों के नाम लिखिए।

7.4 महात्मा गाँधी के शैक्षिक विचार (Educational Thoughts of Mahatma Gandhi)

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ना सिर्फ एक राजनीतिज्ञ ही थे बल्कि वे एक महान धार्मिक विश्लेषण कर्ता, समाज सुधारकव शिक्षाविद भी थे। गाँधी जी ने देश की राजनैतिक उन्नति की अपेक्षा सामाजिक उन्नति को अधिक आवश्यक समझा। उन्होंने तत्कालीन शिक्षा में सुधार हेतु कई सुझाव दिए।

गाँधी जी के अनुसार,''जो शिक्षा चित की शुद्धि न कर, निर्वाह का साधन न बनाए तथा स्वतंत्र रहने का हौसला और सामर्थ्य न उपजाए, उस शिक्षा में चाहे जितनी जानकारी का खजाना हो, तार्किक कुशलता और भाषा पांडित्य समाहित हो, वह सच्ची शिक्षा नहीं''। यद्यपि गाँधी जी शिक्षा विषय पर कोई ग्रंथ या पुस्तक नहीं लिखी, परन्तु समय-समय पर अपने विचार सभाओं में तथा 'हरिजन' नामक पत्रिका के अनेक लेखों में व्यक्त किए हैं।

गाँधी जी शिक्षा को मनुष्य का जन्म सिद्ध अधिकार माना और उसको किसी भी अन्य प्रकार के विकास की भाँति ही आवश्यक माना है। यही कारण है कि उन्होंने चौदह वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए नि:शुल्क व अनिवार्य शिक्षा पर बल दिया। उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि यह शिक्षा अंग्रेजी माध्यम में नहीं दी जा सकती, यह केवल मातृभाषा द्वारा ही दी जा सकती है। गाँधी जी ने

अंग्रेजी को ऐसी भाषा माना जो कि मानसिक दासता (Mental Slavery)उत्पन्न करती है। वह चाहते थे कि शिक्षा मनुष्य को आत्म-निर्भर बनाए और उसको जीविकोपार्जन करने योग्य बनाए, अत: उन्होंने हस्तशिल्प की शिक्षा पर विशेष बल दिया।

इस शैक्षिक दर्शन के आधार पर गाँधी जी ने राष्ट्रीय शिक्षा का रूप निर्धारित किया और उसको 'बेसिक शिक्षा' नाम दिया।

अब आप गाँधी जी के शैक्षिक विचारों का निम्नवत अध्ययन करेंगे।

7.4.1 शिक्षा का संप्रत्यय Concept of Education

गाँधी जी साक्षरता को शिक्षा नहीं मानते थे। गाँधी जी के अनुसार,''साक्षरता न तो शिक्षा का अन्त है और न आरम्भ। यह केवल एक साधन है जिसके द्वारा पुरूष तथा स्त्री को शिक्षित किया जा सकता है।''

"Literacy is not the end of education nor even the beginning. It is the only one of the means whereby men and women can be educated."

उनका विश्वास था कि शिक्षा को बालक की समस्त शक्तियों का विकास करना चाहिए जिससे वह पूर्ण मानव बन जाये। पूर्ण मानव का अर्थ बालक के व्यक्तित्व के चारों तत्वों-शरीर, हृदय, मन तथा आत्मा के समुचित विकास से है। गाँधी जी के अनुसार शिक्षा का कार्य लिखना, पढ़ना या गणना करना, सिखना नहीं हैं, बल्कि मनुष्य के शरीर, मस्तिष्क व हृदय का विकास करना है।

गाँधीजी के अनुसार,''शिक्षा से मेरा तात्पर्य है – बालक और मनुष्य के शरीर, मस्तिष्क और आत्मा में पाये जाने वाले सर्वोत्तम गुणों का चहुँमुखी विकास।''

According to Gandhi ji – "By education I mean an all round drawing out of the best, in child and man-body, mind and spirit."

7.4.2 शिक्षा के उद्देश्य Aims of Education

गाँधी जी ने सभी पक्षों को ध्यान में रखा और शिक्षा को उसी के अनुसार कई दृष्किोणों से देखा। 'स्वावलम्बन' उनकी शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य था। प्राचीन भारतीय दर्शन की भॉति 'सा विद्या या विमुक्तये' गाँधी जी का आदर्श था। वह व्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ उसे एक सामाजिक प्राणी के रूप में भी देखते हैं।

गाँधी जी के अनुसार, मानव जीवन का परम उद्देश्य मोक्ष है। उन्होंने मोक्ष को वृहद रूप में लिया है। उन्होंने आध्यात्मिक मुक्ति से पहले, भौतिक, मानसिक, आर्थिक व राजनैतिक मुक्ति की बात कही, उनका तर्क था कि जब तक मनुष्य शारीरिक व भौतिक कमजोरी, मानसिक दवाब, आर्थिककमी

तथा राजनैतिक दासता से मुक्त नहीं हो जाता, वह आध्यात्मिक मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकता। यही वह कारण है जिसके लिए वे मनुष्य के शरीर, मस्तिष्क व आत्मा के उच्चतम विकास को प्रभावित करना चाहते थे।

अब आप गाँधी जी के अनुसार शिक्षा के उद्देश्यों का निम्नवत अध्ययन करेंगे –

i. **शारीरिक विकास (Physical Development)**– मनुष्य जीवन का कोई भी उद्देश्य क्यों न हो उसकी प्राप्ति तभी संभव है जब शरीर स्वस्थ हो। अत: शरीरका स्वस्थ विकास सबसे पहले होना चाहिए। गाँधी जी ने इसे महत्वपूर्ण माना है।

ii. **मानसिक एवं बौद्धिक विकास (Mental and Intellectual Development)** – गाँधी जी के अनुसार शरीर के साथ-साथ मन तथा आत्मा का विकास भी आवश्यक है। शिक्षा द्वारा बालक का मानसिक विकास होना चाहिए।

iii. **जीविकोपार्जन का उद्देश्य (Vocational Aim)** –गाँधी जी शिक्षा में आत्मनिर्भरता से सिद्धान्त के प्रबल समर्थक थे। वे चाहते थे कि प्रत्येक बालक नियमित शिक्षा प्राप्त करें किसी व्यवसाय के द्वारा अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं कर सकें। आर्थिक आभाव से मुक्त होनेके उद्देश्य पर बल दिया। वे प्रत्येक मनुष्य को आत्मनिर्भर बनाना चाहते थे और उन्होंने हस्तशिल्प उद्योग की शिक्षा पर बल दिया। उन्होंने यह स्पष्ट रूप से कहा कि बालक को बेसिक शिक्षा द्वारा जीविकोपार्जन करने योग्य बनाना, शिक्षा का उद्देश्य है

iv. **वैयक्तिक एवं सामाजिक विकास (Individual and social Development)**गाँधी जी ने मनुष्य के दोनों प्रकार के विकास पर बल दिया, वैयक्तिक विकास एवं सामाजिक विकास। गाँधी जी वैयक्तिक विकास को व्यक्ति, समाज और राष्ट्र, सभी के विकास के लिए आवश्यक मानते थे। इनके अनुसार वैयक्तिक विकास ही आध्यात्मिक विकास है, और आध्यात्मिक विकास के लिए सामाजिक विकास आवश्यक है। सामाजिक विकास से उनका तात्पर्य था प्रेम एवं सहयोग से जीना सीखना। उनका मानना था कि संपूर्ण मानव जाति से प्रेम करने व सेवा करने से ही आध्यात्मिक विकास संभव है। इस प्रकार गाँधीजी ने वैयक्तिक एवं सामाजिक उद्देश्यों को संश्लेषित किया।

v. **सांस्कृतिक विकास (Cultural Development)** – गाँधी जी के अनुसार, संस्कृति आत्मा से संबंधित है और वह स्वयं को मनुष्य के व्यवहार में परिलक्षित करती है। उन्होंने संस्कृति को जीवन का आधार माना है। उन्होंने मनुष्य के व्यवहार को नियंत्रित करने के लिए सांस्कृतिक विकास को महत्वपूर्ण माना है अत: इसे शिक्षा का उद्देश्य माना और कहा "मैं शिक्षा के सांस्कृतिक पक्ष को उसके साहित्यिक पक्ष से अधिक महत्वपूर्ण समझता हूँ। अत: मानव के प्रत्येक व्यवहार पर संस्कृति की छाप होनी चाहिए"।

vi. **नैतिक तथा चारित्रिक विकास (Moral and Character development)** –गाँधी जी समस्त शिक्षा को चरित्र निर्माण की कसौटी पर कसते हैं, उनका मानना है कि,शिक्षा का

एक उद्देश्य चरित्र निर्माण भी है। उन्होंने बच्चों में सत्य, अहिंसा, अभय, अस्तेय, अपरिग्रह आदि गुणों के विकास को महत्व दिया। इस संबंध में उन्होंने अपनी आत्मकथा में लिखा है – ''मैंने सदैव हृदय की संस्कृति, अथवा चरित्र निर्माण को प्रथम स्थान दिया है। उनके अनुसार सभी ज्ञान का अन्त वैयक्तिक शुद्धि एवं चरित्र निर्माण है।

vii. **आध्यात्मिक विकास (Spiritual Development)** – गाँधी जी के अनुसार, मानव जीवन का अंतिम उद्देश्य मुक्ति, आत्म-बोध, स्वयं का ज्ञान है। उनके अनुसार शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जोकि मनुष्य को सांसारिक बन्धनों से मुक्त करें, उसकी आत्मा को उत्तम जीवन की ओर प्रवृत्त कर सकें, संक्षेप में, गाँधी जी शिक्षा के द्वारा आत्म विकास के लिए आध्यात्मिक स्वतंत्रता दिलाना चाहते थे।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

8. गाँधी जी ने किस आयु वर्ग के बच्चों के लिए नि:शुल्क व अनिवार्य शिक्षा पर बल दिया?
9. गाँधी जी ने किस माध्यम में शिक्षा देने की बात कही?
10. गाँधी जी ने .... हस्तशिल्प की शिक्षा पर विशेष बल दिया।
11. गाँधी जी की राष्ट्रीय शिक्षा किस नाम से जानी जाती है?
12. गाँधी जी के अनुसार शिक्षा की परिभाषा दीजिए।

7.4.3शिक्षा का पाठ्यक्रम (Curriculum of Education)

गाँधी जी, देश के मूलभूत आवश्यकताओं से परिचित थे। उन्होंने देश की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए तथा एक वर्ग रहित समाज के निर्माण हेतु, क्रिया-प्रधान पाठ्यक्रम पर बल दिया। गाँधी जी की शिक्षा योजना को बेसिक शिक्षा की संज्ञा दी जाती है। इस शिक्षा का पाठ्यक्रम क्रिया-प्रधान है, तथा इसका उद्देश्य बालक को कार्य, प्रयोग एंव खोज के द्वारा उसकी शारीरिक,मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों का विकास करना है जिससे की वे अपना जीवोकोपार्जन कर, आत्मनिर्भर बनें एवं समाज का उपयोगी अंग बन जाएँ ।

उन्होंने हस्तशिल्प एवं कुटीर उद्योग को बेसिक शिक्षा में प्रमुख स्थान दिया। शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु निम्नलिखित क्रिया प्रधान पाठ्यक्रम का निर्माण किया गया।

a. हस्तशिल्प और उद्योग (बुनाई, कताई, बागवानी, कृषि, काष्ठकारी, चर्म उद्योग, मत्स्य पालन)।
b. मातृ भाषा
c. हिन्दुस्तानी भाषा
d. व्यवहारिक गणित
e. सामाजिक विषय – इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र।

f. सामान्य विज्ञान – बागवानी, वनस्पति विज्ञान, प्राणि विज्ञान, रसायन विज्ञान, गृह विज्ञान, भौतिक विज्ञान।
g. संगीत
h. स्वास्थ-विज्ञान (स्वच्छता, व्यायाम, खेलकूद)
i. चित्रकला
j. नैतिक शिक्षा

इस पाठ्यक्रम में हस्तशिल्प एवं उद्योग को प्रमुख स्थान दिया गया, इनके लिए 3 घण्टे 20 मिनट का समय निर्धारित किया गया था।

इस पाठ्यक्रम में अंग्रेजी भाषा तथा धार्मिक शिक्षा को कोई स्थान नहीं दिया गया है, सिर्फ नैतिक शिक्षा को स्वीकृत किया, जिसमें सभी धर्मों का सार निहित है।बेसिक शिक्षायोजना का पाठ्यक्रम 7 से 14 वर्ष तक के बालक व बालिकाओं के लिए निर्धारित किया गया। पाँचवी कक्षा तक सह-शिक्षा लागू रहेगी। इसके उपरान्त यद्यपि बालक-बालिकाओं के लिए पाठ्यक्रम समान है, फिर भी बालिकाओं के लिए सामान्य विज्ञान के स्थान पर गृह-विज्ञान की शिक्षा की व्यवस्था की गई।

7.4.4 शिक्षण की विधियाँ Methods of Teaching

गाँधी जी मनुष्य को शरीर, मन एवं आत्मा का योग मानते थे, उनके अनुसार इन सभी का सम्मिलित विकास आवश्यक है। उन्होंने क्रिया को महत्वपूर्ण स्थान दिया। गाँधी जी के उद्देश्य प्रचलित शिक्षा के उद्देश्यों से भिन्न थे। उन्होंने स्थानीय उद्योगों को शिक्षा का केन्द्र बिन्दु माना। इस दृष्टि से गाँधी जी की शिक्षण-पद्धति प्रचलित शिक्षण-विधियों से भिन्न थी।

अब आप गाँधी जी द्वारा दी गई शिक्षण विधियों का अध्ययन करेंगे।

i. **अनुकरण विधि (Imitation Method)**- गाँधी जी के अनुसार, अनुकरण करना बच्चे की प्राकृतिक प्रवृत्ति है। प्रारंभ में वे अनुकरण द्वारा ही सीखते हैं, अत: उन्हें इस विधि द्वारा सीखना चाहिए। गाँधी जी के अनुसार, बच्चों को अच्छा आचरण सिखाने की यह सर्वोत्त्म विधि है। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि माता-पिता एवं शिक्षकों को बच्चों के साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करना चाहिए और उनके साथ सदा वही आचरण करना चाहिए जैसे आचरण की अपेक्षा वे बच्चों से करते हैं। ऐसे प्रेमपूर्ण तथा विनम्रता पूर्ण आचरण का अनुकरण कर बच्चे सदाचरण करेंगे।
ii. **स्वानुभव द्वारा सीखने की विधि (Learning by self-Experience)** – गाँधी जी ने किसी भी ज्ञान अथवा कौशल को स्वयं करके, स्वयं के अनुभव से सीखने पर बल दिया। गाँधी जी के अनुसार, स्वयं के अनुभव द्वारा सीखा गया ज्ञानस्थायी होता है तथा जीवनपरन्त सफलता प्रदान करता है।

iii. **क्रिया विधि (Activity Method)** –गाँधी जी ने यह स्पष्ट कर दिया कि क्रिया करना बालक की प्राकृतिक प्रवृत्ति है, वह निरन्तर किसी ना किसी क्रिया में संलग्न रहते हैं, बालक के मानसिक विकास के लिए प्रशिक्षण आवश्यक है, इसलिए गाँधी जी ने करके सीखने पर बल दिया और बेसिक शिक्षा को हस्तकला केन्द्रित (Craft Centered)बनाया।

iv. **सहसंबंध विधि (Correlation Method)** –समस्त विषयों को एक दूसरे से संबंधित करके पढ़ाने की विधि को सहसंबंध विधि या सानुबन्धित विधि कहते हैं। गाँधी जी के अनुसार इस विधि के अंतर्गत बच्चे अपने जीवन की वास्तविक क्रियाओं में भाग लेते हैं और अपने आप सीख जाते हैं, इस प्रकार शारीरिक एवं मानसिक क्रियाओं को संश्लेषित कर बच्चों को वास्तविक जीवन के लिए तैयार किया जाता है। वे एक परिस्थिति में सीखे गए ज्ञान को दूसरी परिस्थति में उपयोग लाते हैं।

v. **मौखिक विधि (Oral Method)** – मौखिक विधि में व्याख्यान, प्रश्नोत्तर, वाद-विवाद इत्यादि आते हैं। बच्चे जिज्ञासु होते हैं, वे प्रश्न पूछते हैं, उनके प्रश्नों के तत्काल उत्तर देकर उनकी जिज्ञासा को शान्त करना चाहिए। परन्तु इस विधि का प्रयोग करते समय ये ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे शारीरिक और मानसिक दोनों तरह से कक्षा में उपस्थित रहें।

vi. **श्रवण-मनन-निधिध्यासन विधि (Listening, Thinking and Practice Method)**– श्रवण, मनन और निदिध्यासन विधि हमारी प्राचीन विधि है। इस विधि बालक पहले अपने शिक्षक द्वारा उपदेश सुनते हैं, फिर इस पर चिन्तन करते है और फिर अभ्यास करते हैं। वैसे भी उस ज्ञान का कोई अर्थ नहीं है जो हमारे वास्तविक जीवन में सहायक बन हमारा विकास न करें। गाँधी जी ने इस विधि की उपयोगिता को धर्म और दर्शन जैसे विषयों को पढ़ाने के लिए स्वीकार किया है।

7.4.5 अनुशासन Discipline

गाँधी जी अनुशासन को बहुत महत्व देते थे। उनके अनुसार सच्चा अनुशासन आंतरिक अभिप्रेरणा से आता है। गाँधी जी दमनात्मक अनुशासन के विरोधी थे। उनके अनुसार अनुशासन प्रभावात्मक तरीके से ही स्थापित किया जा सकता है। वे प्रभावात्मक अनुशासन के समर्थक थे। गाँधी जी ने बच्चे को प्राकृतिक और उच्च सामाजिक वातावरण देने पर बल दिया। उनके अनुसार ऐसे वातावरण में बच्चे उच्च आदर्श एवं उच्च आचरण सीखते हैं। गाँधी जी आत्मनियंत्रण द्वारा आत्मानुशासन चाहते थे। गाँधी जी के शिक्षक को बच्चों के समक्ष आदर्श आचरण प्रस्तुत करना चाहिए जिससे कि बच्चे उसका अनुकरण कर उस आचरण को आत्मसात करें।

7.4.6शिक्षक Teacher

गाँधी जी के विचार से शिक्षक एक आदर्श व्यक्ति होना चाहिए, वह ज्ञान का पुंज और सत्य आचरण करने वाला होना चाहिए, गाँधी जी के अनुसार एक शिक्षक, आदर्श शिक्षक तभी बन सकता है जब कि वह अपने व्यवसाय को समाज सेवा के रूप में स्वीकार करें। एक शिक्षक कई भूमिका निभानी

होती है। शिक्षक को बच्चे का मित्र और मार्गदर्शक होना चाहिए। उसे मैत्रीपूर्ण ढंग से बालक के मानोभावों के प्रति प्रतिक्रिया करनी चाहिए।

7.4.7 शिक्षार्थी Student

गाँधी जी शिक्षा व्यवस्था का केन्द्र शिक्षार्थी है। गाँधी जी के अनुसार विद्यार्थी को अनुशासित रहना चाहिए और ब्रहाचर्य का पालन करना चाहिए। गाँधी जी बच्चों को उनके व्यक्तिगत विकास हेतु पूर्ण स्वतंत्रता देने के समर्थक हैं, परन्तु उनके सामाजिक और आध्यात्मिक विकास को ध्यान में रखते हुए। बच्चों को आत्मनिर्भर बनानेके लिए गाँधी जी ने प्रारंभ से ही उनके शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास में बल दिया। गाँधी जी बच्चे को जिज्ञासु, उत्साही एवं आत्मबल रखने वाला बनाना चाहते थे।

7.4.8विद्यालय School

विद्यालय को लेके गाँधी जी के विचार नीवन थे/ उनके अनुसार विद्यालय एक ऐसी कार्यशला होना चाहिए जहाँ शिक्षक समर्पित होकर कार्य करें। जहाँ कि शिक्षक और शिक्षार्थी के संयुक्त प्रयत्न से इतना उत्पादन किया जा सके जिससे कि वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन सकें। इन्होंने विद्यालयों को सामूदायिक केन्द्र बनाने पर बल दिया। उनके अनुसार विद्यालयों को समुदाय में विभिन्न गतिविधियाँ करानी चाहिए और लोगों को वहॉ पढ़ने और काम करने की सुविधा होनी चाहिए। विद्यालयों को प्रौढ़ शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए और रात में पाठशाला लगाने की व्यवस्था भी करनी चाहिए। समुदाय को विद्यालयों को विभिन्न क्रियाओं में सहायता करनी चाहिए और विद्यालय को समुदाय के लिए सहायक होना चाहिए।

7.4.9बेसिक शिक्षाBasic Education

तत्कालीन शिक्षा के दोषों के निराकरण तथा अपने शैक्षिक प्रयोगों को राष्ट्रीय शिक्षा योजना का रूप देने के लिए स्वतंत्रता के साथ-साथ गाँधी जी ने शैाक्षिक सुधार हेतु भी कार्य किए। अक्टूबर 1937 को वर्धा में राष्ट्रीय शिक्षा संगोष्ठी (The National Education conference)हुई, जिसमें गाँधी जी ने राष्ट्रीय शिक्षा योजना का प्रतिपादन किया, जिसे कि बेसिक शिक्षा कहा जाता है। इसे वर्धा योजना, नयी तालीम और बुनियादी शिक्षा के नाम से भी जाना जाता है।

अब आप बेसिक शिक्षा के प्रस्तावों को पढ़ेंगे –

i. 7 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के सभी बच्चों के लिए अनिवार्य एवं निशुल्क शिक्षा दी जाएगी।
ii. शिक्षा का माध्यम मातृ भाषा होगी।
iii. संपूर्ण शिक्षा स्थानीय हस्तकला पर आधारित होगी।
iv. हस्तकला का चयन बच्चों की क्षमता और क्षेत्रीय आवश्यकताओं के आधार पर किया जाएगा।

v. बच्चों द्वारा बनाई गई वस्तुओं का उपयोग किया जाएगा और उससे अर्जित आर्थिक लाभ विद्यालय के व्यय में उपयोग लाया जाएगा।
vi. हस्तकलाएं इस प्रकार सिखाई जाएँ जिससे की बच्चे आत्मनिर्भर बनें।
vii. आर्थिक महत्व के साथ-साथ हस्तकालाओं की शिक्षा को सामाजिक एवं वैज्ञानिक महत्व भी दिया जाए।

7.4.10बेसिक शिक्षा के गुण Merits of Basic Education

सैद्धान्तिक तौर पर यह योजना उपयोगी लगती है, परन्तु वास्तविकता में यह उपयोगी नहीं है।

i. **सर्वांगीण विकास**- बेसिक शिक्षा ने बालक के शारीरिक, मानसिक, समाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक एवं चारित्रिक विकास में बल दिया।
ii. **सामाजिक और राष्ट्रीय एकता-** धर्म, जाति और व्यवसाय के आधार पर समाज कई वर्गों में बटा है। बेसिक शिक्षा ने सभी को समान अवसर शिक्षा प्रदान कर वर्ग भेद को हटाया।
iii. **भारतीयता की छाप-** बेसिक शिक्षा सच्चे अर्थों में भारतीय है। इसमें मातृ-भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाया और अंग्रेजी को कोई स्थान नहीं दिया।
iv. क्रिया आधारित शिक्षण विधियाँ- बेसिक शिक्षा में स्वानुभव द्वारा सीखने के अवसर प्रदान किए गये। इसमें स्वयं करके सीखने के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के आधार पर शिक्षा दी जाती है।
v. **वास्तविक जीवन से संबंधित**- बेसिक शिक्षा ग्रामीण उद्योगों में अनिवार्य करने के लिए बनी थीं। बेसिक शिक्षा कृषि, पशु-पालन, ग्रामीण उद्योग एवं हस्तकला की शिक्षा द्वारा शिक्षार्थी को जीविकोपार्जन के योग्य बनाती है। बेसिक शिक्षा बालक की क्रियात्मक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित करके उसकी उत्पादन क्षमता को बढ़ाती है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में इसका बड़ा महत्व है।

7.4.11बेसिक शिक्षा के दोष Demerits of Basic Education

जैसा कि पहले कहा जा चुका है बुनियादी शिक्षा में उपरोक्त गुणों के होते हुए भी कुछ ऐसे मौलिक दोष हैं जिनके कारण उसे व्यवहार रूप में परिणित नहीं किया जा सका।

i. बेसिक शिक्षा को राष्ट्रीय योजना कहा जाता है परन्तु यह केवल अनिवार्य और निशुल्क शिक्षा की योजना है, इसमें केवल ग्रामीण बच्चों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखा गया ना कि शहरी बच्चों की। बेसिक शिक्षा केवल ग्रामीण परिवेश तक ही सिमित है।
ii. बेसिक शिक्षा 7 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के बच्चों के लिए है। इसका पाठ्यक्रम इसी आयु वर्ग एवं ग्रामीण बच्चों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर निर्मित किया गया है। यह

माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा से संबंधित नहीं है। यह उच्च शिक्षा के लिए उपयुक्त आधार नहीं है।

iii. बेसिक शिक्षा में बच्चों को तरह-तरह की हस्तकला सिखाने में कच्चे माल का उपयोग अपव्यय है।

iv. रतवर्ष गरीब देश है और यहाँ प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य व निशुल्क होनी चाहिए, परन्तु इसके लिए बालकों से अनिवार्य रूप से उत्पादन कराना उचित नहीं जान पड़ता।

v. बेसिक शिक्षा में हस्तकला पर आवश्यकता से अधिक जोर दिया गया, जिससे अन्य विषय उपेक्षित रह गए। इसमें पाठ्य-पुस्तकों को महत्व नहीं दिया जाता जिससे बालक उनके लाभ से वंचित रह जाता है।

vi. बेसिक शिक्षा, भारत की मौलिक शिक्षा है, परन्तु इसमें धार्मिक शिक्षा को सम्मिलित नहीं किया गया है केवल नैतिक शिक्षा को ही सम्मिलित किया गया है। गाँधी जी को भय था कि धार्मिक शिक्षा वैमनस्य को बढा़वा दे सकती है।

गाँधी जी सर्वोदय दर्शन के समर्थक थे। वे एक वर्ग रहित समाज की स्थापना करना चाहते थे। गाँधी जी की शिक्षा के क्षेत्र में अद्वितीय देन है। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने भारतीय जीवन को दृष्टि में रखते हुए ऐसी शिक्षा योजना प्रस्तुत की जिसको कार्य रूप में परिणत करने से भारतीय समाज में एक नया जीवन आने की संभावना है। उन्होंने के विस्तृत उद्देश्य निर्धारित किए,और व्यापक पाठ्यक्रम का निर्माण किया। गाँधी जीकेदर्शन में प्रकृतिवाद, आदर्शवादतथा प्रयोजनवाद की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है।

डॉ० एम०एस० पटेल ने भी इसी आशय की पुष्टि करते हुए लिखा है –

“दार्शनिक के रूप में गाँधी जी की महानता इस बात में है कि उनके शिक्षा-दर्शन में प्रकृतिवादी, आदर्शवाद और प्रयोजनवाद की मुख्य प्रवृत्तियॅा अलग और स्वतंत्र नहीं हैं वरन् वे सब मिलजुलकर एक हो गई हैं, जिससे ऐसे शिक्षा-दर्शन का जन्म हुआ है जो आज की आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त होगा तथा मानव आत्मा की सर्वोच्च अकांक्षाओं को संतुष्ट करेगा।”

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

13. गाँधी जी ने............... पाठ्यक्रम पर बल दिया।
14. गाँधी जी ने हस्तशिल्प एवं कुटीर उद्योग को बेसिक शिक्षा में प्रमुख स्थान दिया। (सत्य/असत्य)
15. गाँधी जी द्वारा दी गयी शिक्षण विधियों के नाम लिखिए।
16. गाँधी जी .... अनुशासन के समर्थक थे।

17. गाँधी जी अनुसार सच्चा अनुशासन आंतरिक अभिप्रेरणा से आता है।(सत्य/असत्य)
18. गाँधी जी के अनुसार शिक्षक को बच्चे का मित्र और मार्गदर्शक होना चाहिए। (सत्य/असत्य)
19. गाँधी जी शिक्षा व्यवस्था का केन्द्र .... है।
20. गाँधी जी के अनुसार विद्यालय एक .... होना चाहिए।
21. बेसिक शिक्षा को और किन मनामों से जाना जाता है?

7.5सारांश

गाँधी जी ने नया दर्शन प्रतिपादित नहीं किया। उन्होंने भारतीय दर्शन दर्शन के मूल तत्वों को वास्तविक रूप दिया।गाँधी जी गीता की बात से सहमत थे कि मूल तत्व दो हैं- पुरूष (ईश्वर) और प्रकृति (पदार्थ) और इनमें ईश्वर श्रेष्ठ है। गाँधी जी आत्मा को परमात्मा का अशं मानते थे, और चूँकि परमात्मा सत्य है, तो आत्मा भी सत्य है। गाँधी जी मनुष्य को शरीर, मन व आत्मा का योग मानते थें, उसके जीवन का परम उद्देश्य आत्मज्ञान, ईश्वर प्राप्ति और मोक्ष प्राप्ति है।

गाँधी जी ने ज्ञान को दो वर्गो में बाँटा है भौतिक ज्ञान व आध्यात्मिक ज्ञान, गाँधी जी के अनुसार मनुष्य को दोनो प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता है। भौतिक ज्ञान भौतिक जगत के लिए आवश्यक है और आध्यात्मिक ज्ञान आत्म ज्ञान, ईश्वर प्राप्ति व मोक्ष प्राप्ति के लिए आवश्यक है। गाँधी जी के जीवन के प्रमुख आर्दश हैं सत्य, अहिंसा, निर्भयता एवं सत्याग्रह।गाँधी जी के अनुसार सत्य, साध्य एंव साधन दोनो है। गाँधी जी के लिए ईश्वर व सत्यमें कोई अन्तर नही था। गाँधी जी ने अपने सम्पूर्ण जीवन सत्य की खोज में ही व्यतीत किया।अहिंसा गाँधी जी की दार्शनिक विचारधारा का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व है। गाँधी जी के अनुसार निर्भयता का अर्थ है समस्त भय से मुक्ति। गाँधी जी को विश्वास था कि बिना निर्भयता के सत्य तथा अहिंसा का पालन करना असम्भव हैं। गाँधी जी के अनुसार सत्याग्रह शब का अर्थ है -सत्य का दृढ़ अवलम्बन, उन्होंने इसको आत्मबल के नाम से भी पुकारा है।

गाँधी जी शिक्षा को मनुष्य का जन्म सिद्ध अधिकार माना और उसको किसी भी अन्य प्रकार के विकास की भाँति ही आवश्यक माना है। गाँधी जी साक्षरता को शिक्षा नहीं मानते थे। गाँधी जी के अनुसार,‘’साक्षरता न तो शिक्षा का अन्त है और न आरम्भ। यह केवल एक साधन है जिसके द्वारा पुरूष तथा स्त्री को शिक्षित किया जा सकता है।‘’ गाँधी जी, देश के मूलभूत आवश्यकताओं से परिचित थे। उन्होंने देश की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए तथा एक वर्ग रहित समाज के निर्माण हेतु, क्रिया-प्रधान पाठ्यक्रम पर बल दिया। गाँधी जी की शिक्षा योजना को बेसिक शिक्षा की संज्ञा दी जाती है। इस शिक्षा का पाठ्यक्रम क्रिया-प्रधान है, तथा इसका उद्देश्य बालक को कार्य, प्रयोग एंव खोज के द्वारा उसकी शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों का विकास करना है।

गाँधी जी अनुशासन को बहुत महत्व देते थे। उनके अनुसार सच्चा अनुशासन आंतरिक अभिप्रेरणा से आता है। गाँधी जी के विचार से शिक्षक एक आदर्श व्यक्ति होना चाहिए, वह ज्ञान का पुंज और सत्य आचरण करने वाला होना चाहिए। गाँधी जी शिक्षा व्यवस्था का केन्द्र शिक्षार्थी है।विद्यालय को लेके गाँधी जी के विचार नीवन थे। उनके अनुसार विद्यालय एक ऐसी कार्यशला होना चाहिए जहाँ शिक्षक समर्पित होकर कार्य करें। जहाँ कि शिक्षक और शिक्षार्थी के संयुक्त प्रयत्न से इतना उत्पादन किया जा सके जिससे कि वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन सकें।

तत्कालीन शिक्षा के दोषों के निराकरण तथा अपने शैक्षिक प्रयोगों को राष्ट्रीय शिक्षा योजना का रूप देने के लिए स्वतंत्रता के साथ-साथ गाँधी जी ने शैक्षिक सुधार हेतु भी कार्य किए।गाँधी जी सर्वोदय दर्शन के समर्थक थे। वे एक वर्ग रहित समाज की स्थापना करना चाहते थे। गाँधी जी की शिक्षा के क्षेत्र में अद्वितीय देन है।

7.6 शब्दावली

1. तत्वमीमांसा- वास्तविकता का विज्ञान
2. ज्ञानमीमांसा- ज्ञान का विज्ञान
3. मूल्यमीमांसा- मूल्य का विज्ञान
4. 4.सत्याग्रह- सत्य के प्रति आग्रह।

7.7स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. महात्मा गाँधी का जन्म 2 अक्टूबर, 1869 को गुजरात प्रान्त के पोरबन्दर नामक नगर में हुआ।
2. गाँधी का दर्शन, गाँधीवाद या सर्वोदय दर्शन के नाम से जाना जाता हैं।
3. गाँधी जी के अनुसार दो मूल तत्व -पुरूष (ईश्वर) और प्रकृति (पदार्थ) है।
4. गाँधी जी ने ज्ञान को दो वर्गो में बाँटा है भौतिक ज्ञान व आध्यात्मिक ज्ञान।
5. ज्ञानेन्द्रियोंशरीर, मन व आत्मा
6. गाँधी जी के जीवन के प्रमुख आदर्शों व मूल्यों हैं- सत्य, अहिंसा, निर्भयता एवं सत्याग्रह।
7. 7 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के सभी बच्चों के लिए अनिवार्य एवं निशुल्क शिक्षा पर बल दिया।
8. गाँधी जी ने मातृभाषा के माध्यम में शिक्षा देने की बात कही।
9. हस्तशिल्प
10. गाँधी जी की राष्ट्रीय शिक्षा ‘बेसिक शिक्षा के नाम से जानी जाती है।

11. गाँधीजी के अनुसार,''शिक्षा से मेरा तात्पर्य है – बालक और मनुष्य के शरीर, मस्तिष्क और
12. आत्मा में पाये जाने वाले सर्वोत्तम गुणों का चहुँमुखी विकास।''
13. क्रिया –प्रधान
14. सत्य
15. गाँधी जी द्वारा दी गयी शिक्षण विधियाँ निम्न हैं-
    i. अनुकरण विधि
    ii. स्वानुभव द्वारा सीखने की विधि
    iii. क्रिया विधि
    iv. सहसंबंध विधि
    v. मौखिक विधि
    vi. श्रवण-मनन-निधिध्यासन विधि
16. प्रभावात्मक
17. सत्य
18. सत्य
19. शिक्षार्थी
20. कार्यशाला
21. बेसिक शिक्षा को वर्धा योजना, नयी तालीम और बुनियादी शिक्षा के नाम से भी जाना जाता है।

7.8 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. लाल एण्ड पलोड, एजुकेशनल थॉट एण्ड प्रैक्टिस, आर0लाल प्रकाशन ,मेरठ।
2. पाण्डा, अनिल कुमार, (2011) शिक्षा दर्शन, साहित्य रत्नालय्, कानपुर।
3. सक्सेना, एन0आर0 स्वरूप, शिखा चतुर्वेदी (2010) उदीयमान भारतीय समाज मे6 शिक्षक, आर लाल प्रकाशन, मेरठ।
4. एलैक्स शीलू मैरी,(2008) शिक्षा दर्शन, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. ओड, एल0के0, शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, राजस्थान ग्रंथ अकादमी।
6. Sharma, Principles of Education, Laxmi Narain Agarwal educational Publication, Agra.

7.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. गाँधी जी के अनुसार शिक्षा का अर्थ क्या है? गाम्धी जी के अनुसार शिक्षा के उद्देश्यों को वर्णित कीजिए।
2. गाँधी के अनुसार शिक्षा के पाठ्यक्रम को स्पष्ट कीजिए।
3. गाँधी जी के जीवन के प्रमुख आर्दश व मूल्यों की व्याख्या कीजिए।
4. शैक्षिक उदेश्यों और पाठ्यक्रम के विषय में गाँधी जी के विचारों का वर्णन कीजिये।
5. शिक्षण विधियों के विषय में गाँधी जी के विचारों का वर्णन कीजिये।
6. बेसिक शिक्षा के गुण एवं दोषों को लिखिए।

इकाई-8 रवीन्द्रनाथ टैगोर
Rabindranath Tagore

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 टैगोर का शिक्षा दर्शन
8.3.1 टैगोर का जीवन परिचय एवं शिक्षा
8.3.2 टैगोर का का व्यावहारिक जीवन एवं गतिविधियां
8.3.3 आत्मशिक्षा के सिद्धान्त
8.4 रवीन्द्रनाथ टैगोर का विश्वबोध दर्शन
8.4.1 टैगोर के जीवन दर्शन में विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं का संश्लेषण
8.4.2 शिक्षा के उद्देश्य
8.4.3 पाठ्यक्रम
8.4.4 शिक्षण पद्धति
8.4.5 अनुशासन
8.5 टैगोर के शिक्षा दर्शन का मूल्यांकन व योगदान
8.6 सारांश
8.7 शब्दावली
8.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
8.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
8.10 निबन्धात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

भारतीय शिक्षा शास्त्रियों में रवीन्द्रनाथ टैगोर का अपना द्वितीय स्थान है। डॉ. एस. सिन्हा के अनुसार- रवीन्द्रनाथ टैगोर का जीवन आधुनिक भारत के पूरे युग में फैला हुआ है। उनके व्यक्तिव विकासमें नव जागरण की मुख्य बाते पायी जाती है।उनके सामाजिक दर्शन का सही ज्ञान भारतीय लोगों में नूतन इतिहास का पर्याप्त ज्ञान का समावेश करता है। बड़े भारतीय जन-समूह की निरक्षरता पश्चिम के

लोगों के साथ बहुत ही विशेष प्रकट करती है। शिक्षा के द्वारा निरक्षरता का निवारण उनके जीवन की एक प्रबल इच्छा बनी।

इस प्रकार के अद्वितीय व्यक्तित्व के कारण टैगोर अपने को एक महान कवि, साहित्यकार, समाज सुधारक और दार्शनिक के रूप में सीमित न रख सके बल्कि अपने महान विचारों के कारण भारत की जनता को प्रगति के पथ पर अग्रसर करने के लिए एक महान शिक्षा शास्त्री, शिक्षा विशेषज्ञ और शिक्षक के रूप में हमारे लिए वरदान सिद्ध हुए।

8.2 उद्देश्य

1. रवीन्द्रनाथ टैगोर की शिक्षा दर्शन का अध्ययन।
2. टैगोर के आत्मशिक्षा के सिद्धान्त का अध्ययन।
3. रवीन्द्रनाथ टैगोर के विश्वबोध दर्शन का अध्ययन
4. टैगोर के जीवन दर्शन में विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं का संश्लेषण का ज्ञान।
5. रवीन्द्रनाथ टैगोर की शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण पद्धति, अनुशासन का ज्ञान।
6. टैगोर का शिक्षा दर्शन में योगदान।

8.3 टैगोर का शिक्षा दर्शन (Tagore's Philosophy of Education)

टैगोर के शिक्षा दर्शन का विकास (Tagore's Development of Philosophy Education)
टैगोर ने अपने जीवन दर्शन के विकास के साथ-साथ शिक्षा दर्शन का भी विकास किया। अतः उनके जीवन दर्शन के विकास में जिन तत्वों का प्रभाव पड़ा उन्हीं तत्वों का प्रभाव उनके शिक्षा दर्शन के विकास में भी पड़ा। टैगोर के शिक्षा दर्शन के निर्माण पर उनके परिवार का विशेष प्रभाव पड़ा जो कि सभी प्रकार के प्रगतिशील विचारों एवं कार्यो और विभिन्न राजनैतिक, सामाजिक, तथा सांस्कृतिक, धार्मिक आन्दोलनों का केन्द्र था।
श्री एस.सी. सरकार ने इस तथ्य की खोज करते हुए लिखा है- उन्होंने स्वयं ही शिक्षा के उन सभी सिद्धान्तों की खोज की, जिनका आगे चलकर उन्हें अपने लिए प्रतिपादन करना था। इसके अतिरिक्त टैगोर ने अपनी तीव्र बुद्धि द्वारा प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञानों का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर लिया था, जिनका कि उनके शिक्षा दर्शन के निर्माण में पर्याप्त प्रभाव पड़ा। इस प्रकार टैगोर के विकास में अनेक महत्वपूर्ण बातों का प्रभाव पड़ा।

8 .3.1 टैगोर का जीवन-परिचय एवं शिक्षा (Tagore's Life and Education)

रवीन्द्रनाथ टैगोर का जन्म बंगाल के ख्यातिप्राप्त, सुसभ्य, सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत परिवार में सन् 1861 में कलकत्ता में हुआ था। उनके पिता का नाम महर्षि देवेन्द्र नाथ टैगोर था। उस समय उनका

परिवार अपनी समृद्ध, कला एवं संगीत के लिए सारे बंगाल में प्रसिद्ध था। टैगोर को अपने माता-पिता से विद्वता, देशभक्ति, धर्मप्रियता, साधुता आदि गुण उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हुए हैं। इनके पिता इन्हें एक साथ गायक, वैज्ञानिक, दार्शनिक, डॉक्टर, साहित्यिक सभी कुछ बना देना चाहते थे। इनका जीवन नौकरों के संरक्षण में व्यतीत हुआ, जो इन्हें घर की चार-दीवारी में रखते थे, जिसके कारण उनमें प्रकृति के प्रति प्रेम जागृत हो गया।

शिक्षा (Education)

प्रारम्भ से ही स्कूलों में गलत शिक्षा पद्धति व अध्यापक के तानाशाही व्यवहार के कारण ये स्कूल में न पढ़ सके। घर पर ही बड़े भाई देवेन्द्रनाथ टैगोर व अन्य शिक्षकों की देख-रेख में उन्होंने अंग्रेजी, संगीत, साहित्य, कुश्ती-व्यायाम, इतिहास, भूगोल, गणित आदि की शिक्षा प्राप्त की।

इसके अतिरिक्त टैगोर का परिवार स्वयं समाज के सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक एवं राष्ट्रीय कार्य का एक केन्द्र था, जिसका बालक टैगोर के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ा और उसमें राष्ट्रीय भावना का बीज बो दिया गया। इस प्रकार सोलह वर्ष तक अस्त-व्यस्त ढंग से शिक्षा ग्रहण करने के उपरान्त सन् 1869 में टैगोर उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु इंग्लैण्ड गये। वहां से विचार परिवर्तन करने के कारण लंदन चले गये किन्तु वहां किसी विद्यालय में प्रवेश नहीं लिया और घर वापस आ गये। लेकिन कुशाग्र बुद्धि तथा भावुक हृदय होने के कारण टैगोर ने अपनी जन्मजात प्रतिभा को और अधिक विकसित कर लिया।

8 .3.2 टैगोर का व्यावहारिक जीवन एवं गतिविधियां (Practical Life and Activities of Tagore)

सन् 1881 में जब वे इंगलैण्ड से स्वदेश लौटे तो उनका व्यावहारिक जीवन और भी अधिक व्यावहारिक हो गया। उन्होंने सर्वप्रथम भारत लौटकर सामाजिक, जातीय एवं राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर लेखक के रूप में अपना व्यावहारिक जीवन प्रारम्भ किया। शुरू में वे सन् 1881 तक मासिक पत्रिका 'भारती' में तथा इसके बाद सन् 1891 से 1894 ई. तक 'साधना' नामक पत्रिका में अपने लेख देते रहे। 'गीतांजली' उनके सबसे प्रमुख रचना थी, जिस पर उन्हें नोबल पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। अपने विचारों का प्रसार करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण कार्य 'शान्ति निकेतन' की स्थापना सन् 1901 में की, जिसे आज हम 'विश्व भारती विश्वविद्यालय' के नाम से संबोधित करते हैं।

शान्ति निकेतन में उन्होंने घरेलू उद्योग, ग्राम स्वायत्त शासन, सहकारिता, प्रारंभिक एवं प्रौढ़ शिक्षा का विकास, ग्रामोद्धार, कृषि विश्वविद्यालय, प्रयोगशाला, पुस्तकालय आदि के लिए आध्यात्मिक अनुभूति की ओर कदम बढ़ाये। सन् 1912 से 1916 तक उन्होंने विश्व भ्रमण किया और सर्वत्र विश्व शान्ति एकता एवं मातृत्व का संदेश दिया। सन् 1915 में ब्रिटिश सरकार ने 1916 में उन्हें नाइटहुड की उपाधि प्रदान की। सन् 1941 में इनकी मृत्यु हो गयी।

8 .3.3 आत्म-शिक्षा के सिद्धान्त

आत्म-शिक्षा आत्म-साक्षात्कार पर आधारित है। आत्म-साक्षात्कार की प्रक्रिया शिक्षा की प्रक्रिया के समान आजीवन चलती रहती है। इसमें सबसे अधिक आवश्यक यह है कि शिक्षार्थी को स्वयं अपने में विश्वास हो और अपनी बाह्य आत्मा के मूल में अधिक व्यापक वास्तविक आत्मा के अस्तित्व में विश्वास हो। शिक्षा की प्रक्रिया में वे सब क्रियायें सहायक हो सकती हैं जिनमें आनन्द की स्वाभाविक अनुभूति मिलती है। यह आनन्द आत्मा की प्रतिक्रिया है और इसलिए सुख अथवा संतोष मात्र से भिन्न है। रवीन्द्र की आत्म-शिक्षा-व्यवस्था में शिक्षार्थी को निम्नलिखित तीन कार्यात्मक सिद्धान्तों को सीखकर उनका प्रयोग करना होता है।

i. स्वतंत्रता - रवीन्द्र ने अपनी शिक्षा प्रणाली में शिक्षार्थियों को सब प्रकार की स्वतंत्रता दी है। उन्होंने बुद्धि, हृदय, और संकल्प अथवा ज्ञान, भक्ति और कर्म की स्वतंत्रता पर विशेष जोर दिया है। इस स्वतंत्रता को प्राप्त करने के लिए शिक्षार्थी को निष्कामभाव, समानता, समन्वय और संतुलन का अभ्यास करना आवश्यक है। इससे वह सत्य और असत्य, स्वाभाविक और कृत्रिम, प्रासंगिक और अप्रासंगिक, स्थायी और अस्थायी, सार्वभौम और व्यक्तिगत तथा विशाल और संकुचित में अंतर कर सकता है तथा सत्य और स्वाभाविक, प्रासंगिक, शाश्वत, समन्वित और विश्वगत तत्वों को ग्रहण कर सकता है। एक बार यह सामर्थय उत्पन्न होने के बाद शिक्षार्थी स्वयं अपना निर्देशन कर सकता है। वह स्वयं यह जान सकता है कि कौन-कौन से अनुभव और क्रियायें उसके मार्ग में बाधक हैं और कौन से साधक हैं। रवीन्द्र के अनुसार स्वतंत्रता का अर्थ स्वाभाविकता है। दूसरे शब्दों में, जब बुद्धि, भावना और संकल्प स्वाभाविक रूप से विस्तृत हों तो उसे स्वतंत्रता की स्थिति कहा जा सकता है। इस प्रकार स्वतंत्रता अनियंत्रण से भिन्न है। वह आत्म-नियंत्रण है। वह 'स्व' के अनुसार आचरण करना है। इस प्रकार की स्वतंत्रता एक बार प्राप्त हो जाने पर फिर मार्ग-भ्रष्ट होने का खतरा नहीं रहता, क्योंकि उसकी इंद्रियां, बुद्धि, संवेग, अनुभूतियां और सभी शक्तियां उसके अपने 'स्व' के आदेश पर चलती हैं।

ii. पूर्णता - आत्म-शिक्षा का दूसरा कार्यात्मक सिद्धान्त पूर्णता है। इसके अनुसार प्रत्येक शिक्षार्थी को अपने व्यक्तित्व के सभी पहलुओं और अपनी सभी शक्तियों का पूर्ण विकास करना चाहिए। इस दृष्टि से शिक्षा का लक्ष्य व्यावसायिक निपुणता प्राप्त करना, परीक्षा में सफल होना अथवा डिग्रियां लेकर सामाजिक सम्मान प्राप्त करना नहीं है। शिक्षा का एक मात्र लक्ष्य बालक के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास है। यह पूर्ण विकास तभी संभव हो सकता है, जबकि व्यक्तित्व के सभी पहलुओं पर समुचित जोर दिया जाए, न किसी पर आवश्यकता से अधिक बल दिया जाए।

iii. सार्वभौमिकता - व्यक्ति का विकास तब तक पूर्ण नहीं हो सकता, जब तक कि वह अपने अंदर उपस्थित विश्वात्मा को प्राप्त न कर ले। इसके लिए व्यक्तिगत आत्मा का विश्वात्मा से

तादाम्य करना पड़ता है। इस विश्वात्मा के अस्तित्व में आस्था शिक्षा की पहली शर्त है। शिक्षा का उद्देश्य कोरा विकास मात्र न होकर एक नया जन्म है, जिससे व्यक्ति अपने सीमित व्यक्तित्व से ऊपर उठकर विश्वात्मा से एक हो जाता है। इस विश्वात्मा को न केवल व्यक्तिगत जीवन में, बल्कि अपने चारों ओर के प्राकृतिक जीवन में भी खोजा जाता है। यह खोज ज्ञान, भक्ति और कर्म तीनों के ही माध्यम से होती है। एक बार इस विश्वात्मा का साक्षात्कार हो जाने पर फिर इसके निर्देशन में आगे बढ़ना सरल हो जाता है।

iv. उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रवीन्द्र नाथ टैगोर की शिक्षा-प्रणाली में शिक्षा का लक्ष्य स्वतंत्रता, पूर्णता और व्यापकता प्राप्त करना है। शिक्षा की प्रक्रिया के द्वारा शिक्षा एक ऐसे परिवेश का निर्माण करती है, जिसमें बालक के व्यक्तित्व का उन्मुक्त, पूर्ण और अत्यधिक व्यापक विकास संभव होता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. रवीन्द्रनाथ टैगोर का जन्म किस वर्ष में हुआ था?
2. नोबेल पुरस्कार उन्हें किस रचना पर प्राप्त हुआ था?
3. शान्ति निकेतन (विश्व भारती) की स्थापना किस वर्ष हुई?
   (अ) 1901 (ब) 1902 (स) 1903 (द) 1904
4. गुरूदेव के कार्यक्रम किस क्षेत्र पर आधारित है?

8.4 रवीन्द्रनाथ टैगोर का विश्वबोध-दर्शन

रवीन्द्रनाथ टैगोर ने परमात्मा को विश्व की सर्वोच्च शक्ति के रूप में मानकर संसार के समस्त प्राणियों में अद्वैत-भावना का संचार किया। समस्त विश्व को उन्होंने एक दृष्टि से देखा। इन्होंने अपने बचपन में ही वेद और उपनिषद पढ़ डाले थे। उपनिषदों के तत्व ज्ञान का इन पर गहरा प्रभाव पड़ा। मूलतः वे उपनिषदों के पृष्ठपोषक थे, परन्तु इन्होंने उपनिषदीय चिन्तन को मानवीय दृष्टि से देखा-समझा और उसी के अनुरूप उसकी व्याख्या की। इनका विश्वास था कि संसार के समस्त प्राणियों में परमात्मा व्याप्त है। इनके विचार से अपने और संसार के अन्य समस्त प्राणियों में उस परमात्मा की व्याप्ति का अनुभव करने से विश्व के अन्य समस्त प्राणियों में उस परमात्मा की व्याप्ति का अनुभव करने से विश्व के समस्त प्राणियों में एकात्मभाव उत्पन्न हो सकता है और यही आत्मानुभूति का सर्वोत्तम मार्ग है। इनकी इस विचारधारा को विद्वानों ने विश्वबोध दर्शन की संज्ञा दी है।

विश्वबोध दर्शन की तत्व मीमांसा :-

गुरूदेव संसार को ईश्वर के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति मानते थे। इसलिए उनके अनुसार ईश्वर द्वारा निर्मित यह जगत उतना ही सत्य है जितना ईश्वर अपने आप में सत्य है। ईश्वर को इन्होंने निराकार और साकार, दोनों ही रूपों में स्वीकार किया है। इनके अनुसार बीज रूप में वह निराकार है और सृष्टि (प्रकृति) के रूप में साकार है। गुरूदेव को प्रकृति के कण-कण में ईश्वर की अनुभूति होती थी। आत्मा को गुरूदेव ने उपनिषदों के आधार पर तीन रूपों में स्वीकार किया है। अपने प्रथम रूप में यह मनुष्यों को आत्मरक्षा में प्रवृत्त करती है, दूसरे रूप में ज्ञान-विज्ञान की खोज और अनन्त ज्ञान की प्राप्ति की ओर प्रवृत्त करती है, और तीसरे रूप में अपने अनन्त रूप को समझने की ओर प्रवृत्त करती है। गुरूदेव के अनुसार ये तीनों कार्य आत्मा के स्वाभाविक गुण हैं। इसमें आत्मानुभूति को गुरूदेव मनुष्य जीवन का अन्तिम उद्देश्य मानते थे।

विश्वबोध दर्शन की ज्ञान मीमांसा :-

ज्ञान प्राप्ति के साधनों के समंबन्ध में गुरूदेव ने स्पष्ट किया कि आध्यात्मिक तत्वों का ज्ञान सूक्ष्म माध्यमों द्वारा तथा भौतिक वस्तुओं एवं क्रियाओं का ज्ञान भौतिक माध्यमों द्वारा प्राप्त होता है। सूक्ष्म माध्यमों में इन्होंने प्रेम योग के महत्व को स्वीकार किया है। इन्होंने स्पष्ट किया कि आध्यात्मिक तत्व के ज्ञान के लिए सबसे सरल मार्ग प्रेम मार्ग है, प्रेम ही हमें मानव मात्र के प्रति संवेदनशील बनाता है, यही हमें एकात्म भाव की अनुभूति कराता है और यही हमें आत्मानुभूति अथवा ईश्वर की प्राप्ति कराता है। टैगोर अन्य भारतीय दर्शनों की तरह भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों पक्षों को महत्व देते हैं, इस मत का समर्थन करते हुए वे कहते हैं कि जो लोग केवल अविद्या अर्थात् संसार की ही उपासना करते हैं वे तमस् में प्रवेश करते हैं और उससे अधिक अंधकार में वे प्रवेश करते हैं जो केवल ब्रह्म विद्या में ही निरत हैं। अतः टैगोर भौतिक जगत के ज्ञान को उपयोगी ज्ञान और आध्यात्मिक जगत के ज्ञान को विशुद्ध ज्ञान कहते थे। इनकी दृष्टि से संसार की समस्त जड़ वस्तुओं और जीवों में एकात्म भाव ही अंतिम सत्य है और इसकी अनुभूति ही मनुष्य जीवन का अंतिम लक्ष्य है।

विश्वबोध दर्शन की आचार मीमांसा :-

गुरूदेव मानवतावादी व्यक्ति थे। ये मनुष्य को पहले अच्छा मनुष्य बनाने पर बल देते थे, ऐसा मनुष्य जो शरीर से स्वस्थ हो, मन से निर्मल और संवेदनशील हो, समस्त मानव जाति के प्रति उसके हृदय में प्रेम हो और जो प्रकृति के कण-कण से प्रेम करता हो। ये प्रेम को मनुष्य के आचार-विचार का आधार बनाना चाहते थे। इनका तर्क था कि प्रेम ही वह भावना है जो मनुष्य को मनुष्य के प्रति संवेदनशील बनाती है और मनुष्य को मनुष्य की सेवा की ओर प्रवृत्त करती है। इनका विश्वास था कि प्रेम से भौतिक जीवन भी सुखमय बनाया जा सकता है और आध्यात्मिक पूर्णता भी प्राप्त की जा सकती है। यही कारण है कि गुरूदेव के सभी कार्यक्रम-ग्राम सेवा, समाज सेवा, राष्ट्र सेवा और अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध, प्रेम पर ही आधारित रहते थे। इनका तर्क था कि प्रेम के अभाव में मानव सेवा

की बात तो दूर मानव सेवा का भाव भी जागृत नहीं हो सकता। मानव सेवा को गुरूदेव ईश्वर सेवा मानते थे।

8.4.1 टैगोर के जीवन दर्शन में विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं का संश्लेषण

(Synthesis of Various Philosophical View in the Philosophy of Life of Tagore)

दार्शनिक सिद्धान्त (Philosophical Principles)

टैगोर के जीवन में विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं के दर्शन हमे होते हैं। **जैसे-**1. आदर्शवाद (Idealism), 2. प्रकृतिवाद (Naturalism), 3. यथार्थवाद (Realism), 4. प्रयोजनवाद (Pragmatism)] 5. लोकतंत्रवाद (Democratic)] 6. मानवतावाद (Humanism), 7. विश्ववाद (Universalism)। टैगोर के जीवन दर्शन में पाई जाने वाली इन सभी विचारधाराओं पर संक्षेप में प्रकाश डाल रहे हैं:-

1. **आदर्शवाद (Idealism) :-** अपनी आदर्शवादी भावना से प्रेरित होकर टैगोर ने भौतिकवादी प्रगति के संबंध में खेद प्रकट करते हुए कहा है कि मनुष्य भौतिक वस्तुओं को पाने के लिए व्याकुल है। जिससे कि वह अमर सत्य को पाने में असमर्थ हो गया है। इनका विचार है कि ईश्वर की विश्व में रहकर प्राप्ति की जाती है।
   एक दूसरे स्थान पर टैगोर ने कहा है कि प्रत्येक समय के साथ हमें सदैव इस बात का अनुभव होना चाहिए कि हमारी शक्ति में ईश्वर का वास है। हमारे देश पर पश्चिमी सभ्यता का इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि वह ईश्वर का त्यागा हुआ देश बन गया। टैगोर का विश्वास है कि हम पुनः आध्यात्मिक संस्कृति एवं जीवन का सृजन कर देते हैं। इसके लिए उन्होंने आत्मा की पूर्ण स्वतंत्रता और उसकी अभिव्यक्ति के लिए अनुकूल परिस्थितियों पर बल दिया।
2. **प्रकृतिवाद (Naturalism):-** टैगोर प्रारंभ से ही प्रकृति एवं प्राकृतिक सौन्दर्य के उपासक रहे हैं। वे जब अप्राकृतिक वातावरण से युक्त विद्यालय में गये तो उन्हें उसकी अस्वाभविकता अनुभव हुई और वे उसके विरूद्ध प्रतिक्रियाशील हो उठे और रूसो की भांति पुकार उठे-'प्रकृति की ओर चलो।' अपने प्रकृतिवादी दर्शन में प्रकृति को महान शिक्षक (Great Teacher) माना है। उन्होंने मानव प्रकृति को समझने एवं अपने आपको सामाजीकृत करके आगे बढ़ाने के लिए संदेश दिया है। टैगोर ने प्रकृति को एक ऐसा केन्द्रबिन्दु बताया है जहां पर सभी मनुष्यों की इच्छाएं, आकांक्षाएं एवं अभिलाषाएं एक होती हैं।
   इस प्रकार टैगोर ने प्रकृति संबंधी विचारों के आधार पर मानव एकता की ओर संकेत किया है। टैगोर का विचार है कि प्रकृति में आरंभ से परिपूर्ण सादा जीवन होता है, जहां पर अत्यधिक स्थान शुद्ध वायु एवं गम्भीर शान्ति होती है। प्रकृति में मनुष्य आगामी शाश्वत जीवन के लिए पूर्ण विश्वास से रहता है।

3. **यथार्थवाद (Realism):-** टैगोर ने अपने जीवन में भारतीय यथार्थवाद एवं पाश्चात्य यथार्थवाद के बीच अद्वितीय समन्वय स्थापित किया है। इस समन्वय के आधार पर उन्होंने भारत के लिए एक ऐसी संस्कृति के विकास के लिए बल दिया है, जिसमें एक ओर नैतिक, चारित्रिक एवं शाश्वत मूल्य एवं सत्यों का समावेश हो। टैगोर ने इस यथार्थवाद को सामने रखते हुए कि भारत एक ग्रामीण देश है और किसी देश की जनता तभी प्रगति कर सकती है जबकि उसे देश में जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए वस्तुओं एवं साधनों का अत्यधिक उत्पादन किया जाये। प्रत्येक ग्राम में ऐसे शिक्षा संस्थान स्थापित किए जाएँ , जहां पर सामान्य शिक्षा के अतिरिक्त कृषि एवं ग्रामीण उद्योगों का विकास करने के लिए विज्ञान की सहायता ली जाये।
4. **प्रयोजनवाद (Pragmatism):-** टैगोर एक आदर्शवादी दार्शनिक होते हुए भी उनका प्रयोजनवादी दृष्टिकोण था। उनका यह विचार कि भौतिकवादी आदर्शों का अंधानुकरण न करके उन्हें तभी स्वीकृत किया जाय जबकि उनकी परख कर ली जाए, उनके प्रयोजनवादी दृष्टिकोण की पुष्टि करता है। सुप्रसिद्ध प्रयोजनवादी दार्शनिक श्री डी.वी. की भांति टैगोर भी शिक्षा को जीवन से संबंधित करने के पक्ष में थे। वे शिक्षा एवं शिक्षालयों को समाज व समुदाय से संबंधित रखना चाहते थे। उनका विचार है, 'शिक्षा का लक्ष्य केवल एक अच्छा क्लर्क या एक तकनीशियन बनाना नहीं है, बल्कि यह तो एक पूर्ण मनुष्यत्व के अनुभव को पूर्णता द्वारा विकसित करना है।'
5. **लोकतंत्रवाद (Democratic)**:- टैगोर के दार्शनिक विचारों में लोकतंत्रवाद की भी एक झलक मिलती है। वे जमींदार होते हुए भी जनता के प्रति भ्रातृत्व भाव भी रखते थे, और उनकी स्वतंत्रता पर बल देते थे। टैगोर ने बताया कि एक देश की सुख-सम्पन्नता जन-साधारण की शिक्षा पर निर्भर करती है। टैगोर इस बात को अच्छी तरह समझते थे कि जब तक जन-साधारण के लिए शिक्षा की व्यवस्था नहीं की जाती तब तक भारत में जनतंत्र की कल्पना करना निरर्थक है। अतः टैगोर ने सार्वभौमिक शिक्षा एवं जन-साधारण की शिक्षा के लिए मांग की। इसके लिए स्वयं प्रयास भी किए । टैगोर ने लोकतंत्रीय समाज की स्थापना करने के लिए ग्रामोद्धार की योजना पर सबसे पहले विचार प्रस्तुत किए । इसलिए यह कहा जाता है कि आधुनिक भारत में सामुदायिक विकास आन्दोलन एवं सर्वोदय आन्दोलन की प्रेरणा टैगोर से प्राप्त हुई। टैगोर भारत में केवल राजनैतिक दृष्टि से ही लोकतंत्र की स्थापना नहीं करना चाहते थे, बल्कि वे आर्थिक, शैक्षिक एवं सामाजिकता से भी सच्चे लोकतंत्र की स्थापना पर बल देते थे। अतः टैगोर का जीवन-दर्शन मानवतावाद का पुष्ट पोषक है।
6. **मानवतावाद (Humanism):-** टैगोर के जीवन-दर्शन में मानवतावाद की अत्यधिक झलक मिलती है। उनके लेख मानवतावादी विचारों से ओत-प्रोत हैं। टैगोर के मानवतावाद की एक अन्य उल्लेखनीय प्रवृत्ति सामान्य एवं सरल मानव जीवन के आनन्द की खोज है। अपनी इस धारणा के परिणामस्वरूप टैगोर ने अपनी कविता 'कवि कलम' में लिखा है:-'मैं तो मानवतावाद के हृदय में वास करने का अत्यंत इच्छुक हूॅ।' अपनी इस इच्छा की पूर्ति करने के

लिए टैगोर ने लोक-शिक्षा की योजना तैयार की और इसके लिए विभिन्न केन्द्र स्थापित किए , ताकि बहुत से स्त्री-पुरूष मानवीकृत किए जा सकें। टैगोर ने कहा मानवता के सार्वभौमिक हृदय एवं अन्तर में ईश्वर का वास है।

7. **विश्ववाद (Universalism) :-** टैगोर भारतीय दर्शन, विशेषकर औपनिषदीप दर्शन से प्रभावित होकर विश्ववाद की तरफ भी उन्मुख हुए। उन्होंने सृष्टि की समस्त वस्तुओं को विश्ववाद एवं मानवतावादी दृष्टिकोण से देखना शुरू किया। टैगोर ने अपने विश्ववाद को सभ्यताओं के एकीकरण के रूप में व्यक्त किया है। अपनी विश्ववाद की इस धारणा के आधार पर टैगोर ने विश्व भारती की स्थापना की।

8.4.2 शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Education)

i. शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक की जन्मजात शक्तियों का विकास कर उसके व्यक्तित्व का चर्तुमुखी तथा सर्वांगीण विकास करना होना चाहिए।

ii. शिक्षा का कार्य केवल बालकों को अच्छा क्लर्क, निपुण किसान, शिल्पी या वैज्ञानिक बना देना नहीं है। बल्कि उन्हें अनुभव की पूर्णता द्वारा पूर्ण मनुष्य के रूप में विकसित करना भी है।

iii. बालकों के प्रकृति के घनिष्ट संपर्क में रहकर शिक्षा देने की व्यवस्था होनी चाहिए, क्योंकि प्रकृति के साथ घनिष्ट संपर्क स्थापित करने में आनन्द का अनुभव होता है।

iv. विद्यार्थियों को नगरों की अनैतिकता, भीड़ और गन्दगी से दूर प्रकृति के शान्त तथा सायेदार एकान्त स्थान में रखना चाहिए।

v. शिक्षा राष्ट्रीय होनी चाहिए एवं उसमें भारत के भूत एवं भविष्य का ध्यान रखना चाहिए।

vi. भारतीय शिक्षा एवं भारतीय विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में भारतीय दर्शन के प्रमुख विचारों को स्थान दिया जाना चाहिए।

vii. सभी विद्यार्थियों को भारतीय विचारधारा एवं भारतीय समाज की पृष्ठभूमि का स्पष्ट रूप से ज्ञान करना चाहिए।

viii. प्रत्येक बालक एवं बालिका में संगीत, चित्रकला और अभिनय की योग्यताओं का विधिपूर्वक विकास करना चाहिए।

ix. मातृभाषा शिक्षा का माध्यम होना चाहिए, क्योंकि उनके द्वारा ही संपूर्ण राष्ट्र को अच्छे प्रकार से शिक्षित किया जा सकता है।

x. सच्ची शिक्षा बालकों को स्वतंत्र प्रयासों से ही प्राप्त की जानी चाहिए।

xi. अनन्त मूल्यों की प्राप्ति विदेशी भाषा से संभव नहीं है। अतः मातृभाषा का प्रयोग करना चाहिए।

xii. विद्यार्थियों को पुस्तकों के बजाय प्रत्यक्ष स्रोतों से ज्ञान प्राप्त करने का अवसर देना चाहिए।

xiii. बालकों को उत्तम भोजन, जिससे मानसिक विकास हो, भोजन प्रदान करना चाहिए।

xiv. शिक्षण पद्धति का आधार जीवन की वास्तविक बातें तथा प्राकृतिक होनी चाहिए।
xv. विद्यार्थियों के सामाजिक आदर्शो, परम्पराओं, प्रथाओं और रीति-रिवाजो को पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाना चाहिए।
xvi. बालकों को इस प्रकार की शिक्षा दी जाय, जो उन्हें आध्यात्मवाद की ओर अग्रसर होने का अवसर प्रदान करे।
xvii. बालक का जन्म प्रकृति एवं मनुष्य दोनों के संसार में होता है। अतः दोनों संसार के लिए उनका आकर्षण बनाये रखना चाहिए।
xviii. शिक्षा द्वारा बालकों में उच्चकोटि की धार्मिक भावना जागृत करनी चाहिए, जिससे उनमें मानवता का कल्याण करने की क्षमता का विकास हो।

8.4.3 पाठ्यक्रम (Curriculum)

टैगोर के अनुसार शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य पूर्ण जीवन की प्राप्ति करने के लिए मनुष्य का पूर्ण विकास करना है। शिक्षा के इस व्यापक उद्देश्य की पूर्ति के लिए टैगोर ने व्यापक तथा विस्तृत पाठ्यक्रम संबंधी विचार प्रस्तुत किए हैं। उनके अनुसार-शिक्षा तभी अपने मुख्य उद्देश्य की प्राप्ति कर सकती है, जबकि पाठ्यक्रम से मानव जीवन के विभिन्न पक्षों यथा-शारीरिक, मानसिक, भावात्मक, सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास को स्थान दिया जाय।

टैगोर ने अपने शान्ति निकेतन और बाद में विश्व भारती में विषयों के साथ-साथ विभिन्न क्रियाओं को भी पाठ्यक्रम में महत्वपूर्ण स्थान दिया है। ये विषय, क्रियाएं तथा पाठान्तर क्रियाएं निम्नलिखित हैं:-

i. विषय (Subject) - इतिहास, भूगोल, विज्ञान, प्रकृति विज्ञान, साहित्य आदि।
ii. क्रियाएं **(Activities) -** बागवानी, भ्रमण, अभिनय, ड्राइंग, क्षेत्रीय अध्ययन, प्रयोगशाला कार्य, अजायब घर के लिए वस्तुओं का संग्रह आदि।
iii. पाठान्तर क्रियाएं (**Extra Curricular Activities**) - समाज सेवा, छात्र स्वशासन, खेलकूद आदि।

टैगोर का पाठ्यक्रम विषय प्रधान न होकर क्रिया प्रधान रहा है। डॉ. एल.वी. मुखर्जी ने कहा है कि 'इस दृष्टि से टैगोर की शिक्षा संस्थाओं में लागू किया जाने वाला पाठ्यक्रम क्रिया प्रधान पाठ्यक्रम रहा है।'

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

5. 'प्रकृति की ओर चलो, प्रकृति एक महान शिक्षक है।' यह कथन है-
(अ)विवेकानन्द (ब)अरविन्दो (स) रवीन्द्रनाथ टैगोर (द) महात्मा गांधी
6. रवीन्द्रनाथ टैगोर की 'कवि कलम' क्या है?

(अ)कहानी (ब)कविता (स) लेख(द) उपन्यास

7. 'मानवतावाद में मानवता के सार्वभौमिक हृदय एवं अंतह में ईश्वर का वास है।' यह कथन है-

   (अ) रूसो (ब)महात्मा गांधी(स) डॉ. भीमराव अंबेडकर(द)रवीन्द्रनाथ टैगोर

8. 'शिक्षा राष्ट्रीय होनी चाहिए एवं उसमें भारत के भूत एवं भविष्य का ध्यान रखना चाहिए।' यह कथन है-

   (अ)डॉ. भीमराव अंबेडकर(ब) विवेकानन्द(स) रवीन्द्रनाथ टैगोर(द) अरविन्दो

9. 'विद्यार्थियों को पुस्तकों की बजाय प्रत्यक्ष स्रोतों से ज्ञान प्राप्त करने का अवसर देना चाहिए।' यह कथन है-

   (अ) डॉ. राधाकृष्णन् (ब)रवीन्द्रनाथ टैगोर

   (स) डॉ. भीमराव अंबेडकर(द) स्वामी विवेकानन्द

8.4.4 शिक्षण पद्धति (Method of Teaching)

1. **वास्तविकताओं पर आधारित शिक्षण विधि (Education should be based on Realities)-** टैगोर का विचार है कि शिक्षण विधि जीवन की वास्तविक परिस्थितियों, समाज के वास्तविक जीवन तथा प्रकृति के वास्तविक तथ्यों पर आधारित होनी चाहिए। प्राकृतिक विज्ञानों का अध्ययन प्रकृति का निरीक्षण करके किया जाए। सामाजिक विज्ञानों का अध्ययन सामाजिक समस्याओं, घटनाओं एवं संस्थाओं के निरीक्षण से किया जाये।
2. **शिक्षण विधि जीवन से पूर्ण होनी चाहिए(Method of teaching should be full of life)-**शिक्षण पद्धति जीवन से पूर्ण होनी चाहिए। प्रचलित विद्यालय शिक्षा के केन्द्र न होकर शैक्षणिक फैक्ट्रियां होती हैं, जो बालकों के जीवन की आवश्यकताओं, रूचियों तथा अभिवृत्तियों पर ध्यान दिये बिना एक ही सी सामग्री उत्पन्न करती है। अतः इन विद्यालयों में बालकों के पूर्ण जीवन का विकास नहीं हो पाता है। अतः शिक्षण पद्धति बालकों की स्वाभाविक आवश्यकताओं, रूचियों तथा आवेगों के अनुसार होनी चाहिए।
3. **स्व-प्रयास एवं स्वचिन्तन द्वारा सीखना (Learning by self efforts and self thinking)-**टैगोर का विचार है कि वही ज्ञान स्थाई रूप से बालकों के मस्तिष्क में रह सकता है जो उनके स्वयं के प्रयत्नों तथा चिन्तन से प्राप्त हुआ है।
4. **क्रिया द्वारा सीखना (Learning by doing)-**टैगोर का विचार था कि मनुष्य मन-शारीरिक प्राणी है। अतः हम शरीर और मस्तिष्क को एक-दूसरे से अलग नहीं रख सकते हैं। मनुष्य जो शारीरिक क्रिया करता है, उसका प्रभाव शरीर और मस्तिष्क दोनों पर पड़ता है। अतः बालकों को क्रिया द्वारा सीखने का अवसर देना चाहिए। शारीरिक क्रिया पर महत्व देने के कारण टैगोर ने बालकों को नृत्य तथा अभिनय सीखने पर बल दिया है।

5. **भ्रमण द्वारा सीखना (Learning by walking)**-टैगोर का विचार है कि भ्रमण के समय पढ़ना, शिक्षण की सर्वोत्तम विधि है। इसके उन्होंने दो कारण बताए हैं। प्रथम-भ्रमण के समय हमें अनेक वस्तुओं को प्रत्यक्ष रूप से देखकर उनका अध्ययन करने का अवसर प्राप्त होता है। द्वितीय-भ्रमण द्वारा हमारी मानसिक शक्तियां सतर्क रहती हैं, जिसमें हम प्रत्यक्ष की जाने वाली बातों को सरलता से सीख लेते हैं।
6. **वाद-विवाद एवं प्रश्नोत्तर विधि (Discussion and question answer method)**-टैगोर का विचार है कि वास्तविक शिक्षा पुस्तकों पर आधारित न होकर जीवन एवं समाज पर आधारित होनी चाहिए। इस शिक्षा के लिए उन्होंने वाद-विवाद तथा प्रश्नोत्तर विधि को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उनका विचार है कि प्रश्नों के द्वारा बालकों के समक्ष दैनिक जीवन की समस्याओं को रखा जाये। वे सब उन पर वाद-विवाद करें और उनके हल करने के तरीके बताएं।

8.4.5 अनुशासन (Discipline)

अनुशासन का तात्पर्य स्वाभाविक अनुशासन से है। टैगोर ने अनुशासन को एक मूल्य या आदर्श माना है। अतः यह व्यक्ति के नैतिक विकास के लिए अति आवश्यक है। अनुशासन से टैगोर का तात्पर्य स्वाभाविक अनुशासन (Natural Discipline) से है, जिसे वे आत्म-अनुशासन (Self Discipline) अथवा आन्तरिक अनुशासन (Inter Discipline) भी कहते हैं। टैगोर के अनुसार अनुशासन न तो अंधी आज्ञाकारिता है और न ही वाह्य व्यवस्था।

8.5 टैगोर के शिक्षा दर्शन का मूल्यांकन व योगदान

(Estimation of Contribution of Tagore's Philosophy of Education)

टैगोर और उनके शिक्षा दर्शन का शिक्षा के क्षेत्र में अत्यधिक योगदान है, जिसके कारण न केवल भारतीय शिक्षा के इतिहास में बल्कि विश्व की शिक्षा के इतिहास में उनका नाम अमर हो गया। शिक्षा के क्षेत्र में टैगोर का योगदान निम्नलिखित हैः-

1. शिक्षा का व्यापक एवं पूर्ण अर्थ(Wider and complete meaning of education)**:-**टैगोर ने शिक्षा की अवधारणा को विस्तृत एवं पूर्ण रूप प्रदान किया। प्रायः कहा जाता है कि स्पेन्सर ने अपनी पुस्तक शिक्षा में दार्शनिक जीवन की पूर्णता पर विचार प्रकट किए हैं, किन्तु शिक्षा के संबंध में टैगोर ने जो दृष्टिकोण अपनाया है वह स्पेन्सर से कहीं अधिक व्यापक एवं पूर्ण है। टैगोर ने शिक्षा के लिए जो योजना तथा विधान बनाया है, वह भारतीय एवं पश्चिमी दोनों जीवन को छूता है और जिसमें आध्यात्मिक एवं भौतिक दोनों प्रकार के तत्वों का मेल है।

2. भारतीय संस्कृति का विस्तार (Extension of Indian culture) :- टैगोर ने भारतीय संस्कृति के अध्यापकों के प्रति देश-विदेश के लोगों को आकृष्ट कर उनका विश्व में प्रचार किया। उन्होंने भारतीय संस्कृति के आधार पर राष्ट्रीय शिक्षा की नींव डाली और व्यापक दृष्टिकोण को लेकर पश्चिम को एक ऐसा संदेश दिया, जिसने पूर्व एवं पश्चिम के आदर्शो में समन्वय स्थापित किया।
3. विश्वव्यापी शिक्षा का प्रतिपादन एवं प्रसार (Propagation and diffusion of universal education):- मानवतावादी भावना पर आधारित विश्व-बंधुत्व एवं विश्व-शान्ति के विचार को साकार रूप प्रदान करने के लिए टैगोर ने सर्वप्रथम विश्वव्यापी शिक्षा का प्रतिपादन एवं प्रसार किया।
4. शिक्षा में प्रकृति को महत्व देना (Giving importance of nature in education):- रवीन्द्रनाथ टैगोर एक कवि थे। अतः प्रकृति का एवं प्रकृति की भावना उनके अंग-प्रत्यंग में आचार-विचार से भरी हुई है। उन्होंने अपनी प्रकृति वादी शिक्षा में प्रकृति को सबसे बड़ा शिक्षक माना है। टैगोर ने अपनी सूक्ष्म एवं भावना प्रधान बुद्धि के द्वारा प्रकृति के सौन्दर्य एवं आनन्द, शक्ति एवं ओज, स्वतंत्रता तथा आत्म-प्रेरणा को देखा।
5. सौन्दर्य के साक्षात्कार की शिक्षा देना (Giving education for the realization of beauty):- उन्होंने अपनी शिक्षा योजना में सौन्दर्य के साक्षात्कार की शिक्षा देने का सुझाव दिया है। सौन्दर्य बोध हेतु ललित कलाओं जैसे-संगीत, पेंटिंग, नृत्य, अभिनय, कला आदि को शिक्षा में विशेष स्थान दिया। विश्व भारती में कला भवन इस प्रकार की शिक्षा का एक विश्व प्रसिद्ध प्रभाग है।
6. निजी शिक्षा दर्शन एवं सिद्धान्तों की रचना (Construction of own philosophy of education and principles):- टैगोर उन महान शिक्षा शास्त्रियों में से हैं, जिन्होंने अपना निजी शिक्षा दर्शन तैयार किया है। साथ ही साथ उसके पृथक-पृथक सिद्धान्तों का निर्माण किया है। उन्होंने शिक्षा के विभिन्न अंगों यथा-उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, शिक्षक, शिक्षार्थी, विद्यालय आदि का जीवन की वास्तविक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर संगठन किया है।
7. नवीन शिक्षा की भूमिका (Introduction of new education)- टैगोर ने अपने शिक्षा दर्शन संबंधी जिन क्रियाओं को बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में प्रस्तुत किया, उन्हें बाद में भारत की शिक्षा हेतु स्वीकार किया गया। सेडलर कमीशन 1917, बेसिक शिक्षा 1937, मुदालियर कमीशन 1952, एवं समाज शिक्षा 1948 में जो विचार हमें मिलते हैं, उनकी भूमिका हमें टैगोर के विचारों में हमें बहुत पहले मिलती है।
8. विश्व भारती की स्थापना (Establishment of Vishva Bharati)- टैगोर ने अपने जीवन दर्शन तथा शिक्षा दर्शन को साकार रूप प्रदान करने के लिए जिस शिक्षा संस्था की स्थापना की, वह आज विश्व भारती के नाम से एक विश्व प्रसिद्ध विश्वविद्यालय है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

10. 'अनुशासन न तो अंधी आज्ञाकारिता है और न ही वाह्य व्यवथा।' यह कथन है-
    (अ)भीमराव अंबेडकर(ब)डॉ. राधाकृष्णन्(स) डॉ. राजेन्द्र प्रसाद (द) रवीन्द्रनाथ टैगोर
11. टैगोर ने किस संस्था की स्थापना की थी?
12. विश्व भारती क्या है?
    (अ) एक कॉलेज (ब)एक डीम्ड विश्वविद्यालय
    (स) एक केन्द्रीय विश्वविद्यालय (द) एक राज्य विश्वविद्यालय
13. 1915 में भारत सरकार ने रवीन्द्रनाथ टैगोर को किस सम्मान से सम्मानित किया ?

8.6 सारांश

उपरोक्त शब्दों में हमने क्रमशः टैगोर के जीवन दर्शन एवं शिक्षा दर्शन पर प्रकाश डाला, जिससे पता चलता है कि टैगोर केवल एक महान कवि एवं साहित्यकार ही नहीं थे, बल्कि वे एक महान दार्शनिक, शिक्षा शास्त्री तथा समाज सुधारक भी थे। इसलिए उन्हें शिक्षा के इतिहास में अद्वितीय स्थान दिया जाता है।

सुप्रसिद्ध प्रयोजनवादी शिक्षाशास्त्री प्रो. किलपैट्रिक ने लिखा हैं। अपने व्यक्तिगत अध्ययन एवं चिन्तन में अपने निजी विचार में टैगोर ने यहां वहीं उत्तर विचारों का गहन स्थान शिक्षा विषय के संबंध में लिखा है।

डॉ. सुरेन्द्र नाथ ने लिखा है- टैगोर की प्रतिभा संपन्नता अद्वितीय एवं अतुलनीय थी और अन्यत्र कहीं भी यह प्रतिभा परिश्रय से संबंधित नहीं पायी जाती।

महात्मा गांधी ने लिखा है कि टैगोर ने शान्ति निकेतन के रूप में अपनी विरासत पूरे राष्ट्र को वस्तुतः पूरे विश्व को दी है।

कलकत्ता विश्व विद्यालय के सिंडीकेट में टैगोर की महानता के संबंध में लिखा है- 'रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा भारत ने मानव जाति को अपना संदेश दिया और साहित्य दर्शन और शिक्षा तथा कला के क्षेत्रों में उनकी अद्भुत उपलब्धियों ने उनके लिए अमर यज्ञ प्राप्त किया तथा भारत का पद विश्व की सृष्टि से ऊंचा उठाया। भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद एवं सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने टैगोर की महानता या उनके अद्वितीय स्थान पर विस्तृत प्रकाश डाला है।

8.7 शब्दावली

आत्म शिक्षा:- आत्म शिक्षा आत्म साक्षात्कार पर आधारित है। आत्म-साक्षात्कार की प्रक्रिया शिक्षा की प्रक्रिया के समान आजीवन चलती रहती है। शिक्षा की प्रक्रिया में वे सब क्रियाएं सहायक हो सकती हैं, जिनमें आनन्द की स्वाभाविक अनुभूति मिलती है।

पूर्णता:- शिक्षा का एक मात्र लक्ष्य बालक के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास है। यह पूर्ण विकास तभी संभव है जबकि व्यक्तित्व के सभी पहलुओं पर समुचित जोर दिया जाए, न कि किसी पर आवश्यकता से अधिक बल दिया जाए।

विश्वबोध दर्शन की तत्व मीमांसा:- ईश्वर द्वारा निर्मित यह जगत उतना ही सत्य है, जितना ईश्वर अपने आप में सत्य है। इनके अनुसार बीज रूप में वह निराकार है और सृष्टि रूप में साकार है।

8 .8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. 1861
2. गीतांजली
3. 1901
4. गुरूदेव के सभी कार्यक्रम ग्राम सेवा, समाज सेवा, राष्ट्र सेवा, प्रेम और अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध पर आधारित थे।
5. (स) रवीन्द्रनाथ टैगोर
6. (ब) कविता
7. (द) रवीन्द्रनाथ टैगोर
8. (स) रवीन्द्रनाथ टैगोर
9. (ब) रवीन्द्रनाथ टैगोर
10. (द) रवीन्द्रनाथ टैगोर
11. विश्व भारती
12. (स) केन्द्रीय विश्व विद्यालय
13. नाइटहुड

8.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।
2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिग हाउस, मेरठ।
4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशाष्त्र , एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय, रजत प्रकाशन,नई दिल्ली।
6. शर्मा, रामनाथ व शर्मा राजेन्द्रकुमार (2006) एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।
7. गुप्त, रामबाबू (1996) भारतीय शिक्षा शास्त्री, आगरा, रतन प्रकाशन मंदिर।
8. सिंह (डॉ.), वीरकेश्वर प्रसाद (1999) प्रतिनिधि, राजनीतिक विचारक, दिल्ली, नवप्रभात प्रिंटिंग प्रेस।

8 .10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. रवीन्द्रनाथ टैगोर के जीवन दर्शन के प्रमुख सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए।
2. रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार शिक्षा के क्या उद्देश्य हैं ?
3. टैगोर के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन कीजिए।
4. शिक्षा के क्षेत्र में टैगोर के प्रमुख योगदान की आलोचनात्मक समीक्षा कीजिए।
5. रवीन्द्रनाथ टैगोर के विश्वबोध दर्शन की व्याख्या कीजिए।
6. रवीन्द्रनाथ टैगोर के शिक्षण पद्धति व पाठ्यक्रम की व्याख्या कीजिए।

इकाई-9 श्री अरविन्द Sri Aurobindo

9.1 प्रस्तावना
9.2 उद्देश्य
9.3 अरविन्द के दार्शनिक विचार
9.3.1 तत्वमीमांसा
9.3.2 ज्ञानमीमांसा
9.3.3 मूल्य मीमांसा
9.4 अरविन्द के शैक्षिक विचार
9.4.1 शिक्षा का प्रत्यय
9.4.2 शिक्षा के उद्देश्य
9.4.3 शिक्षा का पाठ्यक्रम
9.4.4 शिक्षण विधियाँ
9.4.5 अनुशासन
9.4.6 शिक्षक
9.4.7 शिक्षार्थी
9.4.8 विद्यालय
9.5 अरविन्द के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन
9.6 सारांश
9.7 शब्दावली
9.8 स्वमूल्याँकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
9.9 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
9.10 निबंधात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

श्री अरविन्द अधुनिक भारत के महान ऋषि कहे जाते सकते है, उन्होंने भारत में 'राष्ट्रवादी आन्दोलन' को प्रेरणा प्रदान की, वे भरत में पुनर्जागरण आन्दोलन के सूत्रधार भी माने जाते हैं। अरविन्द ने पूर्वी और पश्चिमी सभ्यताओं का समुचित समन्वय करके और उनके बीच कोई प्रतिद्वन्दता पैदा किए बिना अपना लक्ष्य पूरा कर दिखाया।

अरविन्द एक दार्शनिक के रूप में अधिक प्रसिद्ध हैं। परन्तु शिक्षा के क्षेत्र में इनका योगदान अधिक सराहनीय है। इस इकाई में आप श्री अरविन्द के दार्शनिक एंव शैक्षिक विचारों का अध्ययन करगें तथा आधुनिक शिक्षा प्रणाली में उसकी उपयोगिता के विषय में जान सकेंगें। श्री अरविन्द ने पूर्वी और पश्चिमी दर्शन, धर्म, साहित्य तथा मनोविज्ञान को अपने लेखन में संश्लेषित किया।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपः

1. अरविन्द के दार्शनिक विचारों को स्पष्ट कर पाएंगे ।
2. अरविन्द के अनुसार शिक्षा के संप्रत्यय का वर्णन कर सकेंगे।
3. अरविन्द के शैक्षिक विचारों को अपने शब्दों को व्यक्त कर सकेंगे।
4. अरविन्द के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन कर सकेंगे।
5. अरविन्द की एकीकृत शिक्षा की विशेषताएँ लिख सकेंगे।

9.3 अरविन्द के दार्शनिक विचार(Philosophical Thoughts of Sri Aurobindo)

श्री अरविन्द का जन्म 15 अगस्त, 1872में कोलकता के एक सम्पन्न परिवार में हुआ। उनके पिता, कृष्णघना घोष एक प्रसिद्व डॉक्टर थे तथा पश्चिमी संस्कृति के प्रशंसक थे। वे स्वभाव से बहुत दयालु थे। श्री अरविन्द ऐसे परिवार में जन्में व पले हुये थें।
श्री अरविन्द श्रीमद् भागवत गीता के बहुत बड़े उपासक थें। उन्होंने गीता के 'कर्म योग, व ध्यान योग का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया। उनके विचार से मानव व दैवीय शक्ति का संश्लेषण योग है। दूसरे शब्दो में योग वह माध्यम है जिसके द्वारा मनुष्य दैवीय शक्ति का अनुभव करता है।

श्री अरविन्द मनुष्य को अपने भीतर के स्व के तत्व का अनुभव कर ब्रहम में आत्मसात हो ज़ाना नहीं सिखाते बल्कि वे समस्त मानवजाति को अज्ञान, अंधकार व मृत्यु से ज्ञान, प्रकाश व अमरत्व की ओर ले जाना चाहते हैं। अतः उनकी विचारधारा सर्वांग योग दर्शन (Sarvang Yoga Darshan) कहलाती है।

9.3.1 अरविन्द के सर्वांग योग दर्शन की तत्वमीमांसा Metaphysics of Aurobindo's Sarvang Yoga Darshan

श्री अरविन्द के अनुसार ईश्वर इस ब्रह्माण्ड का निर्माता है। उनके अनुसार ईश्वर ने विकास सिद्धांत(Theory of Evolution) के आधार पर जगत का निर्माण किया है। इनके मतानुसार विकास की दो दिशाएँ हैं- अवरोहण(Descent) और आरोहण (Ascent), ब्रह्म अवरोहण द्वारा

वस्तु जगत का रूप धारण करता है। उन्होंने अवरोहण के सात सोपान बताये हैं।सत-चित-आनन्द-अतिमानस-मानस-प्राण-द्रव्य ।

श्री अरविन्द के अनुसार इस जगत में मनुष्य अपने द्रव्य रूप से आरोहण द्वारा सतकी ओर बढ़ता है। उन्होंने आरोहण के भी सात सोपान बताये हैं। द्रव्य-प्राण-मानस-अतिमानस-आनन्द-चित-सत। ब्रह्मा को ये सतऔर ईश्वर को सत-चित-आनन्द के रूप में स्वीकार करते हैं। अरविन्द ने आत्मा को गीता के पुरूष के रूप में लिया है। उनके विचार से आत्मा में परमात्मा की दो विशेषतायें होती हैं-आनन्द और चित, और ये विभिन्न योनियों से होती हुई मनुष्य योनि में प्रवेश करती है, तथा इस शरीर के माध्यम से सत की ओर बढ़ती है। अरविन्द के अनुसार मानव जीवन का परम उद्देश्य सत+ चित+आनन्द = ईश्वर की प्राप्ति है।

अरविन्द का मानना है कि पदार्थ, द्रव्य का ज्ञान मनुष्य के शारीरिक विकास के लिए आवश्यक है तथा यह ज्ञान ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। मनुष्य के आध्यात्मिक विकास के लिए स्वयं का ज्ञान आवश्यक है जो कि योगिक क्रियाओ द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। इन योगिक क्रियाओं के लिए अरविन्द ने शिक्षा की आवश्यकता को समझा।

9.3.2 अरविन्द के सर्वांग योग दर्शन की ज्ञानमीमांसा Epistemology of Aurobindo's Sarvang Yoga Darshan

श्री अरविन्द के अनुसार भौतिक एंव आध्यात्मिक दोनो तत्वो में मूल तत्व ब्रह्म है। अतः भौतिक तथा आध्यात्मिक तत्वों के मध्य भेद को जानना ही सच्चा ज्ञान है। उपयोगिता के दृष्टिकोण से अरविन्द ने ज्ञान को दो भागों में बाँटा है-

द्रव्यज्ञान (Material Knowledge/Worldly Knowledge)

आत्मज्ञान/ आत्मिक ज्ञान (spiritual Knowledge)

अरविन्द द्रव्य ज्ञान को (संसारिक ज्ञान) साधारण ज्ञान मानते हैं और आत्मिक ज्ञान को उच्च ज्ञान मानते हैं। उनके दृष्टिकोण से पदार्थ जगत (द्रव्य जगत) का ज्ञान, ज्ञानन्द्रियों द्वारा प्राप्त किया जाता है, और आध्यात्मिक तत्व का ज्ञान भीतरी-स्व (अन्तःकरण) द्वारा प्राप्त होता है। आत्मिक तत्व के ज्ञान के लिए इन्होंने यौगिक क्रियायों(यम, नियम, आसन, प्रणायाम, प्रत्याहार, धारणा,ध्यान एंव समाधि) को आवश्यक माना है।

9.3.3 अरविन्द के सर्वांग योग दर्शन की मूल्य मीमांसा Axiology and Ethics of Aurobindo's Sarvang Yoga Darshan

अरविन्द के अनुसार मनुष्य जीवन का परम उद्देश्य सत+ चित + आनन्द की प्राप्ति है। इसके लिए उन्होंने गीता के कर्म योग एंव ध्यान योग को साधन बताया हैं जिसमें योगी संसार (कर्म का क्षेत्र) से

दूर नहीं भागता बल्कि सत, चित, आनन्द में चित लगाकर निष्काम भाव से अपने कर्तव्य का पालन करता है। ऐसे कर्मयोगी व ध्यानयोगी के लिए आवश्यक है एक स्वस्थ शरीर, स्वस्थ मन तथा नियंत्रित जीवन और उसके लिए अरविन्द के यौगिक क्रियाओं को महत्व दिया है।

9.4 श्री अरविन्द के शैक्षिक विचार(Educational Thoughts of Sri Aurobindo)

श्री अरविन्द के दार्शनिक के रूप में अधिक प्रसिद्व हैं। परन्तु उन्होंने एक विशेष प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता को समझा। जिससे कि उनके दार्शनिक सिद्वान्तो को मानव जीवन में उतारा जा सके । दूसरी ओर, प्रचलित शिक्षा राष्ट्र के हित के लिए उपयुक्त नहीं थी। इस लिए उन्होंने शिक्षा की राष्ट्रीय योजना प्रस्तुत की, उन्होंने अपनी शिक्षा सबंधी विचार मुख्यतः अपनी दो पुस्तको में व्यक्त किए ।

i. नेशनल सिस्टम ऑफ एजुकेशन
ii. ऑफ ऐजुकेशन

9. 4.1 शिक्षा का प्रत्यय Concept of Education

श्री अरविन्द का मानना था कि मनुष्य 'मानस' की स्थिति में आने के लिए 'द्रव्य' एंव 'प्राण' दो सोपानो को पार करता है। जन्म के पश्चात उसको 'अतिमानस' के चरण में पहुँचना होता है। फिर वहाँ से 'आनन्द', आनन्द से चित, और चित से सत।

यदि हम उसे इस विकास की ओर ले जाना चाहते है। तो हमें ऐसी शिक्षा देनी होगी जिससे कि वह इन सोपानो को जान सके तथा इन चरणों को प्राप्त करने की विधियाँ जान सके। श्री अरविन्द के अनुसार, यह कार्य केवल शिक्षा द्वारा ही किया जा सकता है, वह शिक्षा जो मनुष्य में शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक विकास ला सके। श्री अरविन्द ने इसे 'एकीकृत शिक्षा' (Integral Education) कहा। अरविन्द के अनुसार-

"शिक्षा -मानव के मास्तिष्क और आत्मा की शक्तियो का निर्माण करती है। ज्ञान चरित्र और संस्कृति का उत्कर्ष करती है।"

"Education is the building g of the power of human mind and spirit. It is the evoking of Knowledge, character and culture."

9.4.2 शिक्षा के उद्देश्य Aims of Education

श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा के दो प्रमुख कार्य है-

i. मनुष्य को उसके विकास की प्रक्रिया से परिचित कराना।
ii. मनुष्य में सत के सोपान तक पहुँचने की शक्ति का विकास करना।

श्री अरविन्द ने शैक्षिक उद्देश्यों को विकास की प्रक्रिया के क्रम में प्रस्तुत किया है-

1. **शारीरिक विकास (Physical Development)-**इस ब्रह्मण्ड व मनुष्य के विकास का पहला पद द्रव्य (matter) है, श्री अरविन्द मनुष्य को इस द्रव्य जगत, पदार्थ जगत से परिचित कराना चाहते हैं तथा उसे अपनी शरीर की रक्षा तथा विकास से जुडी क्रियाओंमें प्रशिक्षित करना चाहते हैं इसको उन्होने दूसरे शब्दों में शारीरिक विकास का उद्देश्य कहा है। अरविन्द के अनुसार, सत, चित, आनन्द की प्राप्ति, एक स्वस्थ शरीर द्वारा ही सम्भव है, अतः शिक्षा का सर्वोपरि उद्देश्य मानव का शारीरिक विकास है। उनका विश्वास था- "शरीरम् खलू घर्म साधनम्", अर्थात शरीर के माध्यम से ही धर्म की साधना होती है, अतः उन्होंने बालक के शारीरिक विकास पर ही बल नहीं दिया अपितु इस के अन्तर्गत शारीरिक शुद्दि को भी सम्मिलित किया और बताया कि शरीर के उचित विकास के बिना मानव का आध्यात्मिक विकास नहीं हो सकता।
2. **प्राणिक विकास (Pranic Development)** -मनुष्य के विकास का दूसरा चरण, प्राण है प्राण से तात्पर्य उस उर्जा से है जिसके कारण ब्रह्मांड में परिवर्तन होते हैं। श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य इस प्राण का विकास करना है। उनके अनुसार, मनुष्य के प्राण को सही दिशा निर्देशित करने के लिए, उसका नैतिक व चारित्रिक विकास आवश्यक है तथा उसके आत्मबल को दृढ़ करना भी आवश्यक है। यह विकास तभी सम्भव है जब कि ज्ञानेन्द्रियों को असत् से सत् की ओर पुनः निर्देशित किया जाए। अतः ज्ञानेन्द्रियों का विकास, शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।
3. **मानसिक विकास (Mental Development)-**मानव विकास का तीसरा चरण,मानस अतःमन है। मानस हमारे अस्तित्व का सबसे सक्रिय भाग है। अतः शिक्षा को मनुष्य के मानसिक विकास को प्रभावित करना चाहिये,उनका मत है कि मानसिक शक्तियो के विकास के क्षेत्र में सर्वप्रथम आवश्यकता ध्यान एकाग्र करने की है। मानसिक विकास से उनका तात्पर्य स्मृति, चिन्तन, तर्क, कल्पना तथा निर्णय शक्ति आदि से है। इस सब के विकास को बढ़ाने के लिए उन्होने योगिक क्रियाओं पर बल दिया।
4. **अन्तः करण का विकास (Development of Inner Self)**- अतिमानस व अन्तःकरण मानव विकास का चौथा चरण है, श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य अन्तःकरण का विकास करना है। उनके अनुसार अन्तःकरण के चार स्तर हैं-चित्त

(हृदय), मानस बुद्वि एंव आत्मज्ञान,आध्यात्मिक विकास तभी सम्भव है जबकि व्यक्ति का अन्तःकरण शुद्ध हो और उसकी आत्मा का पूर्ण विकास हुआ हो, इसके लिए व्यक्ति के शारीरिक विकास को अत्यन्त महत्व प्रदान किया है क्योंकि स्वस्थ शरीर में ही पवित्र आत्मा का निवास हो सकता है। अन्तःकरण के विकास के लिए , श्री अरविन्द ने योगिक विधि को महत्वपूर्ण माना है।

5. **आध्यात्मिक विकास (Spiritual Development)**-श्री अरविन्द आदर्शवादी विचारक थे, उन्होंने शिक्षा में आध्यात्मवाद को विशेष रूप से शामिल किया। उनका मानना था कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य आध्यात्मिक विकास करना है। चूँकि प्रत्येक व्यक्ति में ईश्वरीय अंश होता है। अतःशिक्षा का कार्य है इस ईश्वरीय अंश का विकास करना। इसके लिए श्री अरविन्द ने योगिक क्रियाओ को महत्वपूर्ण माना है। श्री अरविन्द के अनुसार, आघ्यात्मिक विकास ही शिक्षा का अन्तिम उद्देश्य है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. श्री अरविन्द के अनुसार इस ब्रह्माण्ड का सृजनकर्ता कौन है?
2. श्री अरविन्द ब्रह्म को किस रूप में स्वीकार करते हैं?
3. श्री अरविन्द आत्मा को किस रूप में स्वीकार करते हैं?
4. श्री अरविन्द ने अपने शिक्षा सबंधी विचार मुख्यतः किन पुस्तको में व्यक्त किए ?
5. श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा के दो प्रमुख कार्य क्या हैं?
6. श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का अन्तिम उद्देश्य क्या है?
7. अरविन्द के अनुसार मनुष्य 'मानस' की स्थिति में आने के लिए किन दोसोपानो को पार करता है?

9.4.3 शिक्षा का पाठ्यक्रम Curriculum of Education

श्री अरविन्द ने शिक्षा के पाँच उद्देश्य वर्णित किए हैं-शारीरिक, प्राणिक, मानसिक, अन्तःकरण और आध्यात्मिक विकास। उनके विचार से इस सभी उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए समग्र रूप से प्रयास करने होंगें और इसके उन्होंने एक विस्तृत एवं एकीकृत पाठ्यक्रम प्रस्तुत किया है।

भौतिक विकास के लिए उन्होंने पाश्चात्य विज्ञान एंव प्रौद्योगिकी को आवश्यक माना है। अतः उन्होंने इसे पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया। लेकिन उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि सबसे महत्वपूर्ण है, हमारी अपनी संस्कृति, जो कि योग की संस्कृति है। और इसके अभाव में हम, विज्ञान एवं औद्योगिकी का दुरूप्रयोग कर सकते है।

श्री अरविन्द बालक की समस्त शक्तियों को विकसित करने के लिए स्वतन्त्र वातावरण के पक्षधर हैं। उन्होंने पाठ्यक्रम में बालक की रूचियों के अनुसार, उन सभी विषयों को सम्मिलित करने का सुझाव दिया जिनमें शैक्षिक अभिव्यक्ति तथा क्रियाशीलता के गुण हों।

श्री अरविन्द ने बालक के पूर्ण विकास हेतु शिक्षा के विभिन्न स्तरो पर पाठ्यक्रम के अन्तर्गत निम्नलिखित विषयों को सम्मिलित किया है-

प्राथमिक स्तर (Primary Level)- मातृ भाषा, अग्रंजी फ्रेंच, सामान्य विज्ञान, गणित, सामाजिक अध्ययन, खेल-कूद, व्यायाम, बागवानी, चित्रकला तथा भक्तिगीत।

माध्यमिक स्तर (Secondary Level)- मातृ भाषा, अग्रंजी फ्रेंच, गणित, भौतिक विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, रसायन विज्ञान, प्राणी विज्ञान, स्वच्छता, भूविज्ञान, सामाजिक अध्ययन, व्यायाम,बागवानी कृषि, चित्रकला, अन्य हस्तशिल्प, ध्यान तथा योग।

विश्वविद्यालय स्तर/उच्च स्तर (University Level/ Higher Level)- अंग्रजी साहित्य, फ्रेंच साहित्य,गणित, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, प्राणी विज्ञान, विज्ञान का इतिहास, सभ्यता का इतिहास, जीव-विज्ञान, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, भारतीय एंव पाश्चात्य् दर्शन, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध तथा विश्व-एकीकरण तथा कृषि।

व्यवसायिक शिक्षा (Vocational education)- शिल्पकारी,चित्रकारी, फोटोग्राफी, सिलाई, कुटीर उद्योग, टंकन, आशु-लिपि, काष्ठ कला, संगीत, सिविल, मैकेनिकल तथा इलैक्ट्रीकल इंजीनियरिंग, अभिनय तथा नृत्य।

9.4.4शिक्षण विधियाँ (Teaching Methods)

शिक्षण विधियोके विषय में श्री अरविन्द के विचार पूर्णतः स्पष्ट नही है। यह सत्य है कि वे प्राचीन विधियों में नवीनता लाना चाहते थे। उन्होनें उपदेश, व्याख्यान एंव मौखिक विधियों को स्वीकृत किया, परन्तु इस शर्त पर कि बच्चो को रट कर सीखने के लिए बाध्य नहीं किया जायेगा, बल्कि वे अपने स्वयं के प्रयासों द्वारा आत्मसात करके सीखेंगे। प्राथमिक स्तर पर उन्होंने कहानी-कथन विधि की बात कही। उन्होंने पाठ्यपुस्तक विधि का भी समर्थन किया। परन्तु इस सम्बन्ध में उनका मत था कि बालक को स्वंय ज्ञान की खोज करने के लिए प्रेरित करना चाहिये तथा उसके पश्चात उसे पुस्तकें पढ़ने को कहा जाये। बालक रट कर पुस्तकों से ना सीखें, किन्तु उन्हें सहायक तथा सन्दर्भ पुस्तकों की तरह उपयोग करे। उनके विचार से योग सीखने की अधिक उपयुक्त विधि है। किन्तु उनके विचार से स्व-गतिविधि चिंतन एंव तर्क, ये सभी इसके आधार है। उनके शिक्षण से संबन्धित विचारो के विश्लेषण के पश्चात आप निम्नलिखित तथ्यों को जान पायेगें।

1. बच्चो को पढ़ाते समय, उनके शारीरिक मानसिक क्षमता एंव रूचियों को ध्यान में रखना चाहिये।
2. रटने द्वारा सीखने के सथना पर समझ कर सीखने पर बल देना चाहिये।
3. बालकों को क्रिया करने के अधिकतम अवसर प्रदान करने चाहिये और स्वानुभव द्वारा सीखने की अनुमति प्रदान करनी चाहियें।
4. बालकों को अपनी ज्ञानेन्द्रियो को नियंत्रित रखने के लिय प्रशिक्षित करना।
5. बालकों के साथ प्यार एवं सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिये।
6. मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम होना चाहिये।

पाठ्यक्रम रोचक हो।

9.4.5 अनुशासन (Discipline)

श्री अरविन्द की दृष्टि से स्वेच्छा से कर्तव्य पालन ही अनुशासन है। उनके अनुसार शिक्षा क क्षेत्र में अनुशासन का बहुत महत्व है। उन्होंने अनुशासन को भावनाओं से सम्बन्धित किया और भावनाओं को नैतिकता से संबन्धित किया। उन्होंने शिक्षा में कठोर और दमनात्मक अनुशासन का घोर विरोध किया। वे प्रभावात्मक अनुशासन के समर्थक रहे। उनके अनुसार यह शिक्षक का कर्तव्य है कि वह बच्चो के मन में ऐसे भावों को उत्पन्न करें जिससे कि वे भलाई की ओर बढ़ें, नैतिकता का पालन करें तथा एकाग्र होकर अध्ययन करें। श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षक को बालकों के समक्ष आदर्श आचरण प्रस्तुत करना चाहिये, जिससे कि वे भी सही आचरण सीखें व आदर्श नागरिक बने।

9.4.6 शिक्षक(Teacher)

श्री अरविन्द ने शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक को बच्चों के लिए एक पथ प्रदर्शक एवं सहायक शिक्षक के रूप में स्वीकार किया है।शिक्षक के स्थान के सम्बन्ध में श्री अरविन्द ने स्वयं ही लिखा है-

‘‘शिक्षक निर्देशक अथवा स्वामी नहीं है अपितु वह केवल सहायक तथा पथ-प्रदर्शक है। उसका कार्य सुझाव देना है न कि ज्ञान को थोपना। अरविन्द के अनुसार शिक्षक बालकों को ज्ञान प्रदान नही करता अपितु उनमें ज्ञान को स्वयं उत्पन्न करने कि क्षमता का विकास करने में सहायता करता है।
शिक्षक को चाहिये कि वे बतायें कि ज्ञान कहाँ है और उसे किन साधनो से प्राप्त करना चाहिये शिक्षक का यह कर्तव्य है कि वह अपने छात्रो को ज्ञानेन्द्रियों के सही प्रयोग करने का मार्ग दर्शन करे।

श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षक को मानव की आत्मा को आगे बढ़ाना चाहिये अर्थात उसका विकास करना चाहिये यह कार्य उसी व्यक्ति या शिक्षक द्वारा किया जा सकता जिसको कि आध्यात्मिक विषय का स्पष्ट ज्ञान हो और वह योगिक क्रियाओ में प्रशिक्षित हो, श्री अरविन्द शिक्षक को इस रूप में देखना चाहते हैं।

9.4.7 शिक्षार्थी (Student)

श्री अरविन्द शिक्षार्थी को शिक्षा का केन्द्र मानते हैं। उनके अनुसार प्रत्येक बालक निश्चित सामान्य क्षमताओं कुछ विशिष्ट योग्यताओं और प्रतिभाओं के साथ जन्म लेता है। प्रत्येक बालक में व्यक्तिगत क्षमताये तथा विलक्षणतायें होती है। श्री अरविन्द के अनुसार बालकों की क्षमताओं और योग्यताओ के आधार पर उनको शिक्षा प्रदान करनी चाहिये प्रत्येक बालक की व्यक्तिगत रूचियों, अभिवृत्ति एवं योग्यताओ को ध्यान में रखते हुये शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिये जिससे उसके व्यक्तित्व का पूर्ण विकास हो सके। श्री अरविन्द के अनुसार ज्ञान आत्मा में अन्तर्निहित है और इस संम्पूर्ण ज्ञान को वही प्राप्त कर सकता है जो कि ब्रह्चार्य का पालन करे। श्री अरविन्द ,विद्यार्थी से यही अपेक्षा करतें है कि वह ब्रह्चर्य का पालन कर वास्विक ज्ञान की प्राप्ति करे।इस सम्बन्ध में श्री अरविन्द स्वयं लिखतें है-

‘‘बालक को माता-पिता अथवा शिक्षक की इच्छानुकूल ढालना अन्धविश्वास तथा जंगलीपन है‘‘माता-पिता इससे बडी भूल नही कर सकते कि वे पहले से ही इस बात की व्यवस्था करें कि उनके पुत्र में विशिष्ट गुणों , क्षमताओ तथा विचारों का विकास होगा। प्रकृति को स्वयं अपने धर्म का त्याग करने के लिए बाध्य करना उसे स्थायी हानि पहुँचाना है। उसके विकास को व्युत्कृत करना है तथा उसकी पूर्णता को दूषित करना है।’’

“The idea of hammering the child into shape desired by the parent or teacher is a barbarous and ignorant superstition. There can be no great error than for the parent to arrange before hand that his son shall develop particular qualities and capacities. To force the nature to abandon its own Dharma is to do it permanent harm, mutilate its growth and deface its perfection.”

श्री अरविन्द व्यक्तिगत भिन्नता के सिद्वान्त को मानते हैं। उनकी कल्पना है कि शिक्षार्थी को विनय, परोपकार, स्वाध्याय, एकाग्रता सेवा आदि गुणों को अपने अन्दर निहित करना चाहिये। श्री अरविन्द ने बालक पर वातावरण के प्रभाव को भी स्वीकार किया है। उनका मत हे कि वातावरण बालक के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, उनका मानना है कि बालको को उच्च वातावरण में रखना चाहिये जिसमें कि उनके अनुभूति के अंगो का विकास एवं प्रशिक्षण हो सके और वे सत्य की खोज की ओर अग्रसर हो सकें।

9.4.8 विद्यालय (School)

श्री अरविन्द के अनुसार विद्यालय को बच्चो के भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास में सहायक होना चाहिये उनके अनुसार विद्यालय का वातावरण विश्व-बन्धुत्व की भावना से पूर्ण होना चाहिये। श्री अरविन्द ने बालक के भौतिक विकास के लिए भाषा, साहित्य सभ्यता एवं संस्कृति गणित एवं विज्ञान पर बल दिया और आध्यात्मिक विकास हेतु मानव सेवा कर्तव्य पालन एवं ध्यान आदि को

महत्वपूर्ण स्थान दिया। इस प्रकार उन्होंने बालक के सम्पूर्ण विकास के लिए भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनो पक्षों पर समान बल दिया।

श्री अरविन्द के अनुसार विद्यालयों को भौतिक प्रगति एवं योग साधना का केन्द्र होना चाहिये जिससे कि एक बालक का सम्पूर्ण विकास हो सके।

श्री अरविन्द ने मानव और मानव के बीचा कोई भेदभाव नहीं रखा उन्होंने जाति, धर्म, आर्थिक स्थिति ,रंग आदि किसी भी आधार पर भेदभाव को स्वीकार नहीं किया वे सभी बालको को समान अवसर प्रदान करने के पक्षधर हैं उन्होंने विद्यालय में विश्व-बन्धुत्व के वातावरण को विकसित करने की बात कही।श्री अरविन्द "अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र" जिसकी स्थापना श्री अरविन्द द्वारा पाँडेचेरी में की गयी है, वह इसी प्रकार का शिक्षा का केन्द्र है।

9.5.श्री अरविन्द के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन(Evaluation of Sri Aurobindo's Educational Thought)

श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनो पक्षों का विकास करती है।
उन्होंने ने शिक्षा को एक बहुउद्देशीय प्रक्रिया माना जिसके द्वारा बालको को शारीरिक, मानसिक, सांस्कृतिक,आध्यात्मिक, नैतिक विकास होता है।
श्री अरविन्द ने स्वयं द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु एक विस्तृत पाठयक्रम प्रस्तुत किया साथ ही साथ उन्होंने शिक्षा के विभिन्न स्तरों के लिए विभिन्न पाठयक्रम भी प्रस्तुत किया।
यदि श्री अरविन्द द्वारा प्रस्तुत पाठयक्रम का विश्लेषण किया जाये तो यह बात तो स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है कि उन्होने एक व्यापक पाठ्यक्रम प्रस्तुत किया है। परन्तु प्रारम्भ से ही मातृ-भाषा के साथ अन्य विदेशी भाषा पढाने का कोई तर्क समझ नही आता। अनतर्राष्ट्रीय महत्व पर अधिक बल दिया गया है। सामान्यतया इसकी आवश्यकता इतनी नही है।

श्री अरविन्द ने शिक्षा को आधुनिक रूप प्रदान करने का हर सम्भव प्रयास किया है। उन्होंने भारतीय एवं पाश्चात्य सभी उपयोगी ज्ञान को पाठ्यक्रम में स्थान दिया।

श्री अरविन्द के शिक्षण विधियों को लेकर विचार स्पष्ट नही है। कभी वे प्राचीन विधियों का समर्थन करते है और कभी आधुनिक विधियों का, उन्होने पूर्ण रूप से रट कर सीखने का विरोध किया। उन्होंने योग को सीखने की उत्तम विधि माना है।

योग को सीखने की उत्तम विधि मानने का उनका मत उत्तम है। परन्तु अभी वर्तमान समय में योग को मन को एकाग्र करने के रूप में लिया जा सकता है ना कि कर्म योग की तरह।

श्री अरविन्द के अनुसार स्वेच्छा से कर्तव्य पालन ही अनुशासन है, उनके अनुसार अनुशासन स्थापित करने के लिए तो शिक्षक को आदर्श व्यवहार प्रस्तुत करना चाहिये और यदि बालक अनुशासन का पालन न करें तो उन्हें प्यार व स्नेह द्वारा समझाना चाहिये। उन्होंने दण्ड को अमानवीय माना है।

इसमें दो मत नहीं हैं कि अध्यापक द्वारा आदर्श व्यवहार, अनुशासन स्थापित करने के लिए आवश्यक है परन्तु केवल स्नेह द्वारा बालकों को अनुशासित रखना सफल नहीं हो सकता, कभी-कभी दण्ड भी आवश्यक है, परन्तु यह दण्ड सीमित हो।

श्री अरविन्द शिक्षक को ज्ञान प्रदान करने वाले की भूमिका में नहीं देखते वरन एक पथ-प्रदर्शक एवं निर्देशक के रूप में ही मानते हैं जो कि बालक के स्वतन्त्र विकास में सहायता प्रदान करता है।

बालक के स्वतन्त्र विकास की बात का समर्थन करना सही प्रतीत होता है परन्तु औपचारिक शिक्षा इस रूप में प्रदान नहीं की जा सकती। शिक्षक को योगी बना देना व्यवहारिक नहीं है। यह एक शिक्षक के ओर से पर्याप्त नहीं है।

श्री अरविन्द बालक की वैयक्तिकता का सम्मान करतें है। उन्होंने बालको की वैयक्तिक भिन्नताओं को ध्यान में रखते हुये शिक्षा की व्यवस्क्था की, उन्होंने बालक के भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास पर बल दिया और इन दोनो पक्षों के विकास हेतु उन्होंने ब्रह्मचर्य पालन को महत्व दिया। श्री अरविन्द ने भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए ब्रह्मचर्य को महत्तवपूर्ण माना है।

जहाँ तक ब्रह्मचर्य पालन का प्रश्न है। यह उचित प्रतीत होता है। परन्तु सत्य की खोज हेतु ध्यान आज के आधुनिक परिदृश्य में व्यवहारिक नहीं है।श्री अरविन्द का तर्क है कि विद्यालय योग साधना का केन्द्र हो यह सब को स्वीकार्य नहीं हो सकता। परन्तु मनुष्य को वास्तविक खुशी और शान्ति की प्रप्ति हेतु इसका पालन करना चाहिये। विद्यालयों को बालकों के भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास हेतु प्रयत्न करने चाहिये जिससे कि बालको के व्यक्तित्व का सन्तुलित विकास हो सके। एक दार्शनिक के रूप में श्री अरविन्द ने भारतीय दर्शन को एक वैज्ञानिक पुट देने का प्रयास किया। वे विश्व बन्धुत्वमें विश्वास करते हैं।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

8. श्री अरविन्द ने पाठ्यक्रम किन विभिन्न स्तरों में बाँटा?
9. श्री अरविन्द के अनुसार सीखने की अधिक उपयुक्त विधि क्या है?
10. श्री अरविन्द……………… अनुशासन के समर्थक हैं।
11. श्री अरविन्द ने शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक को किस रूप में स्वीकार किया है

9.6 सारांश

श्री अरविन्द अधुनिक भारत के महान ऋषि कहे जाते सकते है, उन्होंने भारत में 'राष्ट्रवादी आन्दोलन' को प्रेरणा प्रदान की, वे भरत में पुनर्जागरण आन्दोलन के सूत्रधार भी माने जाते हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में इनका योगदान अधिक सराहनीय है। श्री अरविन्द ने अपने पूर्वी और पश्चिमी दर्शन, धर्म, साहित्य तथा मनोविज्ञान को अपने लेखन में संश्लेषित किया।

श्री अरविन्द श्रीमद् भागवत गीता के बहुत बड़े उपासक थें। उन्होने गीता के 'कर्म योग, व ध्यान योग का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया।

श्री अरविन्द मानवजाति को अज्ञान, अंधकार व मृत्यु से ज्ञान, प्रकाश व अमरत्व की ओर ले जाना चाहते हैं। अतः उनकी विचारधारा सर्वांग योग दर्शन कहलाती है। श्री अरविन्द के अनुसार ईश्वर इस ब्रह्माण्ड का निर्माता हैं। इनके मतानुसार विकास की दो दिशाएँ हैं- अवरोहण और आरोहण। श्री अरविन्द के अनुसार भौतिक एंव आध्यात्मिक दोनो तत्वो में मूल तत्व ब्रह्म है। अतः भौतिक तथा आध्यात्मिक तत्वों के मध्य भेद को जानना ही सच्चा ज्ञान है। श्री अरविन्द के अनुसार मनुष्य जीवन का परम उद्देश्य सत+ चित + आनन्द की प्राप्ति है। श्री अरविन्द ने शिक्षा की राष्ट्रीय योजना प्रस्तुत की। श्री अरविन्द ने शिक्षा के पाँच उद्देश्य वर्णित किए हैं-शारीरिक, प्राणिक, मानसिक, अन्तःकरण और आध्यात्मिक विकास। उनके विचार से इस सभी उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए समग्र रूप से प्रयास करने होंगें और इसके उन्होंने एक विस्तृत एंव एकीकृत पाठ्यक्रम प्रस्तुत किया है। एक दार्शनिक के रूप में श्री अरविन्द ने भारतीय दर्शन को एक वैज्ञानिक पुट देने का प्रयास किया। वे विश्व बन्धुत्व में विश्वास करतें हैं

9.7 शब्दावली

1. तत्वमीमांसा- वास्तविकता का विज्ञान
2. ज्ञानमीमांसा- ज्ञान का विज्ञान
3. मूल्यमीमांसा- मूल्य का विज्ञान
4. अवरोहण- उच्च स्तर से निम्न स्तर की ओर जाना
5. आरोहण- निम्न स्तर से उच्च स्तर की ओर जाना

9.8 स्वमूल्याँकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. ईश्वर

2. सत
3. चित + आनन्द
4. नेशनल सिस्टम ऑफ एजुकेशन, ऑफ ऐजुकेशन
5. श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा के दो प्रमुख कार्य है-
    i. मनुष्य को उसके विकास की प्रक्रिया से परिचित कराना।
    ii. मनुष्य में सत के सोपान तक पहुँचने की शक्ति का विकास करना।
6. श्री अरविन्द के अनुसार, आध्यात्मिक विकास ही शिक्षा का अन्तिम उद्देश्य है।
7. श्री अरविन्द का मानना था कि मनुष्य ‘मानस‘ की स्थिति में आने के लिए‘द्रव्य‘ एंव ‘प्राण‘ दो सोपानो को पार करता है।
8. श्री अरविन्द ने पाठयक्रम को इन स्तरों में बाँटा-
   प्राथमिक स्तर, माध्यमिक स्तर, विश्वविद्यालय स्तर, व्यवसायिक शिक्षा
9. श्री अरविन्द के अनुसार योग सीखने की अधिक उपयुक्त विधि है।
10. प्रभावात्मक अनुशासन
11. श्री अरविन्द ने शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक को बच्चों के लिए एक पथ प्रदर्शक एवं सहायक शिक्षक के रूप में स्वीकार किया है।

9.9 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. लाल एण्ड पलोड, एजुकेशनल थॉट एण्ड प्रैक्टिस, आर0लाल प्रकाशन ,मेरठ।
2. पाण्डा, अनिल कुमार, (2011) शिक्षा दर्शन, साहित्य रत्नालय्, कानपुर।
3. सक्सेना, एन0आर0 स्वरूप, शिखा चतुर्वेदी (2010) उदीयमान भारतीय समाजमें शिक्षक, आर लाल प्रकाशन, मेरठ।
4. एलैक्स शीलू मैरी,(2008) शिक्षा दर्शन, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. ओड, एल0के0, शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, राजस्थान ग्रंथ अकादमी।

9.10 निबंधात्मक प्रश्न(Long Answer Questions)

1. श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का अर्थ क्या है? श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा के उद्देश्यों को वर्णित कीजिए।
2. श्री अरविन्द के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन कीजिए?
3. .श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा के पाठ्यक्रम को स्पष्ट कीजिए।
4. अनुशासन के बारे में श्री अरविन्द का क्या कहना है? संक्षेप में लिखिए।

इकाई-10 समकालीन भारतीय परिप्रेक्ष्य
Contemporary Indian Perspective

10.1 प्रस्तावना
10.2 उद्देश्य
10.3 लोकतंत्र और शिक्षा
10.3.1 शिक्षा के लिए संवैधानिक प्रावधान
10.4 राष्ट्रीयता और शिक्षा
10.4.1 शिक्षा और उदारीकरण
10.4.2 शिक्षा और निजीकरण
10.4.3 शिक्षा और भूमण्डलीकरण
10.5 सूचना और संचार तकनीक
10.6 सारांश
10.7 शब्दावली
10.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
10.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
10.10 निबन्धात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

भारत के संविधान का निर्माण संविधान सभा द्वारा बनाया गया, जिसमें एक प्रारूप समिति थी। जिनके अध्यक्ष डॉ. भीमराव अम्बेडकर जी थे। जिन्होंने भारत को एक लिखित एवं विस्तृत संविधान प्रदान किया। संविधान सभा की प्रथम बैठक 9 दिसंबर, 1946 को हुई थी। सभा ने 26 नवम्बर, 1949 को संविधान को अंगीकार कर लिया। संविधान में प्रस्तावना के अलावा 1 से 10 अनुसूचियां, 1 से 395 धाराएं और एक परिशिष्ट है। संविधान के द्वारा भारत के सभी बालकों को शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार प्रदान किए गये। साथ ही शिक्षा ने वैश्वीकरण, निजिकरण व भूमण्डलीकरण के क्षेत्र में भी तेजी से विकास किया। आज हम शिक्षा को अपने ही देश में प्राप्त न कर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी प्राप्त कर रहे हैं। शिक्षा ने सभी के लिए चतुर्मुखी द्वार खोल दिये हैं।

10.2 उद्देश्य

1. शिक्षा के संवैधानिक प्रावधानों का अध्ययन कर सकेंगे
2. शिक्षा और लोकतंत्र की व्यवस्थ का अध्ययन कर सकेंगे
3. शिक्षा और उदारीकरण का अध्ययन कर सकेंगे
4. शिक्षा और निजीकरण का अध्ययन कर सकेंगे
5. शिक्षा और भूमण्डलीकरण का अध्ययन कर सकेंगे
6. सूचना और संचार तकनीक का अध्ययन कर सकेंगे

10.3 शिक्षा व जनतंत्र (Education and Democracy)

डी. वी. के विचारों का शिक्षा पर बड़ा प्रभाव पड़ा। शिक्षा-क्षेत्र में कार्य करने वाले व्यक्ति धीरे-धीरे शिक्षा को जनतांत्रिक सिद्धान्तों पर आधारित करने लगे। शिक्षा में जनतांत्रिक विचारधारा निम्नलिखित रूपों में हमारे सामने आती है:-

1. शिक्षा में जाति, सम्प्रदाय और वर्ग के बंधन टूट रहे हैं।
2. शिक्षा की ज्योति सभी व्यक्तियों तक पहुंच रही है। शिक्षा मानव का जन्मसिद्ध अधिकार है। अतः प्रत्येक
3. व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है।
4. उपर्युक्त सिद्धान्त के आधार पर एक निश्चित अवधि तक निःशुल्क, अनिवार्य एवं सार्वभौमिक शिक्षा की व्यवस्था हो रही है।
5. शैक्षिक अवसरों की समानता का सिद्धान्त बल पकड़ रहा है।
6. जनतंत्रीय शिक्षा में बालक को अधिकाधिक स्वतंत्रता प्रदान की जाती है।
7. पाठ्यक्रम को विस्तृत, लचीला एवं समाज की आवश्यकताओं के अनुकूल बनाने का प्रयत्न हो रहा है।
8. पाठ्यक्रम का निर्माण इस प्रकार हो रहा है कि बालक उद्देश्य सहित क्रिया की ओर मुड़ सके।
9. पाठ्यक्रम के निर्माण में अध्यापक का हाथ होना चाहिए। अध्यापक के व्यक्तित्व का जनतंत्र में महत्व है।
10. प्रधानाध्यापक का अध्यापकों के साथ, अध्यापकों का छात्रों के साथ एवं इन सबका पारस्परिक संबंध
11. समानता के आधार पर हो और विश्वविद्यालय की नीति के निर्माण में सभी का योगदान हो।
12. कक्षा-शिक्षण में भी जनतंत्र के सिद्धान्तों का पालन हो। छात्रों पर कम से कम नियंत्रण हो। अध्यापक
13. छात्रों का इस प्रकार मार्गदर्शन करें कि वे स्वयं ज्ञान की खोज में अग्रसर हो सकें।

14. सीखने में सामाजिक तत्वों का विशेष महत्व है। अतः कक्षा में सामाजिक अनुभव अवश्य प्रदान किए जाएँ ।

10.3.1 शिक्षा के संवैधानिक प्रावधान (Constitutional Provisions For Education)

हमारे संविधान में शिक्षा संबंधी निम्न प्रावधान निहित हैं:-

1. अनिवार्य तथा निःशुल्क शिक्षा- संविधान की 45वीं धारा के अनुसार राज्य 14 वर्ष की आयु पूरी करने तक सभी बच्चों के लिए संविधान लागू होने से दस वर्ष के अंदर स्वतंत्र व अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करने का प्रयत्न करेगा।
2. धार्मिक शिक्षा- संविघान की इक्कीसवीं धारा के अनुसार किसी धर्म विशेष के प्रचार के लिए कर या दान देने के लिए किसी व्यक्ति को बाध्य नहीं किया जा सकता है। धारा-28 (1) में कहा गया है कि पूरी तरह राज्य के धन से चलने वाली किसी शिक्षण संस्था में धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाएगी। धारा-22 (2) में कहा गया है कि सहायता प्राप्त या राज्य से मान्यता प्राप्त शिक्षण संस्थाओं के किसी सदस्य को उस संस्था द्वारा चलाए जा रहे किसी धार्मिक अनुष्ठान में भाग लेने के लिए विवश नहीं किया जा सकता है। धारा-28 के अनुसार अन्य धर्मो के अनुयायियों को उनकी सहमति के बिना धार्मिक अनुदेशन नहीं देना चाहिए।
3. दृश्य सामग्री- धारा-49 में कहा गया है कि राज्य प्रत्येक स्मारक या संसद द्वारा राष्ट्रीय महत्व के घोषित स्थान व वस्तुओं का संरक्षण करे।
4. अल्पसंख्यकों की शिक्षा- धारा-30 के अनुसार अल्पसंख्यक समुदाय को मनपसंद शैक्षिक संस्थाएं स्थापित करने व उनका प्रशासन करने का अधिकार प्राप्त है व अनुदान देते समय इन विद्यालयों के साथ इस कारण भेदभाव नहीं किया जा सकता है कि वे धार्मिक समुदाय द्वारा संचालित हैं।
5. पिछड़े वर्ग की शिक्षा-पिछड़ों वर्गो की शिक्षा संबंधी संवैधानिक धाराएं व उनमें कही गई बातें निम्न हैं:
    i. धारा-17- अस्पृश्यता निवारण व किसी भी रूप में अस्पृश्यता का प्रयोग वर्जित है।
    ii. धारा-24- 14 वर्ष से कम आयु वाले किसी बच्चे को किसी फैक्ट्री,, खान या अन्य खतरनाक रोजगार
    iii. में कार्य करने के लिए नियुक्त नहीं किया जा सकता है।
    iv. धारा-23- मनुष्यों के क्रय-विक्रय व बेगार पर रोक लगी रहेगी।
    v. धारा-15- हिन्दुओं के सभी सार्वजनिक धार्मिक संस्थानों के द्वार पिछड़े वर्गो के लिए खुले रहेंगे।
    vi. धारा-16 व 335- राज्यों को सार्वजनिक सेवाओं में स्थान आरक्षित करने की छूट रहेगी।

vii. धारा-46- पिछड़ों वर्गो के शैक्षिक व आर्थिक हितों के उन्नयन तथा उन्हें सामाजिक अन्याय व सभी प्रकार के शोषण से सुरक्षा मिलेगी।

6. केन्द्र व राज्य के शैक्षिक दायित्व- भारतीय संविधान में केन्द्र व राज्य सरकार के शैक्षिक दायित्व का वर्णन किया गया है। केन्द्र सरकार शिक्षा सुविधाओं के समन्वय, उच्च वैज्ञानिक व तकनीकी शिक्षा के स्तरों के निर्धारण तथा हिन्दी व अन्य सभी भारतीय भाषाओं में शोध कार्य व उनकी अभिवृद्धि के लिए उत्तरदायी है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. प्रारूप समिति के अध्यक्ष कौन थे ?
2. संविधान में कितनी अनुसूचियां हैं ?
3. संविधान की धारा-45 का संबंध किससे है ?
4. शिक्षा को संविधान की समवर्ती सूची में कब रखा गया ?
   (A) 1949 (B) 1950 (C) 1971 (D) 1976

10.4 राष्ट्रवादऔर शिक्षा (Nationalism and Education)

माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार-''राष्ट्रीय एकता उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा का

मुख्य उद्देश्य देश-प्रेम के भाव जागृत करना हो।'' आयोग ने देश-प्रेम के संबंध में चार बातें बताई हैं:-

1. राष्ट्रीय हित के लिए व्यक्तिगत हित का त्याग।
2. देश की निर्बलताओं को स्वीकार करने की तत्परता।
3. व्यक्ति की योग्यतानुसार देश की सर्वोत्तम सेवा।
4. देश की सामाजिक और सांस्कृतिक उपलब्धियों का उचित मूल्यांकन।

10.4.1 शिक्षा और उदारीकरण(Education and Liberatization)

शिक्षा को गुणात्मक और संघात्मक विकास के नाम पर समाज दो भागों में विभाजित सा हो गया है। आज शिक्षा, मेडिकल, इंजीनियरिंग, तकनीकि, व्यावसायिक शिक्षा में उदारीकरण तेजी से पनप रहा है। जहां शिक्षा कुछ वर्गो तक ही सीमित थी, वहां संविधान ने शिक्षा के द्वार सभी के लिए खोल दिए हैं। सरकारी व गैर सरकारी संस्थानों में शिक्षा प्राप्त करना आसान हो गया है। यह सरकार की उदारीकरण की नीति का ही परिणाम है। सरकार व जनता यह समझ गयी है कि हमें आज शिक्षा पर धन खर्च करने की अधिक आवश्यकता है, क्योंकि शिक्षा पर खर्च किया गया धन कभी भी व्यर्थ नहीं जाता है। इसलिए अभिभावक अपनी कमाई का अधिकतर हिस्सा शिक्षा पर खर्च करते हैं,

जिसको पूंजीपतियों ने इसे भांप लिया है। वे सरकार से लोन लेकर बड़े-बड़े संस्थान बना रहे हैं और छात्रों को उन संस्थानों में प्रवेश देकर उनसे मोटी रकम प्राप्त कर रहे हैं।

उदारीकरण से हमारा अभिप्राय शिक्षा के द्वार सभी लिए खोलना व सभी के लिए शिक्षा की व्यवस्था करना है। अर्थात् सरकार द्वारा शिक्षा की उचित व मान्य व्यवस्था करना तथा इन संस्थानों को खोलने में ज्यादा आनाकानी न करना। भारत में सन् 1960 में इंजीनियरिंग संस्थानों के मामलों में निजी क्षेत्रों को 7 प्रतिशत सीटें प्राप्त होती थीं। आज उनको 86.40 प्रतिशत सीटें प्राप्त हैं। मेडिकल में 6.8 प्रतिशत से बढ़ाकर 40.9 प्रतिशत हो गया है। यही हाल माध्यमिक शिक्षा के लिए तैयार हो रहे बी.एड शिक्षण संस्थानों का है, जहां इनकी बाढ़ सी आ गयी है। सरकार द्वारा इन निजी संस्थानों को 50 प्रतिशत सीटें स्वयं भरने का अधिकार दिया गया है जो कि यह सरकार की उदारीकरण की नीति का ही परिणाम है।

10.4.2 शिक्षा और निजीकरण (Education and Privatization)

शिक्षा के गुणात्मक और संघात्मक विकास के लिए हम निजीकरण शिक्षा की ओर बढ़ रहे हैं। यदि निजीकरण की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को देखें तो मैकाले मिनिट के माध्यम से ही भारत में शिक्षा में निजीकरण की व्यवस्था थी। यद्यपि उस समय निजीकरण के कारण कुछ अन्य थे। उस समय छनाई सिद्धान्त के माध्यम से शिक्षा को समृद्ध परिवारों तक सीमित किया गया तथा समृद्ध परिवारों को शिक्षित वर्ग से छानकर शिक्षा भारत के जन-साधारण तक पहुंचाने की कल्पना की गई जो न तो पूरी होने की संभावना थी न ही पूरी हुई। इसके विपरीत छनाई सिद्धान्त पूरे देश को दो भागों में विभक्त कर गया, एक समृद्ध शिक्षित वर्ग तथा दूसरा आरक्षित कमजोर वर्ग, जिसके परिणाम दूरगामी थे।

आज भारत सहित दुनिया के अधिकतर देश निजीकरण की शिक्षा को प्रोत्साहित कर रहे हैं। देश में आज सरकारी संस्थाओं या कालेजों के बजाय निजी संस्थान तेजी से अपने पांव पसार रहे हैं। चाहे वे प्राथमिक शिक्षण संस्थान हों अथवा उच्च शिक्षण संस्थान। ये संस्थान बिना मापदण्ड पूरा किए गली-मुहल्लों में खुल रहे हैं। जहां अग्रेजी माध्यम का बोर्ड लगाने भर मात्र से अभिभावकों को लूटा जा रहा है। अभिभावक भी लुटना चाहता है। आज अभिभावकों के मन में यह बात घर कर गई है कि जिस विद्यालय, कॉलेज, संस्थान की जितनी ज्यादा फीस होगी वह उतना ही अच्छा होगा। पूंजीपति आज इस बात को भांप गये हैं और शिक्षा को ऊंचे दामों में बेच रहे हैं। आज लोगों के पास धन की कोई कमी नहीं है। धनी व्यक्ति धन के बदले निजी संस्थानों से डिग्रियां बटोरकर अच्छी खासी नौकरी भी प्राप्त कर रहे हैं। अतः शिक्षा के निजीकरण को रोका जाना अति आवश्यक है।

10.4.3 शिक्षा और भूमण्डलीकरण (Educationand Globalization)

शिक्षा मानव का अमूल्य उपहार है, जिसको प्रत्येक मानव को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। शिक्षा आज अपने गांव या शहर की सीमाओं तक सीमित न रहकर वह राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रदान की जा रही है। पहले साधनों के अभाव के कारण लोग अपने आसपास के क्षेत्रों तक शिक्षा

प्राप्त करते थे, लेकिन आज साधनों ने इस दूरी को कम कर दिया है। आज हम अपने ही राष्ट्र में न केवल शिक्षा प्राप्त करतें हैं बल्कि उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए अन्य देशों में भी जाते हैं। अने विदेशी छात्र भारत में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। यह भूमण्डलीकरण का ही नतीजा है।

भूमण्डलीकरण से हमारा अभिप्राय इस सम्पूर्ण संसार को एक सीमा में बांधना हैं। जिसके कारण हमारी संस्कृति का प्रभाव अन्य देशों को प्रभावित कर भारत की ओर आकर्षित करता है। भूमण्डलीकरण आज विशाल क्षेत्र न होकर सीमाओं में बंध गया है। आज न केवल धनी लोगों के ही बच्चे विदेशों में शिक्षा ग्रहण करने के लिए जाते हैं, बल्कि आज जागरूक नागरिक का बच्चा भी छात्रवृत्तिया बैंक से कर्ज लेकर विदेशी डिग्री प्राप्त कर रहा है।

इस शिक्षा के विकास में मुक्त विश्वविद्यालयों ने भी अपना अमूल्य योगदान दिया है। आज हम बैठे शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। भारत में इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय जो सन् 1985 में स्थापित हुआ था, आज विश्व में इसके अनेकों केन्द्र बन गए हैं, जो भूमण्डलीकरण का एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत कर रहा है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

5. ‘‘राज्य प्रत्येक स्मारक या संसद द्वारा राष्ट्रीय महत्व के घोषित स्थान व वस्तुओं का संरक्षण करे।’’ यह किस अनुच्छेद में कहा गया है ?
6. किस अनुच्छेद में 14 वर्ष से कम बच्चे को काम पर रखने पर दण्ड का प्रावधान है ?
7. राज्यों को सार्वजनिक सेवाओं में स्थान आरक्षित करने की छूट किस अनुच्छेद के अंतर्गत रहेगी ?
8. भारत में जनतंत्रीय नागरिकता के विकास का शैक्षिक उद्देश्य किसने कहा-
   (A) हन्टर कमीशन (B) सैडलर कमीशन
   (C) मुदालियर कमीशन (D) संस्कृत कमीशन

10.5 सूचना और संचार तकनीक(Information and Communication Techniques)

शैक्षिक तकनीक में अद्यतन विकास (Latest Developement In Education Technology)

शैक्षिक तकनीक के घटक निम्नलिखित हैं:-

i. डायल पहुंच (Dial Access)
ii. शैक्षिक टेलीविजन (Educational Television)
iii. विडियो (Video)

iv. अन्तःक्रियात्मक विडियो (Interactive Video)
v. विडियोटेक्स्ट (Videotext)
vi. ई-मेल (E-mail)
vii. कम्प्यूटर (Computer)
viii. कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन (Computer Assisted Instruction)

1. **डायल पहुंच (Dial Access)**- डायल पहुंच का तात्पर्य शिक्षा में टेलीफोन नेटवर्किंग से है। डॉयल पहुंच के माध्यम से विद्यार्थी ऑडियो डिलीवर व्यवस्था एवं अपनी पसंद का निवेदन करते हैं। टेलीफोन करने वालों को वृहद पुस्तकालय एवं शिक्षा संबंधित ऑडियो कैसेट कार्यक्रमों की सुविधा मिल जाती है।
2. **शैक्षिक टेलीविजन (Educational Television)-** भारत में शैक्षिक टेलीविजन शिक्षा की लोकप्रिय पद्धति है। आप विभिनन स्तरों पर विशिष्ट शैक्षिक टेलीविजन कार्यक्रमों के संपर्क में आओगे। जैसे-केन्द्रीय शैक्षिक तकनीकी संस्था (CIET) एवं राज्य शैक्षिक तकनीकि संस्थान (SIET) द्वारा विकसित विद्यालय स्तरीय शैक्षिक टेलीविजन, विश्वविद्यालय अनुदान आयोगा (UGC) द्वारा महाविद्यालय स्तरीय देशव्यापक कक्षा-कक्ष कार्यक्रम, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (IGNOU) द्वारा विकसित दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम आदि। आपने निश्चित रूप से दूरदर्शन राष्ट्रीय नेटवर्क द्वारा प्रसारित प्रौढ़ शिक्षा, कृषक विस्तार शिक्षा कार्यक्रम आदि से संबंधित विशिष्ट शैक्षिक टेलीविजन कार्यक्रम देखे होंगे। भारत में सेटलाइटों के सफल प्रक्षेपणों के माध्यम से प्रसारण के वैकल्पिक चैनल खोलने में सुविधा हो गयी है। शैक्षिक टेलीविजन द्वारा इन सुविधाओं का भरपूर उपयोग किया जाता है।
3. **वीडियो (Video)**- शिक्षा एवं प्रशिक्षण गतिविधियों में विडियो कार्यक्रमों का काफी प्रयोग बढ़ गया है। विशिष्ट विडियो कार्यक्रम अध्यापन कौशल के विकास, गतिविधियों के प्रदर्शन, विचारों के चित्रण में हमारी सहायताकरते हैं। विद्यार्थी अपनी आवश्यकता एवं सुविधायुक्त विडियो कैसेटों का प्रयोग कर सकता है। विडियो कैसेट रिकार्डरों पर विडियो कार्यक्रमों को रिकार्ड करना एवं उनको देखना काफी लोकप्रिय है।
4. **अन्तःक्रियात्मक विडियो (Interactive Video) -** अन्तःक्रियात्मक विडियो के माध्यम द्वारा समीक्षक को प्रस्तुतकर्ता से अन्तःक्रिया करने की सुविधा प्राप्त होती है। टेलीविजन पटल पर विडियो लेखन के दौरान समीक्षक प्रश्न पूछ सकते हैं। उन्नत संचार तकनीक प्रस्तुतकर्ता एवं समीक्षक के मध्य दोनों ओर से अन्तःक्रिया को बढ़ावा देती है। प्रश्नों के उत्तर विडियो शिक्षक के द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं। विद्यार्थी को टेलीविजन पटल, जो कि विडियो डिस्क से जुड़ा होता है, से स्वरूपित अन्तःक्रिया होती है।
5. **विडियोटेक्स्ट (Videotext)-** विडियोटेक्स्ट के अंतर्गत टेलीफोन लाईनों द्वारा जुड़े टेलीविजन रूटों के माध्यम से पाठ एवं रेखाचित्र ग्राफिक्स प्रस्तुत किए जाते हैं। दर्शक विडियोटेक्स्ट के

माध्यम द्वारा प्रश्न पूछ सकता है। इन प्रश्नों का उत्तर पहले से ही कम्प्यूटर के पास संग्रहित होता है। विद्यार्थी के प्रश्नों के अनुसार उत्तर टीवी पटल पर आ जाता है। उदाहरण के लिए-एक दूरस्थ शिक्षा का विद्यार्थी खुले विश्वविद्यालय द्वारा प्रस्तुत पाठ्यक्रमों, काउन्सलिंग समय, परिक्षाएं आदि के बारे में विशिष्ट जानकारी प्राप्त करना चाहता है तो उसे इस तरह की सूचनाएं विडियोटेक्स्ट के माध्यम से प्राप्त हो सकती हैं।

6. **ई-मेल (E-mail) -** इलेक्ट्रानिक मेल को ईमेल के नाम से जाना जाता है। दूरसंचार संपर्क के प्रयोग द्वारा ई-मेल के माध्यम से आंकड़े, बिम्ब तथा जुबानी सूचनाएं भेजी जा सकती हैं। भेजने वाले के कम्प्यूटर से सूचना प्रारम्भ होकर एक या बहुत से प्राप्तकर्ताओं के कम्प्यूटर पर प्राप्त होती है। वे इन सूचनाओं को भू-मण्डल के किसी भी दूर-दराज के क्षेत्र में अपने कम्प्यूटर पर प्राप्त कर सकते हैं। ई-मेल के माध्यम से शिक्षकों, शोधकर्ताओं, विद्यार्थियों तथा शैक्षणिक प्रशासकों को तीव्र सूचनाएं भेजी जा सकती हैं।
7. **कम्प्यूटर (Computer) -** यह इस युग की उन्नत तकनीकि की बहुत ही महत्वपूर्ण देन है। आप कम्प्यूटर का प्रयोग आंकड़ों को एकत्र करने, एक जगह से दूसरी जगह संदेश भिजवाने, विभिन्न स्थितियों में आंकड़ों के परीक्षण आदि में कर सकते हैं। कम्प्यूटर में तीव्र स्मरण शक्ति, गणना क्षमता, बहुत सारे आंकड़ों के संग्रहण तथा समस्या समाधान की क्षमता होती है। शैक्षणिक स्थितियों में पाठ्यक्रम के विभिन्न चरणों में कम्प्यूटर आधारित निर्देशों का प्रयोग काफी लोकप्रिय हो गया है।
8. **कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन (Computer Assisted Instruction)-** कम्प्यूटर सहायतित निर्देश स्व-निर्देशन का लोकप्रिय तरीका है। स्व-निर्देशित पैकेजों को कम्प्यूटर में संग्रहित किया जाता है। विद्यार्थी कम्प्यूटर सहायतित निर्देशन के माध्यम द्वारा चरणगत रूप से अधिगम गतिविधियों के साथ आगे बढ़ता है। विद्यार्थियों को प्रतिक्रिया हेतु फीडबैक दिया जाता है, विद्यार्थी अपनी सुविधानुसार प्रगति कर सकता है। सामग्री प्राप्त कर सकता है तथा उसका चयन कर सकता है। वह स्वतंत्र रूप से निर्देशन स्तर का क्रम तय कर सकता है। प्रत्येक विद्यार्थी की प्रगति का मूल्यांकन किया जा सकता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

9. यूजीसी (UGC) को पूर्ण रूप में लिखिए।
10. इग्नू (IGNOU) को पूर्ण रूप में लिखिए।
11. ई-मेल (E-Mail) को पूर्ण रूप में लिखिए।
12. कम्प्यूटर का एक मुख्य कार्य बताईये।

10.6 सारांश

भारत एक लोकतांत्रिक देश है। यहां प्रत्येक व्यक्ति को अपना चतुर्मुखी विकास करने का मौका दिया गया है। संविधान द्वारा भारत के नागरिकों को शिक्षा संबंधी अनेक अधिकार प्रदान किए गये हैं। समय-समय पर अनेक शैक्षिक कार्यक्रम चलाकर समाज को एक नई दिशा देने का प्रयास किया जाता है। आज शिक्षा सरकारी संस्थानों तक ही सीमित न रहकर वैश्वीकरण व निजीकरण की ओर बढ़ रही है और भूमण्डलीकरण के कारण एक देश के व्यक्ति अन्य देशों में शिक्षा प्राप्त करने हेतु जा रहे हैं। आज शिक्षा को धनी व सम्पन्न व्यक्ति धन के बल पर खरीद रहे हैं व उसको प्राप्त कर महंगे दामों में भी बेच रहे हैं, जिससे गरीब वर्ग पुनः पिछड़ रहा है। आज आवश्यकता है सरकारी कॉलेजों व संस्थानों पर ध्यान देने की, जिससे उनमें गुणात्मक वृद्धि कर योग्य नागरिकों का निर्माण किया जा सके।

10.7 शब्दावली

1. डायल पहुंच **(Dial Access)** - डायल पहुंच का तात्पर्य शिक्षा में टेलीफोन नेटवर्किंग से है। डॉयल पहुंच के माध्यम से विद्यार्थी ऑडियो डिलीवर व्यवस्था एवं अपनी पसंद का निवेदन करते हैं। टेलीफोन करने वालों को वृहद पुस्तकालय एवं शिक्षा संबंधित ऑडियो कैसेट कार्यक्रमों की सुविधा मिल जाती है।
2. ई-मेल **(E-mail)** - इलेक्ट्रानिक मेल को ईमेल के नाम से जाना जाता है। दूरसंचार संपर्क के प्रयोग द्वारा ई-मेल के माध्यम से आंकड़े, बिम्ब तथा जुबानी सूचनाएं भेजी जा सकती हैं।

10.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. डॉ. भीमराव अम्बेडकर जी थे।
2. संविधान में 1 से 10 अनुसूचियां हैं।
3. अनिवार्य निःशुल्क सार्वभौम शिक्षा से।
4. 1976
5. अनुच्छेद-49
6. अनुच्छेद-24
7. अनुच्छेद-16 व 335
8. मुदालियर कमीशन
9. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग।
10. इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय।

11. इलेक्ट्रानिक मेल।
12. तीव्र स्मरण शक्ति, गणना क्षमता, आंकड़ों का संग्रहण, समस्या समाधान की क्षमता आदि कम्प्यूटर के कार्य हैं।

10.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक अग्रवाल प्रकाशनएआगरा।
2. सक्सेना (डॉ) सरोज शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधारए साहित्य प्रकाशन आगरा।
3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक इण्टरनेशनल पब्लिशिग हाउस मेरठ।
4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशाष्त्र ए एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य रजत प्रकाशननई दिल्ली।
6. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्रकुमार (2006) एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली।
7. गुप्तए रामबाबू (1996) भारतीय शिक्षा शास्त्रीए आगरा रतन प्रकाशन मंदिर।
8. सिंह (डॉ.), वीरकेश्वर प्रसाद (1999) प्रतिनिधि राजनीतिक विचारक दिल्लीनवप्रभात प्रिंटिंग प्रेस।

10.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. जनतंत्र से आप क्या समझते हैं ? भारत में इसका उदय कैसे हुआ ?
2. जनतंत्रीय समाज में शिक्षा के क्या उद्देश्य होने चाहिए ?
3. भारतीय संवैधानिक व्यवस्था का विस्तार से वर्णन कीजिए।
4. निजीकरण से आप क्या समझते हैं ? इसके बढ़ते विकास पर एक विस्तृत टिप्पणी लिखिए।
5. संविधान में प्राथमिक शिक्षा के लिए क्या प्रावधान किए गये हैं ? वर्णन कीजिए।
6. कम्प्यूटर हमारे लिए कैसे उपयोगी सिद्ध हो रहा है ? विस्तृत वर्णन कीजिए।

इकाई-11 गुणवत्ता एवं समता के पहलू
Issues of Quality and Equity

11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 शैक्षिक समानता के अवसर व शिक्षामें उत्कृष्टता सम्बन्धी मुद्दे, गुणवत्ता व संख्यात्मक सम्बन्धी शैक्षिक पहलू व समता
  11.3.1 शैक्षिक अवसरों की समानता का अर्थ
  11.3.2 भारत में शैक्षिक अवसरों की समानता
  11.3.3 शिक्षा मं समानता व उत्कृष्टता सम्बन्धी मुद्दे
11.4 संवैधानिक प्रावधान
  11.4.1 भारत में शिक्षा के अवसरों की विषमताएं
  11.4.2 शैक्षिक अवसरों की समानता की आवश्यकता
11.5 भारत में गुणवत्ता व संख्यात्मक सम्बन्धी शैक्षिक पहलू व समताउपाय
11.6 विश्व मानवीय अधिकार
11.7 सारांश
11.8 शब्दावली
11.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
11.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
11.11 निबन्धात्मक प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

समानता की धारणा जनतंत्रीय धारणा है। जनतंत्र स्वतंत्रता, समानता और शान्ति के तरीकों में विश्वास करता है। युद्ध और राजनैतिक अथवा अन्य प्रकार के तनावों के मध्य समाज की प्रगति नहीं हो सकती। जनतंत्र का यह विश्वास है कि पारस्परिक द्वेष, संघर्ष व तनाव की अवस्थाएं शान्तिपूर्ण ढंग से सुलझाई जा सकती हैं। युद्ध की अपेक्षा शान्ति की विजय अधिक चिरस्थायी है, इसमें जनतंत्र का पूर्ण विश्वास है।जनतंत्र सहयोग, सहिष्णुता, पारस्परिक आदान-प्रदान, न्याय और दृष्टिकोण की विशालता को सामाजिक समस्याओं के हल करने तथा अच्छे मानवीय सम्बंधों को स्थापित करने में शक्त मानता है। जनतंत्र विरोधी विचारों व दृष्टिकोणों की भिन्नताओं का अनादर नहीं आदर करता

है। जनतंत्र का यह विश्वास है कि विचारों व दृष्टिकोणों के भेदों का आदर होना, यही उनके सामान्य लक्षणों और गुणों का मिलन होता है और विरोध समन्वय की ओर अग्रसर होता है।

स्वतंत्रता और समानता के सम्बंध में भ्रमपूर्ण विचार होने के कारण लोग बहुधा उनका गलत मतलब निकालते हैं और उनका दुरूपयोग करते हैं। इन दोनों का अर्थ लोग अपने स्वार्थवश गलत लगा बैठते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हम स्वयं अपने देश में ही देख रहे हैं कि स्वतंत्रता का कितना गलत अर्थ लगाया जा रहा है और उसका कितना दुरूपयोग हो रहा है। हम स्वतंत्रता को उच्छृंखलता समझ बैठे हैं। हम यही नहीं अनुभव करते कि 'स्वतंत्र' होना अपने ऊपर स्वयं द्वारा अधिक नियंत्रण चाहता है। परतंत्र होने में तो दूसरे का नियंत्रण हमें स्वीकार करना पड़ता है और यदि हम अपराध करते हैं तो हमें दण्ड भुगतना पड़ता है। स्वतंत्र होने पर हमें अपना नियंत्रण स्वीकार करना पड़ता है और यदि हम ऐसा नहीं करते तो उसके दुष्परिणाम हम को ही भोगने पड़ते हैं। नियंत्रण के बिना किसी भी प्रकार की व्यवस्था नहीं चल सकती,, चाहे वह नियंत्रण दूसरों का हो तो परतंत्रता की अवस्था में होता है, और चाहे वह अपना हो तो स्वतंत्रता की अवस्था में होता है। यह मानव दृष्टिकोण की संकीर्णता और कठोरता है

वास्तविक स्वतत्रंता दोनों सिरों के मिलन बिन्दु पर है। स्वतंत्रता अनुशासनहीनता नहीं है बल्कि स्वतंत्रता दूसरों की स्वतंत्रता को खतरे में न डाल दें, यह आवश्यक है। जनतंत्रीय स्तंत्रता इसी बीच के मिलन बिन्दु पर खड़ी है। जनतंत्रीय व्यवस्था के पैर दोनों ओर हैं और व दोनों पर चढ़कर ही चलती है, एक पर चढ़कर वह उसी प्रकार नहीं चल सकती जिस प्रकार एक पहिए पर गाड़ी नहीं चल सकती। इसी प्रकार के भ्रम समानता के सम्बंध में भी हैं और लोग इसका आशय अधिकारों और अवसरों तथा सुविधाओं के बाराबर बांटने से लगाते हैं चाहे कोई उनका लाभ उठा सके अथवा नहीं। सब मनुष्यों में एक सी शक्ति नहीं होती और सब लोग अवसरों व सुविधाओं से बराबर लाभ नहीं उठा सकते। अतः सबको बराबर बांट कर देने का परिणाम यह होगा कि कुछ उनका लाभ उठा सकेंगे और कुछ नहीं, कुछ उनका दुरूपयोग करेगे तो कुछ को अधिक अवसरों व सुविधाओं की आवश्यकता होगी। समता या समानता का आशय यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को उतनी सुविधा या अवसर दिए जांए जिनका वह लाभ उठा सकें और यदि वह उनसे लाभ न उठा सके तो उसे वे उतनी मात्रा में न दिए जाएं। समानता का अर्थ सबके लिए समान नीति से है, सबको समान बनाने से नहीं।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना इस प्रकार है-

हम भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त करने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में ....एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत,

अधिनियमित और आत्मसमर्पित करते हैं। बाद में इसमें समाजवाद और धर्मनिरपेक्षता भी जोड़ दिये गये।

यह प्रस्तावना हमारे राष्ट्रीय जीवन, राजनीति और शैक्षिक उद्देश्यों या मूल्यों को परिभाषित करने वाले शब्द-प्रतीक हैं।

11.2 उद्देश्य

1. शैक्षिक अवसरों की समानता का अर्थ जान सकेंगे।
2. शैक्षिक अवसरों की समानता व असमानता का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
3. शैक्षिक अवसरों की प्राप्ति हेतु संवैधानिक प्रावधानों को जान सकेंगे।
4. विश्व मानवीय अधिकारों के बारे में समझ सकेंगे।
5. भारत में शैक्षिक अवसरों की समानता की प्राप्ति के उपायों को समझ सकेंगे।

11.3 शैक्षिक समानता के अवसर व शिक्षामें उत्कृष्टता सम्बन्धी मुद्दे,गुणात्मक, परिमाणात्मक व समता सम्बन्धी शैक्षिक पहलू

शैक्षिक अवसरों की समानता का विचार लोकतंत्र की देन है। लोकतंत्र स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व के सिद्धान्तों पर आधारित है। यह सामाजिक न्याय का पक्षधर है। यह व्यक्ति के व्यक्तित्व का आदर करता है और प्रत्येक व्यक्ति को अपने विकास के स्वतंत्र अवसर प्रदान करता है। लोकतंत्रीय इस भावना के आधार पर सर्वप्रथम 1870 में ब्रिटेन में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य किया गया और उसे सर्वसुलभ बनाया गया। भारत में इस प्रकार का विचार सर्वप्रथम ब्रिटिश शासन काल में उठा। 15 अगस्त, 1947 को हमारा देश स्वतंत्र हुआ और 26 जनवरी, 1950 को हमारे देश में हमारा अपना संविधान लागू हुआ। इस संदर्भ में हमारे संविधान में दो घोषणाऐं की गई हैं। संविधान के अनुच्छेद 45 में यह घोषणा की गई है कि राज्य इस संविधान के लागू होने के समय से 10 वर्ष के अन्दर 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों की अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था करेगा और इसके अनुच्छेद 29 में यह घोषणा की गई है कि राज्य द्वारा पोषित अथवा आर्थिक सहायता प्राप्त किसी भी शिक्षा संस्था में किसी भी बच्चे को धर्म, मूल, वंश अथवा जाति के आधार पर प्रवेश से वंचित नहीं किया जाएगा। यह बात दूसरी है कि हम इसे अभी तक अपने सही रूप में अंजाम नहीं दे सके हैं। हमारे देश में इस समस्या पर सर्वप्रथम विचार किया कोठारी आयोग (1964-66) ने। उसने सुझाव दिया कि शैक्षिक अवसरों की समान सुविधा प्रदान करने के लिए सर्वप्रथम 6 से 14 आयुवर्ग के बच्चों की कक्षा 1 से 8 तक की शिक्षा अनिवार्य एवं निःशुल्क की जाए और किसी भी वर्ग के बच्चों की इस शिक्षा प्राप्त करने में आने वाली कठिनाइयों को दूर किया जाए।

11.3.1 शैक्षिक अवसरों की समानता का अर्थ

शैक्षिक अवसरों की समानता का सामन्य अर्थ है देश के सभी बच्चों को बिना किसी भेद-भाव के शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर और समान सुविधाएं प्रदान करना। परन्तु समान अवसर और समान सुविधाओं के सम्बंध में विद्वानों के भिन्न-भिन्न मत हैं। कुछ विद्वान शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर और समान सुविधाओं के अर्थ देश के सभी बच्चों के लिए एक समान शिक्षा अर्थात् समान पाठ्यक्रम से लेते हैं। आप ही विचार करें कि विविधता के इस देश भारत में ऐसा कैसे हो सकता है। फिर सामान्य शिक्षा तो सबके लिए समान हो सकती है और होती भी है, परन्तु विशिष्ट शिक्षा तो बच्चों की रूचि, रूझान, योग्यता और क्षमता के आधार पर ही दी जा सकती है। इसके विपरीत कुछ विद्वान इसका अर्थ शिक्षा संस्थाओं के समान रूप से लेते हैं। वे सरकारी, गैरसरकारी और पब्लिक स्कूलों के भारी अन्तर को समाप्त करने के पक्ष में हैं। इनका तर्क है कि उसी स्थिति में सभी को शिक्षा के समान अवसर मिल सकते हैं। अन्यथा धनी वर्ग के बच्चे पब्लिक स्कूलों की अच्छी शिक्षा प्राप्त करते रहेंगे और निर्धन वर्ग के बच्चे सरकारी एवं गैर-सरकारी स्कूलों की निम्न स्तर की शिक्षा ही प्राप्त कर सकेंगे। शैक्षिक अवसरों की समानता से अर्थ शिक्षा की किसी भी स्तर पर सभी बच्चों को प्रवेश की सुविधा प्रदान करने से लेते हैं। इनका तर्क है कि शिक्षा मनुष्य का मौलिक अधिकार है। परंतु यह धारणा भी गलत है। अधिकार के साथ कर्तव्य जुड़ा होता है। समान अवसरों के पीछे समान योग्यता एवं समान क्षमता का भाव निहित है। जहां तक अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की बात है उसके अवसर तो सभी को सुलभ कराना आवश्यक है परन्तु उससे आगे की शिक्षा के अवसर योग्यता एवं क्षमता के आधार पर ही सुलभ कराने चाहिए।

11.3.2 शिक्षा मं समानता व उत्कृष्टता सम्बन्धी मुद्दे (Equality in EducationOpportunity and Excellence)

'समानता' शब्द से तात्पर्य उन समान परिस्थितियों से है, जिनमें सभी व्यक्तियों को विकास के समान अवसर प्राप्त हो सकें और सामाजिक भेदभाव का अंत हो सके तथा सामाजिक न्याय (Social Justice) के लक्ष्य की प्राप्ति भी सम्भव हो सके। प्रसिद्ध राजनीतिविद् प्रो. लास्की ने लिखा है- ''समानता का अर्थ यह नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाए अथवा सभी को समान वेतन दिया जाए। यदि एक पत्थर ढोने वाले का वेतन एक प्रसिद्ध गणितज्ञ या वैज्ञानिक के समान कर दिया जाए तो इससे समाज का उद्देश्य ही नष्ट हो जायेगा। अतः समानता का अर्थ यह है कि विशेष अधिकार वाला वर्ग न रहे और सबको उन्नति के समान अवसर मिलें।''शैक्षिक अवसरों की समानता का तात्पर्य सभी के लिए समान शिक्षा नहीं है, बल्कि प्रत्येक बालक की शारीरिक मानसिक, सांवेगिक, नैतिक परिस्थितियों के अनुरूप शिक्षा प्रदान करना है। इसका तात्पर्य राज्य द्वारा व्यक्तियों की शिक्षा के संदर्भ जाति, रूप, रंग, प्रान्तीयता एवं भाषा, धर्म आदि के मध्य भेदभाव न करने से भी है।

शिक्षा(Education) के क्षेत्र में 'समानता' की अवधारणा को स्थापित करने के लिए निम्नलिखित प्रयासकिए गये हैं–

i. एक निश्चित अवधि तक भेदभाव रहित निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था।
ii. माध्यमिक स्तर पर विभिन्नीकृत पाठ्यक्रम व्यवस्था।
iii. उच्च स्तर पर सभी के लिए अपेक्षित शैक्षिक उन्नति की व्यवस्था ताकि वे उचित योगदान देने में सक्षम हो सकें।

11.3.3 शिक्षा में समानता के सूचक

शिक्षा के निम्नलिखित चार बातें समानता के सूचक कहे जा सकते हैं-

1. अधिगम की समानता- इसका सम्बंध प्रवेश के अवसर से सम्बद्ध है। योग्यता को छोड़कर कोई अन्य कसौटी प्रवेश के लिए नहीं होनी चाहिए। जाति, धर्म इसमें बाधक न हों। कुछ समय पहले भारतीय समाज में स्त्रियों एवं शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं था। यह अधिगम की विवशता थी। इस असमानता को अब दूर कर दिया गया है।
2. उत्तरजीवितता की समानता- विद्यालय में प्रवेश में ही समानता न हो वरन् छात्र स्कूल में बना रहे, वह विद्यालय छोड़ न दे, इसके लिए भी समान अवसर प्रदान किया जाना चाहिए। अनुसूचित जाति के बच्चे की आर्थिक स्थिति ठीक न कहोने के कारण वे बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं।
3. स्तर की समानता- एक निश्चित स्तर तक सभी बालक-बालिकाओं को बिना किसी भेदभाव के अनिवार्य शिक्षा मिले। निर्धन बालकों को विशेष सुंविधा दी जाए। एक स्तर तक अनिवार्य निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था हो।
4. परिणाम की समानता- स्कूल छोड़ने के बाद प्रत्येक बच्चे को शिक्षा के आधार पर जीवन बिताने के समान अवसर सुलभ हों। यदि किसी वर्ग विशेष को अवसर की विषमता नजर आये तो उसे विशेष सुविधा देकर उसके लिए समान अवसर की सुलभता निश्चित की जाए। इसी सूचक के अन्तर्गत अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और पिछड़े वर्ग के लिए नौकरियो में आरक्षता की व्यवस्था की जानी चाहिय।

उपर्युक्त चारों सूचकों में किसी-किसी समाज में चारों, किसी में कुछ कम तो किसी में कुछ अधिक की उपस्थिति दृष्टिगोचर होती है। यह आवश्यक नहीं हैं कि चारों सूचक सदा समाज में विद्यमान ही रहें।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. शैक्षिक अवसरों की समानता पर सर्वप्रथम विचार किस आयोग ने किया था ?
   a. (1) सैडलर आयोग (2) राधाकृष्णन आयोग

   b. (3) मुदालियर आयोग (4) कोठारी आयोग
2. कश्मीर प्रान्त में किस स्तर तक की शिक्षा निःशुल्क है ?
   a. (1) प्राथमिक (2) माध्यमिक
   b. (3) उच्च (4) सम्पूर्ण
3. माध्यमिक स्तर पर गतिनिर्धारक विद्यालयों का प्रस्ताव किस राष्ट्रीय शिक्षा नीति में किया गया था ?
   a. (1) राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 (2) राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1979
   b. (3) राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 (4) संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1992
4. आश्रम स्कूलों की व्यवस्था किन के लिए की जा रही है ?
   a. दूरदराज में रहने वाले लड़कों के लिए
   b. दूरदराज में रहने वाली लड़कियों के लिए
   c. दूरदराज में रहने वाले लड़के-लड़कियों के लिए
   d. दूरदराज में रहने वाले जनजाति के बच्चों के लिए

11.4 संवैधानिक प्रावधान (Constitutional Provision)

भारतीय संविधान के निम्नलिखित अनुच्छेद महत्वपूर्ण हैं–

अनुच्छेद 15- धर्म, मूलवंश, जति, लिंग व जन्म स्थान के आधार पर कोई भेदभाव किसी भी भारतीय नागरिक के साथ नहीं बरता जायेगा।

अनुच्छेद 16- सरकारी नौकरियां सभी के लिए खुली हांगी तथा अनुसूचित जाति व जनजाति के लिए विशेष सुविधाएं सुंरक्षित स्थानों के रूप में होंगी।

अनुच्छेद 19- प्रत्येक भारतीय नागरिक को व्यवसाय या धंधा करने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 28- शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश के मामले में कोई भेदभाव किसी के साथ नहीं बरता जायेगा।

हिन्दुओं में अस्पृश्यता निवारण की दृष्टि से संविधान के निम्नलिखित अनुच्छेद द्रष्टव्य हैं-

अनुच्छेद 25- हिन्दुओं की सार्वजनिक, धार्मिक संस्थाओं के द्वारा समस्त हिन्दुओं के लिए खोलना।

अनुच्छेद 29- राज्य द्वारा पोषित अथवा राज्य निधि से सहायता पाने वाली किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश कर किसी भी तरह से प्रतिबंध निषेध।

अनुच्छेद 46- इन जातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों की रक्षा और उनका सभी प्रकार के शोषण और सामाजिक अन्याय से बचाव।

अनुच्छेद 146- केन्द्र व राज्यों में अछूतों के कल्याण हेतु समाज कल्याण एवं अशासकीय संस्थाओं को खोलने पर बल दिया गया है।

अनुच्छेद 244- अनुसूचित जातियों के लिए प्रशासन संबंधी विशेष व्यवस्था की गयी है।

अनुच्छेद 330 व 335- संसद और विधान मण्डलों में अनुसूचित जातियों को विशेष प्रतिनिधित्व मिलेगा।

संविधान के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के कल्याण की देखभाल करने के लिए विशेष कमिश्नर की नियुंक्ति की जाए जो प्रतिवर्ष राष्ट्रपति को उनकी दशा के सम्बंध में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करे। इस महत्वपूर्ण पद पर एम0ए0 श्री कांत व सुप्रसिद्ध गांधीवाद व सामाजिक, मानव शास्त्री डा. एनके बोस कार्य कर चुके थे। प्रतिवर्ष प्रस्तुत की जाने वाली कमिश्नर की रिपोर्ट में अनुसूचित जातियों व जनजातियों के जीवन में द्रुतगति से प्रभावपूर्ण परिवर्तन लाने के लिए कई महत्वपूर्ण सुझाव दिये जाते रहे हैं। इन जातियों में परिवर्तन लाने के लिए अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की सुविधाओं को प्रदान करना हमारा पहला कर्तव्य है और स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में व्याप्त निरक्षरता को समाप्त करने के लिए अनिवार्य शिक्षा के प्रसार पर जोर दिया गया। इसके लिए संविधान में भी प्रावधान किया गया कि बालक-बालिकाओं को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जाये।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 45 में प्रावधान है कि लोकतंत्र को सफल बनाने तथा उसकी सुरक्षा के लिए सभी नागरिक का शिक्षित होना अति आवश्यक है। लोकतंत्र वह शासन पद्धति होती है जिसमें सर्वोच्च सत्ता जनता के हाथ में होती है। अब लोकतंत्र के लिए सार्वजनिक मताधिकार होना आवश्यक समझा जाता है और मताधिकार का समुचित प्रयोग करने के लिए मतदाता को कुंछ सामान्य शिक्षा देना परमावश्यक है।

11.4.1 भारत में शिक्षा के अवसरों की विषमताएं

शिक्षा अवसरों की विषमताओं की जटिलतओं के निन्नलिखित रूप में उल्लेख किया गया है-

1. **ग्रामीण और नगरीय विभिन्नता-**''बुद्धि, नैतिक, न्याय और घनिष्ठता की दृष्टि से शिक्षा की व्यवस्था में बहुत अधिक असमानता है। यद्धपि जनसंख्या का तीन-चौथाई भाग ग्रामीण क्षेत्रों में रहता है, फिर भी उन्हें शिक्षा के लिए बहुत कम संसाधन प्राप्त हो रहे हैं। समृृद्ध लोग शहरों में निजी रूप से चलायी जाने वाली अच्छी शिक्षण संस्थाओं का लाभ लेते हैं तथा ये ही व्यावसायिक शिक्षा संस्थओं में अनारक्षित स्थानों के बहुत बड़े हिस्से पर अधिकार कर लेते हैं,

जबकि ग्रामीण स्कूलों की अपेक्षाकृत दयनीय दशा के कारण ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चों को बहुत बड़ी हानि उठानी पड़ती है।''

2. **लिंग और जाति पर आधारित विषमता-**''लड़कियों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बच्चों ने पिछले दशक के दौरान उल्लेखनीय प्रगति की है। इसके उपरान्त भी वे शैक्षिक उपलब्धि के अंतिम सोपान पर हैं। बालिकाएं तो घर-गृहस्थी के कार्या में अपनी दत्तचिन्तता तथा सामाजिक कुरीतियों की शिकार होती हैं इनमें से अधिकांशतः पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी होने के कारण बाल्यकाल के कुपोषण, सामाजिक अकेलेपन की भावना, कार्य करने की खराब आदतें तथा बौद्धिक क्षमताओं के प्रति आत्मविश्वास अभाव के कारण समुचित विकास नहीं कर सकते। वे अपने को सामान्य धारा के छात्रों से सामंजस्य स्थापित करने में कठिनाई अनुभव करते हैं। इन मनोवैज्ञानिक दबावों के कुप्रभाव को समाप्त करने के लिए तथा उनकी योग्यताओं में बढोत्तरी करने हेतु एवं समाज की प्रमुख धारा में उन्हें समन्वित करने के लिए विशेष कार्यक्रम की आवश्यकता है।''

इन शैक्षिक विषमताओं का उल्लेख क्रमबद्ध ढंग से निम्नलिखित रूप में किया है -

i. जिन स्थानों पर प्राथमिक, माध्यमिक या कॉलेज की शिक्षा देने वाली संस्थाएं नहीं हैं, वहां के बच्चों को वैसा अवसर नहीं मिल पाता, जैसा उन बच्चों को मिल पाता है, जिनकी बस्तियों में ये संस्थाएं उपलब्ध हैं।

ii. इस देश के विभिन्न भागों में शैक्षिक विकासों में भारी असंतुलन देखने को मिलता है-एक राज्य और दूसरे राज्य के शैक्षिक विकासों में बहुत बड़ा अन्तर मौजूद है और एक जिले तथा दूसरे जिले के विकास में और भी बड़ा अन्तर देखने को मिलता है।

iii. शिक्षा के अवसरों की विषमता का एक और कारण यह है कि जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग गरीब है और बहुत थोड़ा भाग धनी। किसी शिक्षा-संस्था के समीप होते हुए भी गरीब परिवारों के बच्चों को वह अवसर नहीं मिलता, जो धनी परिवारों के बच्चों को मिल जाता है।

iv. शिक्षा के अवसरों की विषमता का एक और बड़ा दुःसाध्य रूप विद्यालयों तथा कॉलेजों के अपने-अपने भिन्न स्तरों के कारण पैदा होता है। जब किसी विश्वविद्यालय या वृत्तिक कॉलेज जैसी संस्था में प्रवेश उन अंकों के आधार पर दिया जाता है, जो माध्यमिक स्तर की समाप्ति पर दी गयी सार्वजनिक परीक्षा में प्राप्त हुए हों और प्रवेश साधारणतया इसी आधार पर होता है, तब देहाती क्षेत्र के साधनहीन ग्रामीण विद्यालय में पढ़े छात्र के लिए यह कसौटी या मापदण्ड एक समान नहीं रहता।

v. घरेलू पर्यावरणों के भिन्न-भिन्न होने के कारण भी भारी विषमताएं उत्पन्न होती हैं। देहात के घर या शहरी गन्दी बस्तियों में रहने वाले और अनपढ़ माता-पिता की संतान को शिक्षा पाने का वह अवसर नहीं मिलता, जो उच्चतर शिक्षा पाये हुए माता-पिता के साथ रहने वाली उनकी संतान को मिलता है।

vi. भारतीय परिस्थितियों ने निम्नलिखित दो प्रकार की शैक्षिक विषमताओं को प्रमुख रूप से जन्म दिया है- शिक्षा के सभी स्तरों पर तथा क्षेत्रों में लड़कों तथा लड़कियों की शिक्षा में भारी अंतर। उन्नत वर्गा तथा पिछड़े वर्गा-अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के बीच शैक्षिक विकास का अन्तर।

11.4.2 शैक्षिक अवसरों की समानता की आवश्यकता (Need of Equality of Educaitonal Opportunities)

आज पूरा संसार मानवाधिकार के प्रति सचेत है। संसार के सभी देशों में शिक्षा को मानव का मूल अधिकार काना है। तब किसी भी देश में सभी को शिक्षा शिक्षा प्राप्त करने की समान सुविधाएं होनी चाहिए। लोकतंत्रीय देशों में तो यह और भी अधिक आवश्यक है, बिना इसके लोकतंत्र अर्थहीन है। हमारे लोकतंत्रीय देश में तो इसकी और अधिक आावश्यकता है, कारण स्पष्ट हैंरू-

1. लोकतंत्र की रक्षा के लिए - लोकतंत्र की सफलता उसके नागरिकों पर निर्भर करती है, उसके नागरिकों की योग्यता और क्षमता पर निर्भर करती है और नागरिकों की योग्यता और क्षमता निर्भर करती है शिक्षा पर। अतः देश के प्रत्येक नागरिक को शिक्षित करना आवश्यक है। इस क्षेत्र में हमारे देश की स्थिति बड़ी चुनौतीपूर्ण है। पहली बात तो यह है कि इसकी जनसंख्या बहुत अधिक है और साधन अपेक्षाकृत बहुत कम हैं। दूसरी बात यह है कि देश की आधे से अधिक जनता निर्धन है, अपने बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था करने में असमर्थ है। तीसरी बात यह है कि इसकी बहुसंख्यक जनता गांवों में रहती है, दूर-दराजों में रहती है। रेगिस्तानी पहाड़ी और जंगली क्षेत्रों में रहने वालों की बहुत बड़ी संख्या है। परिणाम यह है कि शिक्षा सर्वसुलभ नहीं है। अतः आवश्यक है कि हम उपेक्षित, निर्धन और दूर-दराज में रहने वालों को शिक्षा सुविधाएं प्रदान करें।
2. व्यक्ति के वैयक्तिक विकास के लिए - लोकतंत्र व्यक्ति के व्यक्तित्व का आदर करता है और प्रत्येक व्यक्ति को अपने विकास के स्वतंत्र अवसर प्रदान करता है। और हमारे देश की स्थिति यह है कि इसकी आधे से अधिक जनसंख्या पिछड़ी है, निर्धन है, अच्छी शिक्षा से वंचित है। यदि हम सचमुच अपने देश के प्रत्येक व्यक्ति को अपने विकास के अवसर प्रदान करना चाहते हैं तो पहली आवश्यकता यह है कि सभी को शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर एवसं सुविधाएं प्रदान करें।
3. वर्ग भेद की समाप्ति के लिए - स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले हमारे देश में शिक्षा उच्च वर्ग तक सीमित थी, परिणाम यह हुआ कि इस देश में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उच्च वर्ग का अधिकार बढ़ता गया और निम्न वर्ग के व्यक्ति और पिछड़ते गये और वर्ग भेद बढ़ता गया। लोकतंत्र इस प्रकार के सामाजिक और आर्थिक वर्ग भेद का विरोधी है। इस वर्ग भेद की समाप्ति के लिए सभी वर्गा के बच्चों एवं युवकों को शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर एवं सुविधाएं प्राप्त कराना आवश्यक है।

4. समाज के उन्नयन के लिए - लोकतंत्र सामाजिक वर्गभेद का विरोधी है, वह पूरे राष्ट्र को एक समाज मानता है और उसे सभ्य एवं सुसंस्कृत समाज के रूप में विकसित करने में विश्वास करता है और यह तब तक संभव नहीं है जब तक देश के प्रत्येक नागरिक को शिक्षित नहीं किया जाता। इसके लिए हमारे देश में शैक्षिक अवसरों की समानता की बहुत आवश्यकता है।
5. राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिए - किसी राष्ट्र का आर्थिक विकास दो तत्वों पर निर्भर करता है-प्राकृतिक संसाधन और मानव संसाधन। जहां तक प्राकृतिक संसाधनों की बात है यह तो प्रकृति की देन है, परन्तु मानव संसाधन का विकास शिक्षा द्वारा होता है। और जिस राष्ट्र में जितनी अधिक और उत्तम प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था होती है, वह राष्ट्र उतनी ही तेजी से आर्थिक विकास करता है। अतः आवश्यक है कि हम जिन तक शिक्षा नहीं पहुंचा पा रहे हैं, उन तक शिक्षा पहुंचाएं, उनके मार्ग की कठिनाईयों को दूर करें। यही शैक्षिक अवसरों की समानता का अर्थ है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

5. सरकारी नौकरियां सभी के लिए खुली होंगी तथा अनुसूचित जाति व जनजाति के लिए विशेष सुविधायें सुरक्षित स्थानों के रूप में होंगी -
   (अ) अनुच्छेद 15 (ब) अनुच्छेद 16
   (स) अनुच्छेद 28 (द) अनुच्छेद 29
6. धर्म, मूल, वंश, जाति, लिंग व जन्म स्थान के आधार पर कोई भेदभाव किसी भी भारतीय नागरिक के साथ नहीं बरता जाएगा -
   (अ) अनुच्छेद 15 (ब) अनुच्छेद 16
   (स) अनुच्छेद 28 (द) अनुच्छेद 29
7. राज्य द्वारा पोषित अथवा राज्य निधि से सहायता पाने वाली किसी संस्था में प्रवेश कर किसी भी तरह से प्रतिबंध निषेध -
   (अ) अनुच्छेद 16 (ब) अनुच्छेद 17
   (स) अनुच्छेद 29 (द) अनुच्छेद 46
8. अनुसूचित जातियों के लिए प्रशासन संबंधी विशेष व्यवस्था की गई है -
   (अ) अनुच्छेद 46 (ब) अनुच्छेद 244
   (स) अनुच्छेद 15 (द) अनुच्छेद 17
9. लोकतंत्र को सफल बनाने तथा उसकी सुरक्षा के लिए सभी नागरिकों का शिक्षित होना आवश्यक है -
   (अ) अनुच्छेद 44 (ब) अनुच्छेद 42
   (स) अनुच्छेद 43 (द) अनुच्छेद 45

11.5 भारत में गुणवत्ता व संख्यात्मक सम्बन्धी शैक्षिक पहलू व समताकेउपाय Quality, Quantity and Equity related aspects of Education in India

शैक्षिक अवसरों की समानता के दो मुख्य पहलू हैं- पहला यह कि देश के सभी वर्गों और युवकों को बिना किसी भेदभाव के, किसी भी स्तर की, किसी भी शिक्षा से सुलभ कराना और दूसरा यह कि किसी भी वर्ग के बच्चों अथवा युवकों के किसी भी स्तर की, किसी भी प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने में आने वाली बाधाओं का निवारण करना। हम यह भी देख रहे है कि जिस तेजी के साथ विधालय व कालेजो की संख्यामें बढोतरी हो रही है उतनी तेजी के साथ शिक्षामें गुणात्मक ब्रद्धि नही हो रही। इसका कारण यह है शिक्षको द्वारा शोध कार्य व पठ्न-पाठन पर गम्भिरता पूर्वक ध्यान नही दिया जा रहा है जब तक शिक्षक व छात्र शोध कार्य तथा आज की तकनीकि के प्रति जागरुक नही होगे तब तक शिक्षामें गुणात्तमकता की बात करना नाइंसाफी होगी।

कोठारी आयोग (1964-66) के सुझाव

i. कक्षा 1 से कक्षा 8 तक की शिक्षा अनिवार्य एवं निःशुल्क की जाए और इस लक्ष्य को दो पंचवर्षीय योजनाओं में प्राप्त किया जाए।

ii. प्राथमिक स्तर पर छात्रों को पाठ्यपुस्तकें, लेखन सामग्री और माध्यान्ह भोजन निःशुल्क दिया जाए।

iii. पिछड़े वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के बच्चों क शिक्षा के लिए विशेष व्यवस्था की जाए और कबीलों के बच्चों के लिए आवासीय आश्रम स्कूल खोले जाएं।

iv. मंद बुद्धि और विकलांग बालकों के लिए अलग से स्कूल खोले जाएं, इनमें विशेष प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों की नियुक्ति की जाए।

v. माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा के निर्धन छात्रों को शुल्क मुक्त किया जाए।?

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 के प्रस्ताव

केन्द्र सरकार ने कोठारी आयोग के उपर्युक्त सुझावों के आधार पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 में निम्नलिखित घोषणाएं कीं-

i. ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों में और अधिक स्कूल-कॉलेज खोले जाएंगे और इन क्षेत्रों के बच्चों और युवकों को सभी स्तरों की शिक्षा सुलभ कराई जाएगी।

ii. देश में सामान्य विद्यालय प्रणाली (Common School System)लागू की जाएगी, अर्थात् एक क्षेत्र में रहने वाले सभी वर्गों के बच्चे एक प्रकार के स्कूल में पढ़ेंगे, एक साथ पढ़ेंगे।

iii. पिछड़े वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और कबीलों के बच्चों की शिक्षा की विशेष व्यवस्था की जाएगी और इनको आवश्यक आर्थिक सहायता दी जाएगी।

iv. मन्दबुद्धि और विकलांग बच्चों के लिए अलग से विद्यालय खोले जाऐंगे।

v. पब्लिक स्कूलों में निम्न एवं निर्धन वर्ग के बच्चों के लिए स्थान आरक्षित किए जाएँ गे और उनके लिए निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के प्रस्ताव

i. एक निश्चित कार्य योजना के अंतर्गत सर्वप्रथम कक्षा 1 से कक्षा 5 तक की शिक्षा अनिवार्य एवं निःशुल्क की जाएगी और उसके बाद कक्षा 6 से 8 तक की शिक्षा अनिवार्य एवं निःशुल्क की जाएगी और यह लक्ष्य 1995 तक प्राप्त कर लिया जाएगा।

ii. पिछड़े वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग, अनुंसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और कबीलों आदि उपेक्षित वर्ग के बच्चों की शिक्षा की विशेष व्यवस्था की जाएगी।

iii. उपेक्षित वर्ग के बच्चों को आर्थिक सहायता दी जाएगी, इनके लिए विशेष छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की जाएगी।

iv. मन्द बुद्धि और विकलांग बालकों के लिए अलग से स्कूल खोले जाएँ गे।

v. माध्यमिक स्तर पर गति निर्धारक विद्यालय (Pace Making Schools)खोले जाएंगे, इनमें उपेक्षित क्षेत्रों (ग्रामीण) और उपेक्षित वर्ग (अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति) के मेधावी छात्रों के लिए आवासीय निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी।

11.6 विश्व मानवीय अधिकार(World Human Rights)

यू.एन.ओ. (यूनाइटेड नेशन्स ऑर्गनाइजेशन) तथा उसकी प्रमुख सहयोगी शाखा यूनेस्को (UNESCO) यूनाइटेड नेशन्स एजूकेशनल, साइन्टिफिक एण्ड कल्चरल ऑर्गनाइजेशन को इस दिशा में महान कार्य करने का श्रेय अन्तर्राष्ट्रीय विश्व संगठनों को जाता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने विश्व मानवीय अधिकारों के अंतर्गत निम्नलिखित क्षेत्रों में समान अवसरों की अवधारणा को स्वीकार किया है-

i. नागरिक अधिकार(**Civil Rights**) - मानवीय अधिकारों की घोषणा में विश्व के प्रत्येक नागरिक को निम्नलिखित अधिकार प्रदान किए गये हैंरू-

ii. सभी प्राणी जन्म से स्वतंत्र हैं तथा वे आत्म-सम्मान एवं अधिकारों के संदर्भ में एक समान हैं।

iii. प्रत्येक व्यक्ति को जीवन जीने का अधिकार है। साथ ही स्वतंत्रता एवसं सुरक्षा का भी हकदार है।

iv. किसी भी व्यक्ति को नौकर या गुलाम बनाकर नहीं रखा जा सकता तथा गुलामी प्रत्येक दृष्टिकोण से निन्दनीय है। अतः उसे तत्काल प्रभाव से बन्द किया जाये।
v. किसी भी व्यक्ति को यातनापूर्ण, बर्बर दण्ड प्रदान नहीं किया जा सकता।

राजनीतिक अधिकार- संयुक्त राष्ट्र के मानवीय अधिकारों की धारा 14, 15, 21 के अंतर्गत निम्नलिखित राजनीतिक अधिकारों की मान्यता दी गई है-

i. प्रत्येक व्यक्ति अपने राष्ट्र की सरकार में सक्रिय सहभागिता कर सकता है। वह प्रत्यक्ष रूप में भी हो सकती है अथवा चुने हुए प्रतिनिधियों के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप में भी हो सकती है।
ii. प्रत्येक व्यक्ति द्वारा प्रदत्त जन-सेवाओं का लाभ प्राप्त करने के लिए समान रूप से अधिकार है।
iii. किसी भी राष्ट्र में सरकार की स्थापना वहां के निवासियों की इच्छा शक्ति पर निर्भर करेगी। इसके लए आवर्ती चुनावों तथा गुप्त मतदान का सहारा लियाय जा सकता है।

आर्थिक अधिकार - धाराएं 17, 22, 23, 24 तथा 25 आर्थिक रूप से स्वतंत्रता प्रदान करने के लिए मानवीय अधिकारों की घोषणा करती हैं। संक्षेप में, उनका सार निम्नलिखित है-

i. प्रत्येक व्यक्ति को अपनी संपत्ति रखने का अधिकार प्राप्त है। वह स्वयं या किसी अन्य व्यक्ति की संपत्ति का नियोजन करे। किसी भी व्यक्ति को मनमाने ढंग से उसकी संपत्ति से वंचित करने का अधिकार नहीं है।
ii. प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार है। इसके अंतर्गत प्रत्येक राष्ट्र को अपने नागरिक को सामाजिक जीवन-निर्वाह हेतु आर्थिक भत्ते की व्यवस्था करना अनिवार्य है, जबकि वह अशक्त, रोगी या बेरोजगार है।
iii. प्रत्येक व्यक्ति को कार्य करने का अधिकार है। साथ ही राष्ट्र को उसकी बेरोजगारी से रक्षा करने का अधिकार है।
iv. प्रत्येक व्यक्ति को समान कार्य हेतु समान वेतन प्राप्त करने का अधिकार है।

सामाजिक अधिकार Social Rights- मानवीय अधिकारों के घोषणा-पत्र में निम्नलिखित सामाजिक अधिकारों का उल्लेख किया गया है-

i. राष्ट्रों द्वारा निर्धारित निश्चित आयु वर्ग में प्रत्येक युवक-युवती को पारस्परिक पसन्द से विवाह करके परिवार स्थापित करने का अधिकार है।
ii. परिवार किसी राष्ट्र एवं समाज की आधारभूत इकाई है। अतः उस राष्ट्र द्वारा उसकी सुरक्षा एवं परिपोषण की व्यवस्था करना अनिवार्य है।
iii. मातृत्व एवं बाल्यावस्था की देखभाल हेतु विशेष प्रयास करना प्रत्येक राष्ट्र का दायित्व है।

iv. प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार प्राप्त है। इसलिए प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य रूप से शुल्क-मुक्त होनी आवश्यक है।

सांस्कृतिक अधिकार - मानवीय अधिकारों की घोषणा में निम्नलिखित सांस्कृतिक अधिकारों का समावेश किया गया है-

i. प्रत्येक व्यक्ति अपने सामुदायिक क्रिया-कलापों में सहभागिता हेतु स्वतंत्र है। अन्य शब्दोंमें प्रत्येक व्यक्ति अपने कला-कौशलों के माध्यम से आनन्द की अनुभूति कर सकता है तथा वैज्ञानिक उन्नति में सक्षम योगदान दे सकता है।

ii. प्रत्येक राष्ट्र के व्यक्ति को अपनी सांस्कृति धरोहर के संरक्षण, सम्प्रेषण तथा सुरक्षा का अधिकार है, चाहे यह वैज्ञानिक, वस्तुगत या साहित्यिक हो।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

10. निम्नलिखित में से किसका संबंध समानता से नहीं है ?
    (अ) अल्पसंख्यकों की शिक्षा (ब) विकलांगों की शिक्षा
    (स) प्रवेश के नियम (द) अधिगम पठार
11. निम्नलिखित में से कौन-सा आदर्श संविधान की भूमिका में बाद में जोड़ा गया ?
    (अ) स्वतंत्रता (ब) धर्मनिरपेक्षता
    (स) समानता (द) बन्धुत्व
12. निम्नलिखित में कौन-सा उपाय असमानता को दूर करने के लिए प्रभावी नहीं है ?
    (अ) पूरक शिक्षा (ब) नया विश्वविद्यालय खोलना
    (स) माध्यमिक विद्यालयों में वृद्धि (द) शिक्षा शुल्क में वृद्धि

11.7 सारांश

1. यह सत्य है कि स्वतंत्रता के पश्चात् शैक्षिक सुविधाओं के प्रसार के पफलस्वरूप समाज के सभी वर्ग लाभान्वित हुए हैं, लेकिन अब भी वर्गीय विषमता विद्यमान है। अतः नयी शिक्षा-नीति 'लाभ उठाने से अब तक वंचित वर्ग' को उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप शैक्षिक अवसरों की समानता उपलब्ध कराकर विषमताओं के उन्मूलन को कम किया जा सकता है।
2. पुरूषों के समान महिलाओं को भी शिक्षा की आवश्यकता है तथा इसे अर्जित करने का उन्हें अधिकार है। अतः महिलाओं की स्थिति में मूलभूत परिवर्तन लाने के उद्देश्य से शिक्षा के अभिकरण का उपयोग किया जाना चाहिए। चिरकाल से चली आ रही इस विसंगति के समुच्च्य को निष्प्रभावी बनाने हेतु महिलाओं के पक्ष में एक सुनियोजित कार्यक्रम विचारणीय है।

3. अनुसूचित जाति का एक विशाल समुदाय सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक पिछड़ेपन से ग्रस्त है। यद्यपि विगत की अपेक्षा उनके शैक्षिक स्तर में सुधार आया है फिर भी 1981 की जनगणना के अनुसार अन्य वर्गा की अपेक्षा उनकी यह उपलब्धि आधी है
4. अनुसूचित जाति के शैक्षिक विकास में प्रमुख विचारणीय बात यह है कि उन्हें सभी आयामों में तथा शिक्षा के सभी क्षेत्रों और स्तरों के समान सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएँ । यह कम से कम समय में केवल केन्द्र और राज्य स्तर पर सतत् संचारेक्षण तथा प्रभावी रणनीति के माध्यम से ही संभव हो सकता है।
5. विद्यालय भवन तथा प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र ऐसे स्थान पर स्थापित हों, जहां ऐसे छात्रों के लिए आ सकने की सुविधा हो।

11.8 शब्दावली

1. जनतंत्र- जनतंत्र स्वतंत्रता, समानता और शान्ति के तरीकों में विश्वास करता है। युद्ध और राजनैतिक अथवा अन्य प्रकार के तनावों के मध्य समाज की प्रगति नहीं हो सकती।
2. स्तर में अंतर- विभिन्न स्कूलों से आये बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि में अंतर होता है सबके मापदण्ड में अंतर होता है।
3. सामाजिक स्तरीकरण Social Stratifications - समाज के व्यक्ति जब अपने स्तर से उपर या निचे की ओर उन्मुख होते है तो इसे हम सामाजिक स्तरीकरण कहते है।

11.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. कोठारी आयोग
2. सम्पूर्ण शिक्षा
3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986
4. दूर-दराज में रहने वाले लड़के-लड़कियों के लिए
5. (ख) अनुच्छेद 16
6. (अ) अनुच्छेद 15
7. (स) अनुच्छेद 29
8. (ब) अनुच्छेद 244
9. (द) अनुच्छेद 45
10. (द) अधिगम पठार
11. (ब) धर्मनिरपेक्षता
12. (द) शिक्षा शुल्क में वृद्धि

11.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।
2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
3. मित्तल एम.एल,(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिग हाउस, मेरठ।
4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिर्शस एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शैक्षिक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय, रजत प्रकाशन, नईदिल्ली।
6. शर्मा, रामनाथ व शर्मा राजेन्द्रकुमार (2006) एटलांटिक पब्लिर्शस एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।
7. गुप्त, रामबाबू (1996) भारतीय शिक्षा शास्त्री, आगरा, रतन प्रकाशन, मंदिर।
8. सिंह (डॉ.), वीरकेश्र प्रसाद (1999) प्रतिनिधि, राजनीतिक विचारक, दिल्ली, नवप्रभात प्रिंटिंग प्रेस।

11.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. शैक्षिक अवसरों की समानता से क्या तात्पर्य है ? आपकी सम्मति में अपने देश में शैक्षिक अवसरों की समानता की प्राप्ति के लिए क्या उपाय करने चाहिए ?
2. शैक्षिक अवसरों की समानता से आप क्या समझते हैं ? हमारे देश में शिक्षा के क्षेत्र में किस प्रकार की असमानताएं हैं ? इन असमानताओं को कैसे दूर किया जा सकता है ?
3. ‘आज हमारे देश में शैक्षिक अवसरों की समानता के नाम पर वोट की राजनीति की जा रही है’ इस कथन की विवेचना कीजिए।
4. शैक्षिक अवसरों की समानता की पृष्ठभूमि की विवेचना कीजिए।
5. शिक्षा में समानता के सूचक क्या हैं ?
6. शैक्षिक अवसरों की समानता पर नई शिक्षा-नीति को स्पष्ट करिए।
7. असमानता के कारक क्या हैं ?

इकाई 12- शिक्षा संबंधी संवैधानिक प्रावधान
Constitutional Provisions with Regard to Education

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 भारत का संविधान- उद्देशिका
12.3.1 मूल अधिकार
12.3.2 मूल कर्तव्य
12.4 विभिन्न स्तरों पर राजकीय शैक्षिक कार्य
12.5 भारत के संविधान में शिक्षा संबंधी अनुच्छेद- प्रावधान
12.6 शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009
12.7 सारांश
12.8 शब्दावली
12.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नोंके उत्तर
12.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
12.11 निबंधात्मक प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

आधुनिक युग में मनुष्य के लिए शिक्षा आवश्यक हो गई है। इसका कारण यह है कि आज का युग भौतिक एवं विज्ञान का युग है। इसलिए मनुष्य का सचेत और जागरूक होकर जीवित रहना आवश्यक हो गया है। एक समय था जब शिक्षा सबके लिए नहीं थी। शिक्षा केवल कुछ धनी लोगों के लिए थी तथा इसका उद्देश्य केवल व्यक्ति का बौद्धिक विकास था। परन्तु आधुनिक युग में शिक्षा जनसाधारण व्यक्ति के लिए भी उतनी ही आवश्यक है जितनी वर्ग विशेष के लिए हुआ करती थी। इस स्थिति का मुख्य कारण प्रजातन्त्र का विकास तथा प्रसार है।

15 अगस्त 1947 ई0 को हमारा देश स्वतन्त्र हुआ। भारतीय संविधान जो 26 जनवरी, 1950 को लागू हुआ उसमें शिक्षा के प्रति पूर्ण रूप से संवैधानिक दायित्व की चर्चा की गई। भारत का संविधान सर्वप्रथम हमें शिक्षा की विभिन्न समस्याओं को समझाने में सहायता प्रदान करता है। शिक्षा जगत् से

सम्बन्धित संविधान में जो व्यवस्थाएँ हमारी राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन से जुड़ी हुई हैं, उनका समझना बहुत आवश्यक है।

इस इकाई में आप शिक्षा से सम्बंधित विभिन्न प्रावधानों का अध्ययन करेंगे।

12.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप:

1. भारत के नागरिकों के मूल अधिकार जान पायेंगे।
2. भारत के नागरिकों के मूल कर्तव्यों से परिचित हो पायेंगे ।
3. विभिन्न स्तरों पर राजकीय शैक्षिक कार्य की व्याख्या कर सकेंगे।
4. भारत के संविधान में वर्णित विभिन्न शिक्षा संबंधी प्रावधानों को लिख पायेंगे।
5. शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 का वर्णनकर सकेंगे।

12.3 भारत का संविधान- उद्देशिका

हम भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व- संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय विचार, अभिव्यक्ति,विश्वास,धर्म और उपसना की स्वतंत्रता,प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढाने के लिए दृढसंकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवंबर , 1949 ई0 को एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते है।

12.3.1 मूल अधिकार

संविधान के अनुच्छेद 12 से 32 में नागरिकों के मूल अधिकारों का उल्लेख है।वर्तमान में भारत के नागरिकों के निम्नलिखित छः मूल अधिकार है-

1. समता का अधिकार
2. स्वतंत्रता का अधिकार
3. शोषण के विरुद्ध अधिकार
4. धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार
5. संस्कृति और शिक्षाका अधिकार (6-14 वर्ष की आयु)
6. सांविधानिक उपचारों का अधिकार

वर्ष 2002 में 86वें संविधान संशोधन द्वारा 6-14 वर्ष तक के बालकों के लिए शिक्षा को मूल अधिकार बनाया गया।

12.3.2 मूल कर्तव्य

संविधान के 42वें संशोधन अधिनियम , 1976 द्वारा संविधान 10 मौलिक कर्त्तव्यों को समाविष्ट कर दिया गया है। वर्ष 2002 में 86वें संविधान संशोधन द्वारा संविधान के अनुच्छेद 51- क से एक अन्य मौलिककर्तव्य समाहित किया गया। भारत के प्रत्येक नागरिक के 11 मौलिक कर्त्तव्य निम्नवत है-

1. संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्र ध्वज और राष्ट्र गान का आदर करे,
2. स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे,
3. भारत की प्रभुसत्त, एकता और अखण्डता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण रखे,
4. देश की रक्षा करें और आह्वान किए जानेपर राष्ट्रकी सेवा करें ,
5. भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध है,
6. हमारी सामाजिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझे और उसका परिरक्षण करें ,
7. प्राकृतिक पर्यावरण की,जिसके अंर्तगत वन, झील, नदी और वन्य जीव है, रक्षा करे और उसका संवर्धन करें तथा प्राणि मात्र के प्रति दयाभाव रखें ,
8. वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववादी और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करें ,
9. सार्वजनिक सम्पत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहें ।
10. व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करे जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊंचाइयों को छू ले।
11. माता-पिता या अभिभावक के रूप में भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह 6 से 14 वर्ष के बच्चे या पाल्य को शिक्षा प्राप्त करने के अवसर उपलब्ध कराएगा।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. संविधान के अनुच्छेद 12 से 32 में नागरिकों के _____________ का उल्लेख है।
2. भारत के नागरिकों के मूल अधिकार कोलिखिए।

3. वर्ष 2002 में ____________ द्वारा 6-14 वर्ष तक के बालकों के लिए शिक्षा को मूल अधिकार बनाया गया।
4. संविधान के 42वें संशोधन अधिनियम , 1976 द्वारा संविधान 10____________ को समाविष्ट कर दिया गया है।
5. भारत के प्रत्येक नागरिक के ____________ मौलिक कर्त्तव्य है
   i. 10
   ii. 11
   iii. 12
   iv. 13

12.4 विभिन्न स्तरों पर राजकीय शैक्षिक कार्य (Educational Functions of Government at Various Levels)

संविधान के अनुच्छेद 246 के अंर्तगत सूची 1 – संघ सूची तथा सूची 3- समवर्ती सूची में सम्मिलित शिक्षा विषयक तथ्य है । संविधान के अन्तर्गत सरकार के विभिन्न स्तरों पर शिक्षा से सम्बन्धित कर्तव्यों तथा दायित्वों का उल्लेख है। सरकार संघ स्तर पर, राज्य स्तर पर तथा स्थानीय स्तर पर शिक्षा सम्बन्धी कार्यों को व्यवहारिक रूप प्रदान करेगी। भारत का संविधान संघीय है। इसलिए शक्तियों का बटवारा केन्द्र और राज्यों के बीच किया गया है। शक्ति से सम्बन्धित तीन सूचियाँ निर्मित है:-

1. संघ सूची(Union list)
2. राज्य सूची (State list)
3. समवर्ती सूची (Concurrent list)

संघ सूची (Union list)154

भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 की राज्य सूची में प्रविष्टियाँ निम्नवत है-

- **63** इस संविधान के प्रारंभ पर काशी हिंदु विश्वविद्यालय , अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय और (दिल्ली विश्वविद्यालय) नामों से ज्ञात संस्थाएं (अनुच्छेद371ड़ के अनुसरण में स्थापित विश्वविद्यालय) संसद द्वारा, विधि द्वारा,राष्ट्रीय महत्व की घोषित कोई अन्य संस्था।
- **64** भारत द्वारा पूर्णतः या भागतःवित्तपोषित और संसद द्वारा , विधि द्वारा, राष्ट्रीय महत्व की घोषित वैज्ञानिक या तकनीकी शिक्षा संस्था।
- **65** संघ के अभिकरणऔर संस्थाएं जो-

क. वृत्तिक , व्यवसायिक या तकनीकी प्रशिक्षण के लिए है जिसके अंतर्गत पुलिस अधिकारियों का प्रशिक्षण है; या

ख. विशेष अध्ययन या अनुसंधान की अभिवृद्धि के लिए है; या

ग. अपराध के अंवेषण या पता चलाने में वैज्ञानिक या तकनीकी सहायता के लिए है।

- **66** उच्चतर शिक्षा या अनुसंधान संस्थाओं में तथा वैज्ञानिक और तकनीकी संस्थाओं में मानकों का समन्वय और अवधारणा ।

राज्य सूची (State list)

भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 की राज्य सूची में प्रविष्टियाँ निम्नवत है-

- **14**कृषि जिसके अंतर्गत कृषि शिक्षा और अनुसंधान, नाशक जीवों से संरक्षण और पादप रोगों का निवारण है।

समवर्ती सूची (Concurrent list)

सन 1976 में 42 वें संवैधानिक संशोधन से शिक्षा को समवर्ती सूची में सम्मिलित किया गया।
भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 की समवर्ती सूची में प्रविष्टियाँ निम्नवत है-

- **25**सूची1 की प्रविष्टि 63, 64, 64 और 66 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, शिक्षा जिसके अंतर्गत तकनीकीशिक्षा , आयुर्विज्ञान शिक्षा और विश्वविद्यालय है; श्रमिकों का व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण।

12.5 भारत का संविधान और शिक्षा

अनुच्छेद 28 –कुछ शिक्षा संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा या धार्मिक उपासना में उपस्थित होने के बारे में स्वतंत्रता-

1. राज्य – निधि से पूर्णतः किसी शिक्षा संस्था में कोई धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाएगी।
2. खण्ड (1) की कोई बात ऐसी शिक्षा संस्था को लागू नहीं होगी, जिसका प्रशासन राज्य करता है किंतु जो किसी ऐसे विन्यास या न्यास के अधीन स्थापित हुई है, जिसके अनुसार उस संस्था में धार्मिक शिक्षा देना आवश्यक है।
3. राज्य से मान्यता प्राप्त या राज्य-निधि से सहायता पाने वाली शिक्षा संस्था में उपस्थित होने वाले किसी व्यक्ति को ऐसी संस्था में दी जाने वाली धार्मिक शिक्षा में भाग लेने के लिए या ऐसी संस्था में या उससे संलग्न स्थान में की जाने वाली धार्मिक उपासना में उपस्थित होने के लिए तब तक बाध्य नहीं किया जाएगा जब तक कि उस व्यक्ति ने, या यदि वह अवयस्कहै तो उसके संरक्षक ने, इसके लिए अपनी सहमति नहीं दे दी है।

संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार

अनुच्छेद 29-अल्पसंख्यक- वर्गों के हितों का संरक्षण-

(1) भारत के राज्यक्षेत्र या उसके किसी भाग के निवासी नागरिकों के किसी अनुभाग को, जिसकी अपनी विशेष भाषा, लिपी या संस्कृति है, उसे बनाए रखने का अधिकार होगा।

(2)राज्य द्वारा पोषित या राज्य-निधि से सहायता पाने वाली किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश से किसी भी नागरिक ओको केवल धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा या इन्में से किसी के आधार पर वंचित नहीं किया जाएग।

अनुच्छेद 30- शिक्षा संस्थाओं की स्थापना करने का अल्पसंख्यक- वर्गों का अधिकार –

(1) धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक-वर्गों को अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन का अधिकार होगा।

(2) शिक्षा संस्थाओं को सहायता देने में राज्य किसी शिक्षा संस्थाके विरुद्ध इस आधार पर विभेद नहीं करेगा कि वह धर्म या भाषा पर आधारित किसी अल्पसंख्यक- वर्ग के प्रबंध में है।

अनुच्छेद 41– कुछ दशाओं में काम , शिक्षा और लोक सहायता पाने का अधिकार- राज्य अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर ,काम पाने के, शिक्षा पाने के और बेकारी, बुढ़ापा, बीमारी और निःशक्तता तथा अन्य अनर्ह अभाव की दशाओं में लोक सहायता पाने के अधिकारकोप्राप्त कराने का प्रभावी उपबंध करेगा।

अनुच्छेद 46- अनुसूचित जातियों , अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्लब वर्गों के शिक्षा और अर्थ सबंधी हितों की अभिवृद्धि – राज्य , जनता के दुर्बल वर्गों के , विशिष्टतया, अनुसूचित जातियों और जनजातियोंके शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से उनकी सुरक्षा करेगा ।

अनुच्छेद 15 (3) स्त्री शिक्षा का विशिष्ट प्रावधान – इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

अनुच्छेद 15 (4)- इस अनुच्छेद या अनुच्छेद 29 के खंड (2) की कोई बात राज्य को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों के किन्हीं वर्गों की उन्नतिके लिए या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

अनुच्छेद 350 व्यथा के निवारण के लिए अभ्यावेदन में प्रयोग की जाने वली भाषा- प्रत्येक व्यक्ति किसी व्यथा के निवारण के लिए संघ या राज्य के किसी अधिकारी या प्राधिकारी को, यथास्थिति , संघ में या राज्य में प्रयोग होने वाली किसी भाषा में अभ्यावेदन देने का हकदार होगा।

अनुच्छेद 350 क. प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएं- प्रत्येक राज्य के भीतर प्रत्येक प्राधिकारी भाषाई अल्पसंख्यक- वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगाऔर राष्ट्रपति किसी राज्य को ऐसे निर्देश दे सकेगा जो वह ऐसी सुविधाओं का उपबंध सुनिश्चित कराने के लिए आवश्यक या उचित समझता है।

अनुच्छेद 350 ख. भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गोंके लिए विशेष अधिकारी-(1) भाषाई अल्पसंख्यक- वर्गों के लिए एक विशेष अधिकारी होगाजिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा।

(2) विशेष अधिकारी का यह कर्तव्य होगा कि वह इस संविधान के अधीन भाषाई अल्पसंख्यक – वर्गों के लिए उपबंधित रक्षापायों से सम्बंधित सभी विषयों का अंवेषण करे और उन विषयों के सम्बध में ऐसे अंतरालों पर जो राष्ट्रपति निर्दिष्ट करे, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन दे और राष्ट्रपति ऐसे सभी प्रतिवेदनों को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगाऔर सम्बंधित राज्यों की सरकारों को भिजवाएगा।

अनुच्छेद 343- संघ की राजभाषा – संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी।

अनुच्छेद 351 हिंदी भाषा के विकास के लिए निदेश- संघ का यह कर्तव्य होगाकि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए ,उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप , शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक या वाछंनीय हो वहाँ उसके शब्द – भंडार के लिए मुख्य्त:संस्कृत और गौणत: अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे ।

12.6 शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 (Right to Education Act 2009)

- शिक्षा के अधिकार को संवैधानिक आधार प्रदान करने के लिए दिसम्बर 2002 में 86वाँ संविधान संशोधन द्वारा अनुच्छेद 21 A (भाग - III) जोड़ा गया जिसके अंतर्गत शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार का दर्जा दिया गया।
- 19 जुलाई 2006 को शिक्षा के अधिकार से जुड़े सभी संगठनों की संयुक्त बैठक बुलाई, जिसमें संसदीय कार्यवाही व निर्देशों की आवश्यकता व निर्धारण हेतु निर्णय लिए गये।
- 2 जुलाई 2009 को यह विधेयक केंद्रीय मंत्रीमंडल द्वारा अनुमोदित कर दिया गया ।
- 20 जुलाई 2009 को राज्यसभा द्वारा इसे पारित कर दिया गया है।

- 4 अगस्त 2009 को लोकसभा द्वारा भी इसे पारित कर दिया गया।
- 3 सितम्बर 2009 को राष्ट्रपति की स्वीकृति के पश्चातयह अधिनियम बन गया।
- 1 अप्रेल 2010 को यह अधिनियम जम्मू व कश्मीर राज्य को छोड़कर सम्पूर्ण भारत में लागू हो गया।

" शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 भारत में लागू होने के पश्चात भारत विश्वके उन 135 देशों में सम्मिलित हो गया है जिनमें शिक्षा के अधिकार को मूल अधिकार के रूप में मान्यता दी गई है। वास्तव में, शिक्षा जो एक संवैधानिक अधिकार शुरू में था अब उसे एक मौलिक अधिकार का दर्जा प्राप्त है. भारत के संविधान की शुरुआत में, शिक्षा का अधिकार अनुच्छेद 41 के तहत राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों के तहत मान्यता दी गई थी जिसके अनुसार,

"राज्य अपनी आर्थिक क्षमता और विकास की सीमाओं के भीतर, शिक्षा और बेरोजगारी, वृद्धावस्था, बीमारी और विकलांगता के मामले में सार्वजनिक सहायता करने के लिए काम करते है, सही हासिल करने के लिए प्रभावी व्यवस्था करने, और नाहक के अन्य मामलों में चाहते है "

नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का आश्वासन राज्य के नीति निर्देशक अनुच्छेद 45, के अनुसार निम्नवत दिया गया है-

"राज्य, इस संविधान के प्रारम्भ सेदस वर्ष की अवधि के भीतर सभी बालकों को चौदह वर्ष की आयु पूरी करने तक नि:शुल्कऔर अनिवार्य शिक्षा देने के लिए उपबंध करने का प्रयास करेगा"

शिक्षा का अधिकार अब 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों के लिए एक मौलिक अधिकार है। सरल शब्दों में इसका अर्थ यह है कि सरकार प्रत्येक बच्चे को आठवीं कक्षा तक की नि:शुल्क पढ़ाई के लिए उत्तरदायी होगी, चाहे वह बालक हो अथवा बालिका अथवा किसी भी वर्ग का हो। इस प्रकार इस कानून ने देश के बच्चों को मजबूत, साक्षर और अधिकार संपन्न बनाने का मार्ग तैयार कर दिया है।

इस अधिनियम में सभी बच्चों को गुणवत्तापूर्ण और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करनेका प्रावधान है, जिससे ज्ञान, कौशल और मूल्यों से युक्त होकर वे भारत के प्रबुद्ध नागरिक बनाये जा सके। यदि विचार किया जाए तो आज देशभर में स्कूलों से वंचित लगभग एक करोड़ बच्चों को शिक्षा प्रदान करना सचमुच हमारे लिए एक दुष्कर कार्य है। इसलिए इस लक्ष्य को साकार करने के लिए सभी हितधारकों — माता-पिता, शिक्षक, स्कूलों, गैर-सरकारी संगठनों और कुल मिलाकर समाज, राज्य सरकारों और केन्द्र सरकार की ओर से एकजुट प्रयास का आह्वान किया गया है।

इस अधिनियम में इस बात का प्रावधान किया गया है कि बालक की पहुंच के अन्तर्गत आने वाला कोई निकटवर्ती स्कूल किसी भी बच्चे को प्रवेश देने से इनकार नहीं करेगा। इसमें यह भी प्रावधान शामिल है कि प्रत्येक 30 छात्र के लिए एक शिक्षक के अनुपात को कायम रखते हुए पर्याप्त संख्या में

सुयोग्य शिक्षक स्कूलों में मौजूद होने चाहिए। स्कूलों को पांच वर्षों के भीतर अपने सभी शिक्षकों को प्रशिक्षित करना होगा। उन्हें तीन वर्षों के भीतर समुचित सुविधाएं भी सुनिश्चित करनी होगी, जिसमें खेल का मैदान, पुस्तकालय, पर्याप्त संख्या में अध्ययन कक्ष, शौचालय, शारीरिक विकलांग बच्चों के लिए निर्बाध पहुंच तथा पेय जल सुविधाएं शामिल है। विद्यालय प्रबंधन समितियों के 75 प्रतिशत सदस्य छात्रों की कार्यप्रणाली और अनुदानों के इस्तेमाल की देखरेख करेंगे। विद्यालय प्रबंधन समितियाँ तथा स्थानीय अधिकारी स्कूल से वंचित बच्चों की पहचान करेंगे और उन्हें समुचित प्रशिक्षण के बाद उनकी उम्र के अनुसार समुचित कक्षाओं में प्रवेश दिलाएंगे। सम्मिलित विकास को बढ़ावा देने के उद्देश्य से निजी स्कूल भी सबसे निचली कक्षा में समाज के गरीब और हाशिये पर रहने वाले वर्गों के लिए 25 प्रतिशत सीटें आरक्षित करेंगे।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

6. संविधान के किस अनुच्छेद के अंतर्गत सूची 1 – संघ सूची तथा सूची 3- समवर्ती सूची में सम्मिलित शिक्षा विषयक तथ्य है?
7. सन 1976 में 42 वे संवैधानिक संशोधन से शिक्षा को __________ में सम्मिलित किया गया।
   i. संघ सूची
   ii. राज्य सूची
   iii. समवर्ती सूची
8. __________ शिक्षा संस्थाओं की स्थापना करने का अल्पसंख्यक- वर्गों का अधिकार।
9. __________इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।
10. अनुच्छेद 343- संघ की रजभाषा __________ हिंदी और लिपि__________ देवनागरी होगी।
11. शिक्षा के अधिकार को संवैधानिक आधार प्रदान करने के लिए दिसम्बर 2002 में 86वाँ संविधान संशोधन द्वारा __________ जोड़ा गया जिसके अंतर्गत शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार का दर्जा दिया गया।
12. __________ 1 अप्रैल 2010 को जम्मू और कश्मीर को छोड़कर पूरे भारत में लागू हो गया।
13. शिक्षा का अधिकार अब __________वर्ष तक के सभी बच्चों के लिए एक मौलिक अधिकार है।

12.7 सारांश

संविधान के अनुच्छेद 12 से 32 में नागरिकों के मूल अधिकारों का उल्लेख है। वर्तमान में भारत के नागरिकों के छः मूल अधिकार है।वर्ष 2002 में 86वें संविधान संशोधन द्वारा 6-14 वर्ष तक के बालकों के लिए शिक्षा को मूल अधिकार बनाया गया। संविधान के 42वें संशोधन अधिनियम , 1976 द्वारा संविधान 10 मौलिक कर्त्तव्यों को समाविष्ट कर दिया गया है। वर्ष 2002 में 86वें संविधान संशोधन द्वारा संविधान के अनुच्छेद 51- क से एक अन्य मौलिक कर्तव्य समाहित किया गया।संविधान के अनुच्छेद 246 के अंर्तगत सूची 1 – संघ सूची तथा सूची 3- समवर्ती सूची में सम्मिलित शिक्षा विषयक तथ्य है । संविधान के अन्तर्गत सरकार के विभिन्न स्तरों पर शिक्षा से सम्बन्धित कर्तव्यों तथा दायित्वों का उल्लेख है।शिक्षासे सम्बंधित संवैधानिक प्रावधान निम्नलिखित है-

1. भारत के संविधान के अनुच्छेद 15(3) तथा 15(4) में वर्णित उपबंध से सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े नागरिकों, स्त्रियों और बालिकाओं के लिए आरक्षण का प्रावधान।
2. संविधान के अनुच्छेद 29 तथा 30 के आधार पर अल्पसंख्यक वर्ग के संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकारों का प्रावधान।
3. संविधान के अनुच्छेद 41 में वर्णित राज्य की नीति के निदेशक तत्व के अनुसार कुछ दशाओं में काम, शिक्षा और लोक सहायता पाने के अधिकार।
4. संविधान के अनुच्छेद 45 में में वर्णित राज्य की नीति के निदेशक तत्व के अनुसार बालकों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षाकाउपबंध।
5. अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों के शिक्षाऔरअर्थ संबंधी हितोंकी अभिवृद्धि हेतु राज्यों के कर्तव्य के संदर्भ में संविधान के अनुच्छेद 46।
6. वर्ष 2002 में संविधान के 86वें संशोधन द्वारा माता-पिता अथवा अभिभावकों के बच्चों अथवा पाल्यों को शिक्षा प्राप्त कराने संबंधी मूल अधिकार।
7. संविधान के अनुच्छेद 246 के अंर्तगत सूची 1 – संघ सूची तथा सूची 3- समवर्ती सूची में सम्मिलित शिक्षा विषयक तथ्य।
8. संविधान के अनुच्छेदों 350, 350 क, 350 ख तथा 351 के अंर्तगत वर्णित विशेष निदेश।
9. बालक- बालिकाओं के निः शुल्क एंव अनिवार्य शिक्षा प्राप्त करनेकाशिक्षा काअधिकार अधिनियम 2009। शिक्षा का अधिकार अब 6-14 वर्ष तक के बच्चों के लिए एक मौलिक अधिकार है । सरल शब्दों में इसका अर्थ यह है कि सरकार प्रत्येक बच्चे को आठवीं कक्षा तक की निःशुल्कपढ़ाई के लिए उत्तरदायी होगी, चाहे वह बालक हो अथवा बालिका अथवा किसी भी वर्ग का हो । इस प्रकार इस कानून ने देश के बच्चों को मजबूत, साक्षर और अधिकार संपन्न बनाने का मार्ग तैयार कर दिया है ।

12.8 शब्दावली

1. **भारत का संविधान- उद्देशिका:-**

   हम भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व- संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा समस्त नागरिकों कोसामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय विचार, अभिव्यक्ति,विश्वास,धर्म और उपासना की स्वतंत्रता,प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढाने के लिए दृढसंकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवंबर , 1949 ई0 को एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते है।

2. **समवर्ती सूची (Concurrent list)**

   सन् 1976 में 42 वें संवैधानिक संशोधन से शिक्षा को समवर्ती सूची में सम्मिलित किया गया।

   भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 की समवर्ती सूची में प्रविष्टियाँ निम्नवत हैं-

   25 सूची1 की प्रविष्टि 63, 64, 64 और 66 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, शिक्षा जिसके अंतर्गत तकनीकीशिक्षा , आयुर्विज्ञान शिक्षा और विश्वविद्यालय है; श्रमिकों का व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण।

12.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नोंके उत्तर

1. मूल अधिकारों
2. वर्तमान में भारत के नागरिकों के निम्नलिखित छः मूल अधिकार है-
   i. समता का अधिकार
   ii. स्वातंत्र्य का अधिकार
   iii. शोषण के विरुद्ध अधिकार
   iv. धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार
   v. संस्कृति और शिक्षाका अधिकार (6-14 वर्ष की आयु)
   vi. संवैधानिक उपचारों का अधिकार
3. 86वें संविधान संशोधन
4. मौलिक कर्त्तव्यों
5. 11
6. अनुच्छेद 246 के
7. iii. समवर्ती सूची
8. अनुच्छेद 30

9. अनुच्छेद 15 (3)
10. हिंदी, देवनागरी
11. अनुच्छेद 21 A (भाग - III)
12. शिक्षा का अधिकार अधिनियम
13. वर्ष6-14

12.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भारत का संविधान, भारत सरकार, 1990
2. मिश्रा मन्जु , भारतीय शिक्षा पद्धति और उसकी समस्याएँ,2007, ओमेंगा पब्लिकेशन्स
3. Lal and Palod , Educational Thought and Practice, Surya Publications

12.11निबंधात्मक प्रश्न

1. भारतके संविधान में वर्णित मूल अधिकारों एवं मूल कर्तव्यों को लिखिए।
2. भारत के संविधान में वर्णितशिक्षा संबंधी अनुच्छेदों की व्याख्या कीजिए।
3. शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 का वर्णन कीजिए।

इकाई -13 राष्ट्रीय शिक्षा आयोग 1964-66 (कोठारी कमीशन)

National Education Commission (1964-66)

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13.3 आयोग के सदस्य
  13.3.1 आयोग की नियुक्ति के कारण व प्रयोजन
  13.3.2 आयोग का प्रतिवेदन
13.4 राष्ट्रीय शिक्षा आयोग के मुख्य सुझाव
  13.4.1 शिक्षा के प्रशासन, वित्त एवं नियोजन सम्बन्धी सुझाव
  13.4.2 शिक्षा और राष्ट्रीय लक्ष्य
  13.4.3 अध्यापकों की स्थिति
  13.4.4 अध्यापक शिक्षा
  13.4.5 अध्यापक शिक्षा के दोष
  13.4.6 प्रशिक्षण सुविधाओं का विस्तार
  13.4.7 विद्यालय शिक्षा का विस्तार
  13.4.8 प्राथमिक शिक्षा का विस्तार
  13.4.9 माध्यमिक शिक्षा का विस्तार
13.5 सारांश
13.6 शब्दावली
13.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
13.8 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
13.9 निबंधात्मक प्रश्न

13.1 प्रस्तावना

भारत काफी समय ब्रिट्रिश शासन के अधीन रहा है यहाँ पर ब्रिटिश शासन की नीतिया ही लागू रही है जो भारतीयों के हित में न होकर ब्रिटिश के प्रति ज्यादा झुकी हुयी थी स्वतन्त्र भारत में शिक्षा की विभिन्न समस्याओं पर विचार करने हेतु 1948में विश्वविधालय आयोग (राधाकृष्णनन कमीशन) की नियुक्ति की गयी। इस आयोग ने विश्वविधालय शिक्षा के प्रशासन संगठन और उसके स्तर को उचाँ उठाने सम्बन्धी अनेक ठोस सुझाव दिये।। उसके कुछ सुझावों का क्रियान्वयन भी किया गया उससे उच्च शिक्षा के क्षेत्र में कुछ सुधार भी हुआ परन्तु वह सब हाथ नहीं लगा जिसे हम प्राप्त करना चाहते थे शिक्षा के क्षेत्र में भारत सरकार का दूसरा बड़ा कदम था माध्यमिक शिक्षा आयोग (मुदालियर कमीशन) की नियुक्ति इस आयोग ने तत्कालीन माध्यमिक शिक्षा के दोषो को उजागर किया और उसके पुनर्गठन हेतु ठोस सुझाव दिए, कुछ प्रान्तीय सरकारों ने उसके सुझावों के अनुसार माध्यमिक शिक्षा में परिवर्तन किया परन्तु यह परिवर्तन हमारे उद्देश्यो को पूर्ण नहीं कर सका अतः भारत सरकार ने शिक्षा के पुनर्गठन पर समग्र रुप से सोचने समझने और देश भर के लिए समान शिक्षा निति का निर्माण करने के उद्देश्य से 14 जुलाई 1964 को डा. डी. एस. कोठारी (तत्कालीन अध्यक्ष विश्वविधालय अनुदान आयोग) की अध्यक्षता में राष्ट्रीय शिक्षा आयोग का गठन किया इस आयोग को इसके अध्यक्ष के नाम पर कोठारी आयोग (Kothari Commission)भी कहते है।आयोग का उद्घाटन 2 अक्टूबर 1964 को नई दिल्ली के विज्ञान भवनमें हुआ।

13.2 उद्देश्य

1. कोठारी कमिशन के सदस्यों के बारे में जान सकेंगे।
2. आयोग की नियुक्ति के कारण व प्रयोजन को जान सकेंगे।
3. राष्ट्रीय शिक्षा आयोग के मुख्य सुझाव को जान सकेंगे।
4. शिक्षा के प्रशासन, वित्त एवं नियोजन सम्बन्धी सुझाव को जान सकेंगे।
5. तत्कालीन शिक्षा और राष्ट्रीय उद्देश्यों को समझ सकेंगे।
6. अध्यापक शिक्षा व अध्यापकों की स्थिति को समझ सकेंगे।

13.3 आयोग के सदस्य (Members of The Commission)

शिक्षा आयोग में कुल 17 सदस्य थे। जिनमें 6 अन्य देशो के शिक्षा विशेषज्ञय थे राष्ट्रीय शिक्षा आयोग का संगठन निम्न प्रकार है

अध्यक्ष - प्रोफेसर दौलत सिंह कोठारी अध्यक्ष विश्वविधालय अनुदान आयोग।

सदस्य

1. श्री ए. आर. दाऊद - भूतपूर्व स्थानापन्न संचालन माध्यमिक शिक्षा प्रसार योजना निदेशालय नई दिल्ली।
2. श्री एच. एल. एलविन संचालक शिक्षा संस्थान, लन्दन विश्वविधालय लन्दन।
3. श्री आर. एस. गोपालस्वामी संचालक जनरल अनुसन्धान सस्थान नई दिल्ली।
4. प्रो. संतोषी इहारा- विज्ञान एवं अभियन्त्रण विद्यालय वसदा विश्वविधालय टोकियो।
5. डा. बी. एस. झा भूतपूर्व संचालक कामनवेल्थ शिक्षा सम्पर्क इकाई लन्दन।
6. श्री पी. एन. कृपाल शैक्षिक परामर्शदाता एवं सचिव भारत सरकार शिक्षा मन्त्रालय, नई दिल्ली।
7. प्रो. एम. पी. माथूर प्राध्यापक अर्थशास्त्र एवं सार्वजनिक प्रशासन राजस्थान विश्वविधालय (बादमें उपकुलपति राजस्थान विश्वविधालय)।
8. डा. वी. पी. पाल संचालक भारतीय कृर्शि अनुसंन्धान संस्थान नई दिल्ली।
9. कु0 एस. पनान्दीकर अध्यक्ष शिक्षा विभाग कर्नाटक विश्वविधालय।
10. प्रो रोगर रेवेल डाइरेक्टर, सेन्टर फॉर पापुलेषन स्टेडीज हावर्ड स्कूल ऑफ पब्लिक हेल्प, हारवर्ड विश्वविधालय कॅम्ब्रिज (अमेरिका)।
11. डॉ. के. जी. सैयदेन, उपकुलपति, जादवपुर विष्विद्यालय कलकत्ता।
12. डा. त्रिगुण सेन, उपकुलपति जादवपुर विश्वविधालय कलकत्ता।
13. प्रो एस. ए. षमोवस्की, प्राध्यापक भौतिक षास्त्र मास्को विश्वविधालय , मास्को।
14. श्री एम जीन थामस, शिक्षा महानिरीक्षक फ्रांस।
15. सचिव श्री जे. पी. नायक अध्यक्ष, शैक्षिक योजना प्रशासन एवं अर्थ विभाग गोखले राजनीतिक एवं अर्थशास्त्र संस्थान पूना।
16. संयुक्त सचिव श्री जे. एफ. मैक्डूगल, उप संचालक विद्यालय एवं उच्च शिक्षा विभाग, यूनस्को, पेरिस।

इस प्रकार 17 व्यक्तियों को इस कमीशन में लिया गया इस कमीशन ने अक्टूबर 1964 से देश भर का दौरा किया कमीशन ने सभी राज्यो व केन्द्रशासित प्रदेशो में भ्रमण किया भ्रमण के दौरान कमीशन ने 9000 व्यक्तियों के इन्टरव्यू लिए इन व्यक्तियों में समाज के हर वर्ग के व्यक्ति थे। कमीशन ने अपने कार्य का संचालन करने के लिए 22 कार्य टोलियाँ और अध्ययन दल नियुक्त किए। इस कमीशन को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने में दो वर्ष लगे।

13.3.1 आयोग की नियुक्ति के कारण व प्रयोजन (Reasons and purposes for settling up the commission)

भारत सरकार ने अपने 14 जुलाई 1964 के प्रस्ताव में नियुक्ति के कारण एवं प्रयोजनों को निम्नलिखित शब्दों में प्रकाशित किया

i. शिक्षा, विज्ञान और तकनीकी में अनुसन्धान - शिक्षा के द्वारा ही चतुर्मुखी विकास होता है। यह विकास तभी संभव है जब विज्ञान और प्रौद्यौगिकी के सभी साधनों का प्रयोग करते हुए शोधकार्य किया जाये। शिक्षा और विज्ञान पर अधिक से अधिक धन अनुसन्धान करने में लगाया जाऐगा।

ii. राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का विकास:- राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का विकास करना भारत सरकार की प्रमुख आवश्यकता थी शिक्षा के द्वारा ही लोकतन्त्रीय समाज का निर्माण तथा राष्ट्रीय एकता सम्भव है शिक्षा से ही सन्तुलित एवं संगठित राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का विकास होगा।

iii. धर्म निरपेक्ष लोकतन्त्र की शिक्षा - परम्परागत शिक्षा व्यस्था में बदलाव लाकर एक धर्मनिरपेक्ष प्रजातन्त्र के लिए नए लक्ष्य निर्धारित करना होना चाहिय जैसे निर्धनता का अन्त, कृषि का आधुनिकीकरण, उद्योगों का विकास, विज्ञान और प्रोद्यौगिकी का प्रयोग, समाजवादी समाज की रचना, शिक्षा रोजगार और सांस्कृतिक प्रगति के लिए समान अवसर आदि।

iv. शिक्षामें गुणात्मक विकास - स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात शिक्षा में बहुत तेजी से विकास हुआ है परन्तु उताना विकास नही हुआ जितना की आवश्यकता थी शिक्षा का स्तर निम्न था संख्यात्मक वृद्धि तो हुई है लेकिन गुणात्मक वृधि कम ही हुई।

v. शिक्षा स्तरों का विकास- शैक्षिक विकास के लिए सम्पूर्ण क्षेत्र का विकास करना आवश्यक है। क्योंकि शिक्षा प्रणाली के विभिन्न अंग एक दूसरे पर प्रबल प्रतिक्रिया करते हैं प्राथमिक शिक्षा यदि अच्छी होगी तो माध्यमिक शिक्षा भी अच्छी होगी माध्यमिक शिक्षा उत्तम है तो उच्च शिक्षा भी उत्तम होगी अतः शिक्षा स्तरों का उन्नयन करने के लिए शिक्षा के सम्पूर्ण क्षेत्र की जाँच करना आवश्यक है।

13.3.2 आयोग का प्रतिवेदन Report of the commission

आयोग ने इस बड़े कार्य को सम्पन्न करने के लिए दो विधियो का अनुसरण किया पहली निरिक्षण एवं साक्षात्कार और दूसरी प्रश्नावली इनका विवरण निम्न प्रकार है

i. **निरिक्षण एवं साक्षात्कार विधि (Observation and Interview method)-** निरीक्षण एवं साक्षात्कार के लिए आयोग ने कार्यकारी दल (Working Groups)बनाए। इन दलों ने देश के विभिन्न प्रान्तो का दौरा किया, उनके अनेक विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालयो को देखा और उनके छात्रो शिक्षकों और प्रशासकों से साक्षात्कार किया अनेक शिक्षाविदो से भेंट कर उनसे विचार विमर्श किया और मुख्य तथ्यों को लेखबद्ध किया।

ii. **प्रश्नावली विधि (Questionnaire Method) -** आयोग ने शिक्षा की विभिन्न समस्याओं से सम्बन्धित एक लम्बी प्रश्नावली (Questionnaire) तैयार की और उसे

शिक्षा से जुडे विभिन्न वर्ग के लगभग 5000 व्यक्तियों के पास भेजा इनमे से 2400 व्यक्तियों ने इसे भरकर लौटाया आयोग ने इस प्रश्नावली का सांख्यिकीय विवरण तैयार किया इसके बाद आयोग ने इन दोनो विधियो से प्राप्त सुझावों पर विचार विमर्श किया अन्त में 29 जून 1966 को अपना प्रतिवेदन शिक्षा एवं राष्ट्रीय प्रगति (Education and national Development) भारत सरकार को प्रेषित किया

iii. **प्रतिवेदन (Report)**-शिक्षा आयोग ने अपना प्रतिवेदन 29 जून 1966 को भारत सरकार के तत्कालीन शिक्षा मंत्री एम. सी. छागला के समक्ष प्रस्तुत किया लगभग 700 प्रश्ठों का यह प्रतिवेदन 3 भागों में विभाजित है और इसका नाम है

13.4 राष्ट्रीय शिक्षा आयोग के मुख्य सुझाव Suggestion of National Education Commission (Kothari Commission)

राष्ट्रीय शिक्षा आयोग ने तत्कालीन भारतीय शिक्षा का समग्ररूप से अध्ययन किया और उसके सम्बन्ध में अपने सुझाव दिए आयोग की मूलधारणा है कि शिक्षा राष्ट्र के विकास का मूल आधार है। उसने अपने प्रतिवेदन का शुभारम्भ ही इस वाक्य से किया है 'देश का उसकी कक्षाओं में निर्मित हो रहा है।' आयोग के प्रतिवेदन के सम्बन्ध में दूसरा मुख्य तथ्य यह है कि भविष्य इसमें शिक्षा की कुछ समस्याओं का विवेचन तो समग्र रुप से किया गया है जैसे शिक्षा के राष्ट्रीय लक्ष्य, शिक्षा की संरचना, शिक्षकों की स्थिति, शैक्षिक अवसरों की समातनता कृषि शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, स्त्री शिक्षा और प्रौढ़ शिक्षा और कुछ समस्याओं का विवेचन स्तर विशेष की शिक्षा के सन्दर्भ में किया गया है; जैसे विद्यालयी शिक्षा के उद्देश्य , पाठ्यक्रम और शिक्षण विधियाँ आदि और उच्च शिक्षा के उद्देश्य , पाठ्क्रम और शिक्षण विधियाँ आदि में सुधार के रूप में देख सकते है।

13.4.1शिक्षा के प्रशासन, वित्त एवं नियोजन सम्बन्धी सुझाव Suggestion for Administration of education, Finance and Planning

आयोग ने इन तीनो के सम्बन्ध में निम्नलिखित रचनात्मक सुझाव दिए।

शिक्षा के प्रशासन सम्बन्धी सुझाव

i. राष्ट्रीय शिक्षा अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद (NCERT)को अखिल भारतीय स्तर पर विद्यालयी शिक्षा का भार सौंपा जाएं।

ii. केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड (CABE)को और अधिक अधिकार दिए जाएँ।

iii. शिक्षा को राष्ट्रीय महत्व का विषय माना जाए और उसकी राष्ट्रीय नीति घोषित की जाए इसके लिए यदि आवश्यक हो तो केन्द्र सरकार 'नेशनल एजूकेशन एक्ट' बनाए और प्रान्तीय सरकारें 'स्टेट एजूकेशन एक्ट' बनाएँ

iv. भारतीय शिक्षा सेवा में उन व्यक्तियों का चयन किया जाए जिन्हें शिक्षण कार्य का अनुभव हो।

v. केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय में शिक्षा सलाहकार और शिक्षा सचिव के पदों पर सरकारी, गैरसरकारी, भारतीय शिक्षा सेवा और विश्वविद्यालयों में से योग्यतम व्यक्तियों का चयन किया जाए।

vi. शिक्षा प्रशासकों और शिक्षकों के बीच स्थानान्तरण की व्यवस्था की जाए।

शिक्षा के वित्त सम्बन्धि सुझाव

आयोग ने स्पष्ट किया कि 1965-66 की अपेक्षा 1985-86 में छात्रो की संख्या कम से कम दो गुनी हो जायेगी और प्रति छात्र व्यय 12 रु के स्थान पर 54 रु हो जाएगा इसलिए शिक्षा बजट में प्रति वर्ष वृद्धि करना आवश्यक है। इस सम्बन्ध में उसने अग्रलिखित सुझाव दिये।

i. केन्द्र सरकार अपने बजट में शिक्षा के लिए कम से कम 6 प्रतिशत का प्रावधान करे।

ii. राज्य सरकारे भी अपने बजटों में शिक्षा के लिए कम से कम 6 प्रमिषत का प्रावधान करें

iii. राज्यों में स्थानीय संस्थाओ (ग्राम पंचायतों और नगर पालिकाओं) करे उनके क्षेत्र की प्राथमिक शिक्षा संस्थाओं का विभिन्न भार सौपा जाएं।

iv. व्यक्तिगत स्रोतों से अधिक से अधिक धन प्राप्त किया जाए।

v. शिक्षा हेतु आप के स्रोत बढ़ाने के उपायों की खोज की जाए, इस क्षेत्र में अनुसंधान किए जांए।

शिक्षा के नियोजन सम्बन्धी सुझाव

1951 में हमारे देश में पंच वर्षीय योजनाओं का श्री गणेश हुआ। शिक्षा के क्षेत्र में भी पंचवर्षीय नियोजन प्रारम्भ हुआ इस नियोजन में अनेक खामियाँ थी। आयोग ने इसमें सुधार हेतु निम्नलिखित सुक्षाव दिए

i. शैक्षिक नियोजन केन्द्रीय और प्रान्तीय स्तर पर अलग अलग किया जाए

ii. विद्यालय शिक्षा का नियोजन स्थानीय निकाए और राज्य सरकारे मिलकर करे और उच्च शिक्षा का नियोजन प्रान्तीय और केन्द्रीय सरकारें मिलकर करें।

iii. शैक्षिक नियोजन वर्तमान और भविष्य की माँगों के आधार पर किया जाए राष्ट्रीय प्रान्तीय और उसके बाद स्थानीय आधार प्राथमिकताओं का वर्गीकरण किया जाए और उनके आधार पर सभी कार्यक्रम नियोजित किए जाएं।

iv. शैक्षिक नियोजन में अपव्यय एवं अवरोधन को रोकने के लिए विशेष प्रावधान किया जाए।

v. शैक्षिक नियोजन में शिक्षा के प्रसार के साथ साथ उसमें गुणात्मक सुधार के लिए व्यवसाय किया जाए।

13.4.2शिक्षा और राष्ट्रीय लक्ष्य (Education and National Objective)

शिक्षा द्वारा उपर्युक्त उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए आयोग ने निम्नांकित पंचमुखी कार्यक्रम का विचार प्रकट किया है

(1) शिक्षा व उत्पादन- आयोग ने शिक्षा द्वारा उत्पादन में वृद्धि करने के लिए निम्नांकित सुझाव दिए है.-

i. विद्यालयों तथा महाविद्यालयों के पाठयक्रम में विज्ञान को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाये
ii. कार्य- अनुभव को समस्त शिक्षा का अविभाज्य अंग स्वीकार किया जाए।
iii. कृषि कार्य के विकास में तथा उत्पादन को बढ़ाने में विज्ञान से सहायता लेनी जाये
iv. माध्यमिक शिक्षा को व्यावसायिक स्वरूप प्रदान किया जाये
v. विश्वविधालय तथा उच्च शिक्षामें कृषि तथा औद्योगिक शिक्षा को भी स्थान दिया जाये।

(2) समाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों का विकास (Development of social, Moral and Spiritual Values) इस सम्बन्ध में आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये है

i. समस्त शिक्षण संस्थाओं में नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा दी जाये।
ii. प्राथमिक स्तर पर इन मूल्यों की शिक्षा रोचक कहानियों द्वारा दी जाए।
iii. माध्यमिक स्तर पर इन मूल्यों के सम्बन्ध में अध्यापक तथा विद्यार्थी मिलकर विचार विमर्श करें।।
iv. विद्यालयों का वातावरण इन मूल्यों से ओत-प्रोत रखना चाहिए।

(3)शिक्षा और लोकतन्त्र की सुदृढ़ता (Education and Consolidation of Democracy)आयोग ने शिक्षा द्वारा प्रजातन्त्र को सुदृढ़ बनाने के लिए निम्नांकित सुझाव दिये है

i. 14 वर्ष तक के बालकों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा दी जाये
ii. बिना भेदभाव के सभी बालकों को शिक्षा के समान अवसर प्रदान किए जाएँ
iii. वयस्क शिक्षा के कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ
iv. माध्यमिक तथा विश्वविधालय शिक्षा का विकास करके सुयोग्य तथा कुशल नेतृत्व का प्रशिक्षण दिया जाये

(4) शिक्षा और आधुनिकीकरण (Education and Modernisations)- आयोग ने भारत के आधुनिकरण के लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए है

i. आधुनिकरण की दृष्टि से औद्योगिकी सहायता ली जाये
ii. आधुनिकरण करने के लिए शिक्षा को एक साधन के रूप में स्वीकार किया जाये
iii. सामान्य व्यक्ति के शिक्षा स्तर को ऊँचा किया जाये
iv. शिक्षा के द्वारा उचित मूल्यों और दृष्टि कोण का विकास हो।

13.4.3अध्यापकों की स्थिति (Status of Teachers)

आयोग ने शिक्षक की स्थिति में सुधार करने हेतु निम्न विचार व्यक्त किए है

1. वेतन (Remuneration)आयोग ने शिक्षकों के वेतन के विषयमें अघोलिखित विचार प्रकट किए है।

i. भारत सरकार विद्य़ालयों के शिक्षकों के न्यूनतम वेतनक्रम निश्चित करे।
ii. राजकीय तथा अराजकीय विद्यालयों के शिक्षकों के वेतनक्रमो में समानता के सिद्धान्त का पालन किया जाए
iii. विश्वविद्यालयों एवं उनसे सम्बन्द्ध कॉलेजों के अध्यापकों के वेतनक्रम में र्प्याप्त वृद्धि की जाए

2. वेतन क्रम सम्बन्धी सुझाव (Suggestions Regarding Pay Scales)आयोग ने शिक्षकों के वेतन क्रम के विषय में अधोलिखित सुझाव दिये

i. वेतन क्रमों को क्रियान्वित करने के साथ साथ शिक्षकों की योगयताओं एवं नियुक्ति की विधियों में सुधार किया जाए
ii. शिक्षकों को सरकारी कर्मचारियों के समान महँगई भत्ता दिया जाए
iii. शिक्षकों के वेतन क्रम प्रत्येक 5 वर्ष के पश्चात् दोहराये जाएँ
iv. शिक्षकों के वेतन क्रम के विषय में दिए सुझाव तत्काल क्रियान्वित हों।

3. नियुक्ति एवं पदोन्नति सम्बन्धी सुझाव (Suggestions Regarding Appointment and Promotion) –

i. किसी भी स्तर के शिक्षकों की न्यूनतम योग्यता बढ़ाई जाए और उनके चयन की विधियों को सुधारा जाएँ
ii. शिक्षकों के पदों पर योग्य व्यक्तियों की नियुक्ति की जाए इस हेतु अति योग्य व्यक्तियों को अग्रिम वेतन वृद्धि और अतिरिक्त प्रतिभा के व्यक्तियों को उच्च वेतनमान भी दिए जा सकते है
iii. सभी स्तरों पर महिला शिक्षकों की नियुक्ति प्रोत्साहित की जाए
iv. अपने पदों पर कार्यकुशलता का परिचय देने वालों को अग्रिम वेतन वृद्धि प्रदान की जाए
v. पदोन्नति का आधार वरीयता के स्थान पर योग्यता एवं कुषलता हो।

4. कार्य व सेवा की दशाये (Conditions of work and Service)- आयोग ने शिक्षकों के कार्य एवं सेवा की दशाओं में सुधार हेतु निम्न सुझाव दियें।

i. सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के शिक्षकों की सेवा दशाओं में समानता स्थापित की जाए।
ii. शिक्षा संस्थाओं में शिक्षकों के कुशलतापूर्वक कार्य करने हेतु न्यूनतम सुविधायें प्रदान की जाए
iii. शिक्षक को अपनी व्यावसायिक उन्नति करने हेतु उपयुक्त सुविधायें प्रदान की जाएँ
iv. शिक्षकों के अध्यापन कार्य के घण्टो को निश्चित करते समय उसके द्वारा किए जाने वाले अन्य कार्यो को दृष्टि गत रखा जाए
v. शिक्षकों को 5 वर्ष में कम से कम एक बार, देश के किसी स्थान में भ्रमण करने हेतु उनके वेतन के अनुसार रियायती दर पर रेल के टिकट दिए जाएँ
vi. सभी सरकारी एवं सहायता प्राप्त गैर सरकारी शिक्षकों के लिए त्रिमुखी लाभ योजना (जी. पी.एफ. बीमा और पेंशन) लागू होनी चाहिए
vii. ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य करने वाले शिक्षकों को आवास सुविधा दी जाए और शिक्षिकाओं को आवास सुविधा के साथ साथ विशेष भत्ता भी दिया जाय।

13.4.4अध्यापक शिक्षा (Teacher's Education)

आयोग ने अध्यापकों की व्यावसायिक शिक्षा के महत्व के सम्बन्ध में कहा है, शिक्षा की गुणात्मक उन्नति के लिए अध्यापकों की व्यावसायिक शिक्षा का ठोस कार्यक्रम अनिवार्य है

अध्यापक शिक्षा के उपर्युक्त महत्त्व के दृष्टि गत आयोग ने सर्वप्रथम अध्यापक शिक्षा के दोषों का उल्लेख किया और तत्पश्चात् इस शिक्षा के सुधार के सम्बन्ध में अपने विचारों को लेखबद्ध किया

13.4.5अध्यापक शिक्षा के दोष (Defects of Teacher's Education)

अध्यापक शिक्षा के दोष निम्न प्रकार पाये

i. प्रशिक्षण संस्थाओं का कार्य निम्न या साधारण कोटि का है।
ii. प्रशिक्षण संस्थाओं में योग्य अध्यापक नहीं है
iii. प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रमों में नवीनता, सजीवता एवं वास्तविकता नहीं है
iv. संस्थाओं द्वारा दिया जाने वाली प्रशिक्षण परम्परागत तथा अल्प उपयोगिता वाला है
v. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों को प्रशिक्षण देने वाली संस्थाय इन विद्यालयों की दैनिक समस्याओं से कोई सम्बन्ध नहीं रखती है

अध्यापक शिक्षा के उपरोक्त दोषों का निराकरण करने के लिए आयोग ने निम्नांकित महत्वपूर्ण सुझाव दिये है

1. अध्यापक शिक्षा की पृथकता का अन्त (Removal of Isolation of TeacherEducation) आयोग के अनुसार अध्यापकों की व्यावसायिक शिक्षा को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए उसे एक ओर विश्वविद्यालयों के साहित्यिक जीवन के और दूसरी ओर विद्यालय जीवन एवं शिक्षा सम्बन्धी नवीनतम विचारों के सम्पर्क में लाया जाना परम् आवश्यक है इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु आयोग ने निम्न सुझाव प्रस्तुत किए हैं -

i. कुछ विशिष्ट विश्वविद्यालयों में अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रमों के विकास, अध्ययन एवं अनुसंधान हेतु शिक्षा विभाग (Department of Education)को स्थापित किया जाए।

ii. शिक्षा विषय को विषय विद्यालयों के बी.ए. एवं एम. ए. के पाठ्यक्रमों में सम्मिलित किया जाए

iii. प्रशिक्षण संस्थाओं में प्रसार सेवा विभाग (Extension Service Department)करे स्थापित किया जाए।

iv. सब राज्यों में कॉम्प्रीहेन्सिव कॉलेजों(Comprehensive Colleges)को स्थापित कर उसमें शिक्षा के विभिन्न स्तरों के लिए अध्यापकों को प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए

v. प्रत्येक राज्य में अध्यापक शिक्षा की राज्य परिशद् (State Board of Teacher Education) स्थापित की जाए जिस पर सब क्षेत्रों एवं स्तरों के प्रक्षिण का उत्तरदायित्व हो

vi. विभिन्न प्रकार की शिक्षण संस्थाओं की पृथकता का अन्त करने के लिए सबको ट्रेनिंग कॉलेजों की संज्ञा दी जाए तथा उनको अपने क्षेत्रों के विश्वविधालय से सम्बद्ध किया जाए

2. व्यावसायिक शिक्षा की उन्नति (Improvement in Professional Education) आयोग ने अध्यापकों की व्यावसायिक शिक्षा की गुणात्मक उन्नति करने के लिए निम्नांकित सिफारिशे की है।

   i. शिक्षण के अभ्यास में गुणात्मक उन्नति करने के प्रयास किए जाये
   ii. छात्राध्यापकों के लिए विशिष्ट कार्यक्रमों एवं पाठ्यक्रमों का निमार्ण किया जाए
   iii. अध्यापक-शिक्षा के सब स्तरों पर कार्यक्रमों एवं पाठ्यक्रमों को उन आधारभूत उद्देश्यो के दृष्टि गत दोहराया जाए, जिनके लिए छात्राध्यापको को तैयार किया जा रह है
   iv. सब प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्क्रमों की शिक्षा एवं विषय सामाग्री में इस प्रकार रूपान्तर किया जाए जिससे छात्राध्यापकों को विद्यालयों में पढ़ाये जाने वाले विषयो के उद्देश्यो प्रयोजन एवं जटिलताओं का समुचित ज्ञान प्राप्त हो।

3. प्रशिक्षण की अवधि (Period of Training)आयोग के विभिन्न प्रशिक्षण स्तरों की अवधि के विषय में निम्न विचार व्यक्त किए है।

   i. प्राथमिक विद्यालयों के उन अध्यापकों के लिए, जिन्होंने सेकेण्डरी स्कूल कोर्स पास किया है, प्रशिक्षण की अवधि 2 वर्ष की हो

ii. माध्यमिक विद्यालयों के उन अध्यापकों के लिए जो स्नातक है, प्रशिक्षण की अवधि अभी तो 1वर्ष की हो पर कुछ समय के पश्चात2 वर्ष की कर दी जाए।
iii. शिक्षा में स्नातकोत्तर (M.Ed) पाठ्यक्रम की अवधि 1वर्ष की हो।

4. प्रशिक्षण संस्थाओं की उन्नति (Improvement in Training Institutions)- आयोग ने प्रक्षिण संस्थाओं की गुणात्मक उन्नति हेतु निम्न सिफारिशें की है

i. ट्रेनिंग कॉलेजों के अध्यापकों के पास शिक्षा की उपाधि (Degree in Education)के अतिरिक्त दो स्नातकोत्तर उपाधियाँ (Post-Graduate Degrees)हो
ii. ट्रेनिंग कॉलेजों के अध्यापकों में डॉक्टर (Doctorate)की उपाधियाँ वाले शिक्षकों की संख्या उचित अनुपात में हो
iii. गणित, विज्ञान, मनोविज्ञान एवं समाजषास्त्र आदि विषयो को शिक्षा देने के लिए विषेशज्ञों की नियुक्ति की जाए, चाहे उन्होनें प्रशिक्षण प्राप्त न किया हो
iv. प्रत्येक प्रशिक्षण संस्थाओं से एक प्रयोगात्मक (Experimental)विद्यालय संलग्न हो।
v. प्रशिक्षण संस्थाओं में छात्राध्यापको से किसी प्रकार का शुल्क न लिया जाए और उनको ऋण एवं छात्रवृत्तियों के रूप में आर्थिक सहायता देने की व्यवस्था की जाए
vi. विद्यालयो में कार्य करने वाले अप्रशिक्षित शिक्षकों को प्रशिक्षण देने हेतु केन्द्रीय स्थानों पर ग्रीष्मकालीन संस्थाओं (Summer Institutes)की योजना आरम्भ की जाए।

13.4.6प्रशिक्षण सुविधाओं का विस्तार (Expansion of Training Facilities)

आयोग ने प्रशिक्षण सुविधाओं का विस्तार करने हेतु निम्नांकित विचार व्यक्त किए

i. प्रशिक्षण संस्थाओं के आकार में एक निश्चित योजना के अनुसार पर्याप्त विस्तार किया जाए
ii. पत्र व्यवहार द्वारा शिक्षा एवं अल्पकालीन प्रशिक्षण की सुविधाओं में विस्तार किया जाए
iii. विद्यालय शिक्षकों को अध्यापन कार्य करते हुए शिक्षा तथा प्रशिक्षण प्राप्त करने कि सुविधायें प्रदान करने हेतु विश्वविद्यालयों तथा प्रशिक्षण संस्थाओं द्वारा विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों का आयोजन कराया जाए

आयोग के अनुसार शिक्षा के क्षेत्र में दो मुख्य प्रकार की व्यापक असमानतायें है

1. शिक्षा के सब पक्षों एवं स्तरों पर बालको एवं बालिकाओं की शिक्षा में व्यापक असमानता विद्यमान है
2. उन्नत वर्गो, पिछड़े वर्गो अछूत जातियों एवं आदिवासियों की शिक्षा में व्यापक असमानता विद्यमान है।

उपर्युक्त दोनों प्रकार की असमानताओं को दूर करने के लिए आयोग ने निम्न चार सुझाव दिये है।

i. निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाए।
ii. शिक्षा के खर्चो में कमी की जाए
iii. छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की जाए
iv. छात्रवृत्तियों की योजना हो

1. निःशुल्क शिक्षा (Free Education) आयोग ने निःशुल्क शिक्षा के सम्बन्ध में निम्न विचार व्यक्त किए है
   a. चौथी पंच वर्षीय योजना के अन्त से प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क किया जाए।
   b. पाँचवी पंचर्शीय योजना के अन्त तक या उससे पूर्व निम्न माध्यमिक शिक्षा को निःशुल्क किया जाए
   c. पाँचवी पंचर्शीय योजना के अन्त से 10 वर्ष की अवधि में उच्चतर माध्यमिक एवं विश्वविधालय शिक्षा का योग्य एवं निर्धन छात्रों के लिए निःशुल्क किया जाए।
2. शिक्षा के व्यय में कमी (Reducation in the Cost of Education)शिक्षा के खर्चो में निम्न प्रकार कमी की जाए
   a. प्राथमिक विद्यालयों के छात्रों को पाठ्य पुस्तके एवं लेखन सामग्री निःशुल्क प्रदान की जाए
   b. माध्यमिक विद्यालयों कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों में पुस्तक गृहों (Book Bank)की व्यवस्था की जाए जहाँ से छात्रों को पाठ्य पुस्तके दी जाएँ
   c. छात्रों के प्रयोग हेतु माध्यमिक विद्यालयों एवं उच्च शिक्षा की संस्थाओं के पुस्तकालयों में पाठ्य पुस्तकें प्राप्त संख्या में हो
   d. योग्य छात्रों को पाठ्य पुस्तकों एवं अन्य आवश्यक पुस्तकों को खरीदने के लिए आर्थिक सहायता प्रदान की जाए
3. छात्रवृत्तियों की व्यवस्था (Provision for Scholarships)-छात्रवृत्तियों के सम्बन्ध में निम्नांकित व्यव्स्था की जाए
   a. निम्न प्राथमिक स्तर के उपरान्त शिक्षा के सभी स्तरों पर छात्रवृत्तियों के कार्यक्रम को संगठित किया जाए
   b. छात्र के शिक्षा के एक स्तर से दूसरे स्तर पर पहुचने पर इस बात का पूर्ण ध्यान रखा जाए कि कोई निर्धन पर योग्य विद्यार्थी छात्रवृत्ति न मिल सकने के कारण अपनी भावी शिक्षा से वंचित न रह ज
   c. छात्रावासों में रहकर कॉलिज या विश्वविधालय में अध्ययन करने वाले छात्रो के लिए छात्रवृत्तियों के रूप में इतना धन दिया जाए, जिससे शिक्षा से सम्बन्धित सम्पूर्ण प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष व्यय की पूर्ति हो जाए।

d. अपने घरों पर रहकर अध्ययन करने वाले छात्रों के लिए केवल इतनी आर्थिक सहायता दी जानी चाहिए, जिससें अधिकांश प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष व्यय की पूर्ति हो जाए

4. छात्रवृत्तियों की योजनायें (Schemes of Scholarships)छात्रवृत्तियों की निम्न प्रकार की योजनाओं को लागू किया जाए
   a. राष्ट्रीय छात्रवृत्तियों की योजना की पूर्ति हेतु विश्वविधालय अनुदान आयोग द्वारा विश्वविधालय छात्रवृत्तियों (University Scholarships)की योजना आरम्भ की जाए
   b. व्यावसायिक शिक्षा (Vocational Education)ग्रहण करने वाले विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्ति व्यवस्था इस प्रकार हो(विद्यालय स्तर पर 30 प्रतिशत को, कॉलिज स्तर पर 50 प्रतिशत को)
   c. ऋण छात्रवृत्तियों (Loan Scholarships) की योजना को कुछ सीमा तक सामान्य शिक्षा प्राप्त करने वाले योग्य छात्रों के लिए क्रियान्वित किया जाए
   d. असाधारण प्रतिभा के विद्यार्थियों को विदेषों में उच्च शिक्षा प्राप्ति हेतु प्रतिवर्ष 500 छात्रवृत्तियाँ प्रदान की जानी चाहिए।
   e. कुछ छात्रों, विशेषकर विज्ञान एवं तकनीकी के छात्रों को ऋण छात्रवृत्तियॉ दी जाएँ , जो वे आगे चलकर अपने वेतन में कटौती द्वारा लौटाये।।
   f. माध्यमिक स्तर की छात्रवृत्तियों का वित्तीय भार राज्य सरकारों पर हो और उच्च स्तर के छात्रों को दी जाने वाली छात्रवृत्तियों का वित्तीय भार केन्द्र सरकार पर हो।

13.4.7 विद्यालय-शिक्षा का विस्तार Expansion of School Education

आयोग ने विद्यालय शिक्षा के विभिन्न अंगो के विस्तार के विषय में अपने सुझाव निम्न प्रकार दिये है।

पूर्वप्राथमिक शिक्षा का विस्तार (Expansion of pre-Primary Education)-

पूर्व प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के लिए निम्नांकित सुझाव है

i. प्रत्येक राज्य के राज्य शिक्षा संस्थान (State Institute of Education) में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के विस्तार हेतु राज्य स्तर पर केन्द्र की स्थापना की जाए।
ii. व्यक्तिगत प्रबन्धकों को उदार आर्थिक सहायता देकर, पूर्व प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना एवं संचालन करने हेतु प्रेरित किया जाए
iii. पूर्व प्राथमिक शिक्षा में परीक्षण कार्यद्ध (Experimention) को प्रोत्साहित किया जाए ताकि इस शिक्षा के विस्तार के लिए कम खर्चीले उपायों की खोज की जा सके।

iv. पूर्व प्राथमिक शिशुओं के खेल केन्द्रों (Sensorial Education)को प्राथमिक विद्यालयों से सम्बद्ध किया जाए

13.4.8प्राथमिक शिक्षा का विस्तार (Expansion of Primary Education)

आयोग के प्राथमिक शिक्षा के विस्तार हेतु सुझाव निम्न प्रकार है

i. सन् 1975-76 तक देश के सब बच्चों के लिए 5 वर्ष की उत्तम प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था हो।
ii. सन् 1985-86 तक देश के सब बच्चों के लिए 7 वर्ष की उत्तम प्राथमिक शिक्षा का योजना पूर्ण की जाए
iii. अपव्यय व अवरोधन (Wasteage and Stagnation)को अधिक से अधिक कम करने के लिए प्रयास किए जाने चाहिए।
iv. जो बालक कक्षा 7 पास करने के समय 14 वर्ष के न हों और अपनी सामान्य शिक्षा के क्रम को जारी रखने के इच्छुक न हों उनको इस आयु तक उनकी रुचि के अनुसार व्यावसायिक शिक्षा दी जानी चाहिए
v. प्राथमिक शिक्षा का विस्तार करने हेतु प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना इस प्रकार की जाए, कि लोअर प्राइमरी स्कूल किभी बालक से घर से क्रमश 1 और 3 मील से अधिक दूर न हों
vi. पिछडी जाति, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के बच्चों के लिए प्राथमिक विद्यालय खोले जाएँ
vii. मन्द बुद्धि और विकलांग बच्चों के लिए अलग से स्कूल खाले जाएँ

13.4.9माध्यमिक शिक्षा का विस्तार Expansion of Secondary Education)

धनाभाव के कारण कुछ अंशो तक माध्यमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाया जाना सम्भव नहीं है अतः माध्यमिक शिक्षा का विस्तार निम्न उपायों एवं सिद्धान्तों के दृष्टि गत किया जाना चाहिए।

i. माध्यमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों की संख्या शिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता के अनुसार निश्चित की जाए।
ii. माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायीकरण (Vocationalization)इस प्रकार किया जाए कि निम्न माध्यमिक स्तर पर 20 प्रतिशत छात्रों को एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर पर 50 प्रतिशत छात्रों को व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की जा सके।
iii. माध्यमिक शिक्षा के अवसरों की समानता स्थापित की जाए।
iv. माध्यमिक स्तर पर होने वाले अपव्यय और अवरोधन को रोकने के उपाय किए जाएँ ।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. कोठारी कमिशन का गठन कब हुआ?
2. राष्टीय शिक्षा आयोग में कुल कितने सदस्य थे ?
3. भारत में पंच वर्षीय योजना का श्री गणेश कब हुआ ?
4. अध्यापक शिक्षा के दो दोष लिखिए?
5. कोठारी कमीशन ने मंद वुद्धि बालको के लिय क्या सुझाव दिया था?

13.5 सारांश

भारत सरकार ने शिक्षा के पुनर्गठन पर समग्र रुप से सोचने समझने और देश भर के लिए समान शिक्षा निति का निर्माण करने के उद्देश्य से 14 जुलाई 1964 को डा. डी. एस. कोठारी (तत्कालीन अध्यक्ष विश्वविधालय अनुदान आयोग) की अध्यक्षता में राष्ट्रीय शिक्षा आयोग का गठन किया।आयोग ने इस बड़े कार्य को सम्पन्न करने के लिए दो विधियो का अनुसरण किया पहली निरिक्षण एवं साक्षात्कार और दूसरी प्रश्नावली, निरिक्षण एवं साक्षात्कार विधि (Observation and Interview method) निरीक्षण एवं साक्षात्कार के लिए आयोग ने कार्यकारी दल (Working Groups)बनाए। इन दलों ने देश के विभिन्न प्रान्तो का दौरा किया, उनके अनेक विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालयो को देखा और उनके छात्रो शिक्षकों और प्रशासकों से साक्षात्कार किया अनेक शिक्षाविदो से भेंट कर उनसे विचार विमर्श किया और मुख्य तथ्यों को लेखबद्ध किया। शिक्षा के राष्ट्रीय लक्ष्य, शिक्षा की संरचना, शिक्षकों की स्थिति, शैक्षिक अवसरों की समातनता कृषि शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, स्त्री शिक्षा और प्रौढ़ शिक्षा और कुछ समस्याओं का विवेचन स्तर विशेष की शिक्षा के सन्दर्भ में किया।

13.6 शब्दावली

1. शिक्षा और आधुनिकीकरण - आयोग ने भारत में आधुनिकरण के लिए औद्योगिकी सहायता व शिक्षा को एक साधन के रूप में स्वीकार करने शिक्षा स्तर को ऊँचा उठाने तथा शिक्षा के द्वारा उचित मूल्यों और दृष्टि कोण का विकास होने की बात कही।

13.7स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. 14 जुलाई 1978

2. 17 सदस्य
3. वर्ष1951
4. अध्यापक शिक्षा के दो दोष निम्न हैं :-
    i. प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रमों में नवीनता, सजीवता एवं वास्तविकता नहीं है।
    ii. प्रशिक्षण संस्थाओं द्वारा दिया जाने वाली प्रशिक्षण परम्परागत तथा अल्प उपयोगिता वाला है।
5. मन्द बुद्धि और विकलांग बच्चों के लिए अलग से स्कूल खाले जाएँ ।

13.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. लाल (डॉ) रमन बिहारी, भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएं, राज प्रिंटर्स, मेरठ।
2. जे. (डॉ) एस. वालिया (2009)भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास, अहमपाल पब्लिशर्स, मेरठ।
3. शुक्ला (डॉ) सी. एस. (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
4. शर्मा, रामनाथ व शर्मा, राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
5. शीलू मैरी (डॉ) (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य, रजत प्रकाशन नई दिल्ली।

13.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. कोठारी आयोग की नियुक्ति के कारण व प्रयोजन का विस्तार से वर्णन किजीय?
2. राष्ट्रीय शिक्षा आयोग के मुख्य सुझावका विस्तार से वर्णन किजीय?
3. शिक्षा के प्रशासन, वित्त एवं नियोजन सम्बन्धी सुझावसे आप क्या समझते हो। व्याख्या किजीय। अध्यापक शिक्षा के सम्बन्ध में कोठारी आयोग के सुझावों का हमारी शिक्षा पर क्या प्रभाव पड़ा?

इकाई- 14 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986
National Education Policy 1986

14.1 प्रस्तावना
14.2 उद्देश्य
14.3 राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 कादस्तावेज
14.4 कार्य योजना 1986 का दस्तावेज
14.5 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के मूल तत्व
14.5.1 मुक्त विश्वविद्यालय तथा दूरस्थ शिक्षा
14.5.2 ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना
14.6 सारांश
14.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
14.8 शब्दावली
14.9 संदर्भ ग्रंथ सूची
14.10 निबंधात्मक प्रश्न

14.1 प्रस्तावना

भारत देश सदियों तक अधीन रहा है जिसके कारण भारत की शिक्षा व्यवस्था चरमरा गयी थी इस शिक्षा व्यवस्था को पटरी पर लाने के लिय स्वन्त्रन्ता के बाद अनेक नीतियों का निर्माण किया गया लेकिन समय व सरकार बदलने के साथ आधारभूत नीतियों को लागू नहीं किया जा सका।परिणाम यह रहा कि सरकार बदलते ही नीतियों में भी परिवर्तन देखा गया।1969 में केन्द्र की कांग्रेस सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति घोषित की थी, कई प्रान्तों में 10+2+3 शिक्षा संरचना लागू हो गई थी, कई प्रान्तों ने अपने-अपने ढ़ग से त्रिभाषा सूत्र लागू कर दिया था, कई प्रान्तों में कृषि, व्यवसायिक एवं तकनीकी शिक्षा, विज्ञान शिक्षा और वैज्ञानिक शोधों के लिए विशेष प्रावधान किए जाने लगे थे, प्रायः सभी प्रान्तों में परीक्षा प्रणाली में सुधार की प्रक्रिया शरू हो गई थी, आधुनिकीकरण के नाम पर विज्ञान एवं गणित की शिक्षा अनिवार्य कर दी गई थी और शैक्षिक अवसरों की समानता के लिए कदम उठाये जाने लगे थे। परन्तु 1977 में केन्द्र में जनता दल सत्तारूढ़ हो गया और मोरारजी देसाई प्रधानमन्त्री बने। मोरारजी देसाई ने 10+2+3 शिक्षा संरचना के स्थान पर 8+4+3 शिक्षा संरचना का विचार प्रस्तुत किया। परिणाम यह हुआ कि तत्कालीन केन्द्रीय शिक्षा मन्त्री श्री प्रताप चन्द्र चन्दर ने कुछ शिक्षाविदों और सांसदों के सहयोग से एक नई शिक्षा नीति तैयार की और 1979 में उसकी

घोषणा कर डाली। इसे अभी लागू भी नहीं किया जा सका था कि 1980 में केन्द्र में पुनः कांग्रेस सत्ता में आ गई और श्रीमती इन्दिरा गाँधी पुनः प्रधानमन्त्री बनीं। इन्दिरा गाँधी ने पुनः राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 के अनुपालपर जोर दिया। इसी बीच इन्दिरा गाँधी की हत्या कर दी गई, उनके स्थान पर राजीव गाँधी को प्रधानमन्त्री बनाया गया।

युवा प्रधानमन्त्री राजीव गाँधी ने हर क्षेत्र में आन्दोलनकारी कदम उठाने शुरू किए, शिक्षा के क्षेत्र में भी। उन्होने कहा कि वर्तमान शिक्षा राष्ट्र की माँगों को पूरा करने में असमर्थ है, इनका पुननिरीक्षण होना चाहिए और पुनगर्ठन होना चाहिए। पर इस बार न तो किसी आयोग का गठन किया गया और न ही किसी समिति का। सर्वप्रथम सरकार ने तत्कालीन शिक्षा का सर्वेक्षण कराया और उसे शिक्षा की चुनौतीः नीति सम्बन्धी परिप्रेक्ष्य' (Challenge of Education: A Policy Perspective)नाम से अगस्त, 1983 में प्रकाशित किया। इस दस्तावेज में भारतीय शिक्षा की 1951 से 1983 तक की प्रगति यात्रा का सांख्यिकीय विवरण, उसकी उपलब्धियों एवं असफलताओं का यर्थाथ चित्रण और उसके गुण-दोषों का सम्यक् विवेचन किया गया है। सरकार ने इस दस्तावेज को जनता के हाथों में पहुँचाया और इस पर देशव्यापी बहस शुरू की। सभी प्रान्तों के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों से सुझाव प्राप्त हुए। केन्द्रीय सरकार ने इस सुझावों के आधार पर एक नई शिक्षा नीति तैयार की और उसे संसद के बजट अधिवेशन 1986 में प्रस्तुत किया। संसद के पास कराने के बाद इसे मई 1986 में प्रकाशित किया गया। इस शिक्षा नीति की घोषणा के कुछ माह बाद इसकी कार्य योजना ((Plan of Action)नामक दस्तावेज प्रकाशित किया गया। यह भारत की ऐसी पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति है। इस नीति के बारे में कहा गया था कि यह आने वाले समय के लिय शिक्षा का महाधिकार-पत्र (Megna Chartaa) साबित होगी।

14.2 उद्देश्य

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 ने शिक्षा में जो क्रांतिकारी परिवर्तन किए है उनको जान सकेंगे।
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के दस्तावेजो की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
3. मिड दे मिल योजना के उद्देश्यों को जान सकेंगे।
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के मूल तत्व को जान सकेंगे।
5. प्राथमिक शिक्षा को स्थिति को जान सकेंगे।

14.3 राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986का दस्तावेज (Documents with Rregard to National Education Policy)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 का दस्तावेज 12 भागों में विभाजित है। यहाँ उनका वर्णन संक्षेप में प्रस्तुत है-

प्रथम भाग- भूमिका(Introductory):-राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 का व्यापक प्रभाव पड़ा हैसभी प्रान्तों में 10+2+3 शिक्षा संरचना स्वीकार कर ली गई है, प्राथमिक शिक्षा 90 प्रतिशत बच्चों को उपलब्ध है, माध्यमिक स्तर पर विज्ञान और गणित की शिक्षा को अनिवार्य कर दिया गया है, उच्च शिक्षा के स्तर को उठाने की प्रक्रिया शुरू हो चुकी है और देश की आवश्यकतानुसार जन शक्ति की पूर्ति हो रही है। पर साथ ही यह भी स्वीकार किया गया है। कि उस नीति के अधिकांश सुझाव कार्य रूप में परिणित नहीं हो सके हैं। फिर इस बीच देश की परिस्थितियों में भारी परिवर्तन हुआ है। देश की जनसंख्या तेजी से बढ़ने पर लोकतन्त्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति में अनेक अड़चनें आ रही हैं। इनके अतिरिक्त हमें भविष्य में अनेक समस्याओं का सामना करना होगा, अतः आवश्यक है कि वर्तमान और भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के लिए सरकार शिक्षा की नई नीति तैयार करे और उसे क्रियान्वित करे।

द्वितीय भाग- शिक्षा का सार और उसकी भूमिका (The Essence and Role of Education) :- सबके लिए शिक्षा हमारे भौतिक एवं अध्यात्मिक विकास की बुनियादी आवश्यकता है। शिक्षा मनुष्य को सुसंस्कृत बनाती है और संवेदनशील बनाती है जिससे राष्ट्रीय एकता विकसित होती है।यह मनुष्य में स्वतन्त्र चिन्तन एवं सोच-समझ की क्षमता उत्पन्न करती है जिससे हम लोकतन्त्रीय लक्ष्य-स्वतन्त्रता, समानता, भ्रातृत्व, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता और न्याय की प्राप्ति कर सकते हैं, आर्थिक विकास कर सकते हैं और अपने वर्तमान एवं भविष्य का निर्माण कर सकते हैं। शिक्षा वास्तव में एक उत्तम निवेश (Investment) है। सभी अभिभावकों को आज की स्थिति को देखते हुय उत्तम विधालयो में शिक्षा दिलानी चाहिय।

तीसरे भाग- राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली (National Education System):- राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली में संविधान की मूल धारणा- 'एक निश्चित स्तर तक बिना किसी भेदभाव के सभी को समान शिक्षा उपलब्ध हो' को सर्वप्रथम वरीयता दी जानी चाहिए।साथ ही पूरे देश में समान शिक्षा संरचना 10+2+3 लागू होनी चाहिए। इसमें प्रथम 10 वर्षीय शिक्षा की ऐसी आधारभूत पाठ्यचर्या (Core Curriculum) तैयार होनी चाहिए जिसके द्वारा राष्ट्रीय मूल्यों और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास हो सके। साथ ही प्रत्येक स्तर की शिक्षा का न्यूनतम अधिगम स्तर (Minimum Level of Learning) निश्चित होना चाहिए और उसमें गुणात्मक सुधार होना चाहिए।

चौथे भाग- समानता के लिए शिक्षा (Education for Equality):-सभी वर्गों को शिक्षा का समान अधिकार प्राप्त हो। शिक्षा के क्षेत्र में व्याप्त विषमताओं को दूर कर महिलाओं, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, पिछड़े वर्गो, अल्पसंख्यकों, विकलांगों और प्रौढ़ की शिक्षा के लिए विशेष प्रयत्न किए जाने चाहिए। क्योकि शिक्षा के ही माध्यम से व्यक्ति अपने अधिकारों को पाप्त जीवन कर सकता है अथवा न मिलने पर कानून का सहारा लेकर सम्मान से जीवित रह सकता है।

पाँचवें भाग- विभिन्न स्तरों पर शिक्षा का पुनर्गठन-शिशुओं की देख-भाल और शिक्षा (Reorganization of Education at Different Stages-Early Childhood Care and Education) :- पूर्व प्राथमिक स्तर पर शिशुओं के पोषण, प्राथमिक स्तर पर बच्चों की रूचिपूर्ण क्रियाओं, माध्यमिक स्तर पर गति निर्धारक विद्यालयों (Pace Setting Schools) की स्थापना और उच्च स्तर पर खुले विश्वविद्यालयों (Open Universities) की स्थापना पर बल दिया गया है। साथ ही यह घोषणा की गई है कि चुने हुए क्षेत्रों में रोजगार की उपाधि से विलग करने की शुरूआत की जाएगी।

छठे भाग- तकनीकी एवं प्रबन्ध शिक्षा (Technical and Management Education) :- इसमें तकनीकी और प्रबन्ध शिक्षा के महत्त्व को स्पष्ट किया गया है और इसकी समुचित व्यवस्था पर बल दिया गया है।

सातवें भाग- शिक्षा व्यवस्था को कारगर बनाना (Making the System Work) :-शिक्षा तब तक प्रभावशाली नहीं हो सकती जब तक शिक्षक शिक्षा के अन्दर शिक्षा के प्रति समपर्ण न हो। प्रशासनिक तन्त्र को सक्रिय बनाने, शिक्षकों की जवाबदेही निश्चित करने और शिक्षार्थियों को कर्त्तव्य बोध कराने पर बल दिया गया है।

आठवें भाग- शिक्षा की विषयवस्तु और प्रक्रिया को नया मोड़ देना (Reorienting the Content and Process of Education) :- सांस्कृतिक मूल्यों और वैज्ञानिक सोच में समन्वय करने पर बल दिया गया है, मूल्यों की शिक्षा और भारतीय भाषाओं के विकास के साथ-साथ गणित और विज्ञान की शिक्षा पर बल दिया गया है और स्वास्थ्यवर्द्धक क्रियाओं-खेल-कूद आदि पर बल दिया गया है और अन्त में परीक्षा प्रणाली एवं मूल्यांकन प्रक्रिया में सुधार के लिए सुझाव दिए हैं।

नवें भाग- शिक्षक (The Teacher) :- शिक्षको के वेतनमान बढ़ाने और सेवाशर्तो को आकर्षक बनाने की बात कही गई है और शिक्षक प्रशिक्षण में सुधार के सुझाव दिए गए हैं। ताकि शिक्षा का विकास हो सके। व्यवसाय से संतुष्ट शिक्षक ही शिक्षण कार्यो में अधिक रूचि लेते है।

दसवें भाग- शिक्षा का प्रबन्ध (The Management of Education) :- शिक्षा में प्रशासन के विकेन्द्रीकरण पर बल दिया गया है, राष्ट्रीय स्तर पर 'भारतीय शिक्षा सेवा', राज्य स्तर पर 'प्रान्तीय शिक्षा सेवा' और जिले स्तर पर 'जिला शिक्षा परिषद'के गठन की बात कही गई है और शिक्षा प्रशासन को चुस्त करने की बात कही गई है। साथ ही शिक्षा पर राष्ट्रीय आय की 6 प्रतिशत धनराशि व्यय करने की घोषणा की गई है।

ग्यारहवें भाग- संसाधन तथा समीक्षा (Resources and Review) :- राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 को लागू करने के लिए एक बड़ी धनराशि की आवश्यकता होगी। अतः प्रत्येक प्रस्तावित कार्य के लिए अनुमानित धनराशि आवंटित करने की व्यवस्था की जाएगी। इस भाग में इस बात पर भी बल

दिया गया है कि प्रत्येक पाँच वर्ष बाद नई शिक्षा नीति के क्रियान्वयन और उसके परिणामों की समीक्षा की जाए। ताकि शिक्षा सभी बच्चों को आसानी से सुलभ हो सके।

बारहवें और अन्तिम भाग- भविष्य (The Future) :- भारत सरकार ने सार्वभोमिक शिक्षा के उद्देश्य हेतु सभी के द्वार तक शिक्षा की अलख जगाने का प्रयास किया है यह विश्वास प्रकट किया गया है कि हम निकट भविष्य में शतप्रतिशत साक्षरता का लक्ष्य प्राप्त कर सकेंगे और हमारे देश के उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति सर्वोत्तम स्तर के होंगे।

14.4 कार्य योजना 1986 का दस्तावेज (Documents with regard to Plan of Action)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा मई 1986 में की गई और नवम्बर 1986 में कार्य योजना (Plan of Action, POA) नामक दस्तावेज प्रकाशित किया गया। यह कार्य योजना 24 भागों में विभाजित है। यहाँ उसका वर्णन संक्षेप में प्रस्तुत है।

प्रथम भाग- पूर्व बाल्यावस्था परिचर्या एवं शिक्षा (Early Childhood Care and Education)**:-** शिशुओं के जन्म से लेकर 6 वर्ष की आयु तक स्वास्थ्य की देखभाल एवं पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रसार हेतु एकीकृत बाल विकास सेवाएँ (Integrated Child Development Services) के पूर्व विद्यालय शिक्षा पक्ष को सुदृढ़ करने, पूर्व बाल्यावस्था शिक्षा योजना में स्वास्थ्य एवं पोषण को जोड़ने, दिवस परिचर्या केन्द्रों को सुदृढ़ करने करके और इन सब कार्यो के लिए अलग से धनराशि की व्यवस्था करने की योजना की प्रस्तुत की गई है।

द्वितीय भाग-प्रारम्भिक शिक्षाऔर ब्लैक बोर्ड योजना (Elementary Education and Operation Black Board)**:-**प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने के लिए 1 किमी0 की दूरी के अन्दर प्राथमिक स्कूल और 3 किमी0 की दूरी के अन्दर उच्च प्राथमिक स्कूल और आवश्यकतानुसार निरौपचारिक शिक्षा केन्द्र खोलने की बात कही गई और प्राथमिक स्कूलों की दशा-सुधारने के लिए ब्लैक बोर्ड योजना प्रस्तुत की गई है। ब्लैक बोर्ड योजना के अर्न्तगत प्राथमिक विश्वविद्यालयों की न्यूनतम आवश्यकताओं (दो कमरों का भवन, फर्नीचर, शिक्षण सामग्री, पुस्तकालय सामग्री खेल सामग्री और कम से कम दो शिक्षकों) की पूर्ति करने और इन सबके लिए धनराशि जुटाने का संकल्प किया गया है।

तृतीय भाग-माध्यमिक शिक्षा तथा नवोदय विद्यालय (Secondary Education and Navodya Vidyalya)**:-** माध्यमिक शिक्षा के प्रसार एंव उन्नयन के लिए आवश्यकतानुसार माध्यमिक स्कूल खोलने, सभी माध्यमिक स्कूलों की दशा सुधारने, माध्यमिक स्तर पर खुली शिक्षा की व्यवस्था करने और गति निर्धारक-नवोदय विद्यालयों की स्थापना की पूरी रूपरेखा प्रस्तुत की गई है।

चतुर्थ भाग-शिक्षा का व्यावसायीकरण (Vocationalization of Education) **:-** प्रारम्भ से ही कार्यानुभव पर बल देने, +2 के लिए विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक पाठ्यक्रम तैयार करने और उपेक्षित वर्गो के बच्चों के लिए अलग से विशेष व्यावसायिक संस्थान स्थापित करने पर बल दिया गया है।

पंचम भाग-उच्च शिक्षा (Higher Education) **:-**उच्च शिक्षा के उन्नयन हेतु छात्रों को प्रवेश परीक्षा द्वारा प्रवेश देने, पाठ्यक्रमों के पुनर्गठन करने, उच्च शिक्षा संस्थानों को संसाधन उपलब्ध कराने और उनके शिक्षकों के लिए पुनर्बोध कार्यक्रमों की व्यवस्था करने की बात कही गई है।

छठे भाग-मुक्त विश्वविद्यालय एवं संस्थान (Open University and Distance Education) **:-**इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के कार्यक्रमों को विस्तार देने और नए मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना सावधानी से करने का कार्यक्रमों की व्यवस्था करने की बात कही गई है।

सातवें भाग-ग्रामीण विश्वविद्यालय एवं संस्थान (Rural Universities and Institutes) **:-** केन्द्रीय ग्रामीण संस्थान परिषद (Central Council of Rural Institutes) का गठन करने, ग्रामीण विश्वविद्यालयों एंव संस्थाओं का पुनर्गठन करने और इन क्षेत्रों के कुछ संस्थानों को स्वायत्तता प्रदान करने की योजना प्रस्तुत की गई है।

आठवें भाग-तकनीकी एवं प्रबन्ध शिक्षा (Technical and Management Education) **:-** अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (AICTE) एवं राज्यों के तकनीकी शिक्षा बोर्डो को सुदृढ़ करने, कुछ अच्छे तकनीकी तथा प्रबन्ध शिक्षा संस्थाओं को स्वायत्तता प्रदान करने, तकनीकी शिक्षा संस्थाओं में अन्तर्सम्बन्ध बढ़ाने और इस क्षेत्र में सतत् शिक्षा की व्यवस्था करने की बात कही गई है।

नौवें भाग-प्रणाली को कार्यकारी बनाना (Making the System Work) **:-** संस्थाओं के प्रशासन तथा शिक्षकों के लिए मानक निर्धारित करने, शिक्षक तथा छात्रों की कार्य प्रणाली में सुधार करने और शिक्षा संस्थाओं का मूल्यांकन करने पर बल दिया गया है।

दसवें भाग- उपाधियों की रोजगार से विलगता एवं मानव शक्ति का नियोजन (Delinking Degrees from Jobs and Manpower Planning) **:-**राष्ट्रीय परीक्षण सेवा (National Test Service) शुरू करना निश्चित किया गया है। अब क्षेत्र विशेष के रोजगार प्राप्त करने के लिए क्षेत्र विशेष के राष्ट्रीय परीक्षण में उत्तीर्ण होना आवश्यक होगा।

ग्यारहवें भाग- अनुसंधान तथा विकास (Research and Development) **:-** उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रमों को विकसित करने, अनुसंधान केन्द्रों की अधिसंरचना (Infrastructure) में सुधार करने,

अनुसंधान हेतु प्रतिभाओं की खोज करने और कार्यरत शिक्षकों को अनुसंधान के अधिक अवसर सुलभ कराने की योजना प्रस्तुत की गई है।

बारहवें भाग- नारी समानता के लिए शिक्षा (Education for Women's Equality) **:-** बालिकाओं के लिए अलग से स्कूल व कॉलिज खोलने, बालिकाओं के लिए अधिक छात्रवृतियों की व्यवस्था करने और शिक्षकों की नियुक्ति में महिलाओं को वरीयता देने की योजना प्रस्तुत की गई है।

तेरहवें भाग-अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा पिछड़े वर्ग की शिक्षा (Education of SCs, STs and OBCs) **:-** इनके क्षेत्रों में विद्यालय खोलने को प्राथमिकता देने, इन वर्गों के बच्चों को दी जाने वाली छात्रवृत्तियों की दर बढ़ाने, इनके लिए छात्रावासों की व्यवस्था करने और इन जातियों के शिक्षकों की नियुक्ति करने की योजना प्रस्तुत की गई है।

चौदहवें भाग-अल्पसंख्यकों की शिक्षा (Education of Minorities) **:-** अल्पसंख्यकों के क्षेत्रों में स्कूल और पौलिटैक्निक कॉलिज खोलने, शिक्षकों को प्रशिक्षित करने, इनके लिए कोचिंग सेन्टर खोलने और इनकी बच्चियों की शिक्षा की व्यवस्था पर विशेष ध्यान देने पर बल दिया गया है।

पन्द्रहवें भाग-विकलागों की शिक्षा (Education of the Handicapped) **:-**जनपद स्तर पर विकलांगता जानकारी हेतु सेवाएँ शुरू करने और इनकी शिक्षा की उपयुक्त व्यवस्था करने की बात कही गई है।

सोलहवें भाग-प्रौढ़ शिक्षा (Adult Education) **:-** प्रौढ़ शिक्षा, सतत् शिक्षा को गति प्रदान करने के लिए ग्रामों में सतत् शिक्षा केन्द्र, पुस्तकालय एवं वाचनालय स्थापित करने पर बल दिया गया है।

सत्रहवें भाग-स्कूल शिक्षा की विषयवस्तु तथा प्रक्रिया (Content and Process of School Education) **:-** राष्ट्रीय कोर पाठ्यक्रम और पाठ्य पुस्तकों में सुधार पर विशेष बल दिया गया है।

अठारहवें भाग-मूल्यांकन प्रक्रिया तथा परीक्षा सुधार (Evaluation Process and Examination Reforms)**:-** केवल 10 तथा 12 कक्षाओं के अन्त में सार्वजनिक परीक्षा करने सतत् मूल्यांकन करने और अक्षर ग्रेड प्रणाली अपनाने की बात कही गई है। और साथ ही राष्ट्रीय परीक्षण सेवा शुरू करने एवं नकल विरोधी कानून बनाने की बात कही गई है।

उन्नीसवें भाग-युवा तथा खेल (Youth and Sports) **:-**शारीरिक शिक्षा एवं खेलों को सम्मिलित करने पर बल दिया गया है।

बीसवें भाग-भाषा विकास (Language Development) **:-** आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास और हिन्दी को सर्म्पक भाषा के रूप में विकसित करने के लिए आर्थिक सहायता देने का वायदा किया गया है।

इक्कीसवें भाग-सांस्कृतिक परिपेक्ष्य (The Cultural Perspective) **:-** सांस्कृतिक कार्यक्रमों को पाठ्यचर्या का अंग स्वीकार किया गया है। ताकि व्यक्ति संस्कारवान बन सके।

बाईसवें भाग-संचार साधन तथा शैक्षिक तकनीकी (Media and Educational Technology)**:-** शिक्षा में रेडियो, टेलीविजन, कम्प्यूटर एवं ओवर हैड प्रोजेक्टर आदि के प्रयोग की संस्तुति की गई है।

तेईसवें भाग-शिक्षक एवं उनका प्रशिक्षण (Teacher and their Training) **:-** शिक्षक शिक्षामें सुधार हेतु प्रत्येक जिले में जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (DIETs)स्थापित करने, कुछ अच्छे कॉलेजों को शिक्षक शिक्षा कॉलेजों (CTEs) में समुन्नत करने और कुछ बहुत अच्छे कॉलेजों को 'शिक्षा उच्च अध्ययन केन्द्रों (CASEs)में सम्मुनत करने की योजना प्रस्तुत की गई है और साथ ही 'राष्ट्रीय शिक्षा परिषद' (NCTE)को स्वायत्त दर्जा देने की बात कही है।

चौबीसवें एवं अन्तिम भाग-शिक्षा का प्रबन्ध (Management of Education) **:-** मानव संसाधन मन्त्रालय को सुदृढ़ करने, प्रशासन का विकेन्द्रीयकरण करने, भारतीय शिक्षा सेवा शुरू करने और जिला शिक्षा परिषदों का गठन करने की योजना प्रस्तुत की गई है।

14.5 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के मूल तत्व Main Components of National Education Policy

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 और उसकी कार्य योजनासे जो तत्त्व उजागर होते हैं, उन्हें निम्नलिखित रूप में क्रमबद्ध किया जा सकता है-

1. **शिक्षा प्रशासन का विक्रेन्द्रीयकरण किया जाएगा :-**इस शिक्षा नीति के दसवें भाग में शिक्षा प्रशासन के विकेन्द्रीयकरण पर बल दिया गया है और राष्ट्रीय स्तर पर 'भारतीय शिक्षा सेवा', प्रान्तीय स्तर पर 'प्रान्तीय शिक्षा सेवा' और जिला स्तर पर 'जिला शिक्षा परिषद' के गठन की घोषणा की गई है।
2. **शिक्षा की व्यवस्था हेतु पर्याप्त धनराशि की व्यवस्था की जाएगी :-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के तृतीय भाग में यह स्वीकार किया गया है कि शिक्षा मनुष्य का भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास करती है और यह हमारे सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास, लोकतन्त्रीय मूल्यों (स्वतन्त्रता, समानता, भ्रातृत्व, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता और न्याय) के विकास और राष्ट्रीय लक्ष्यों (जनसंख्या नियन्त्रण, पर्यावरण संरक्षण और आधुनिकीकरण) की प्राप्ति के लिए परम आवश्यक है। शिक्षा के आभाव में इन सबकी प्राप्ति नहीं की जा सकती। शिक्षा एक उत्तम निवेश है। इस शिक्षा नीति के ग्यारहवें भाग में इसे क्रियान्वित करने के लिए पर्याप्त धनराशि

उपलब्ध कराना स्वीकार किया गया है और यह घोषणा की गई है कि केन्द्र अपने बजट में शिक्षा पर 6 प्रतिशत का प्रावधान करेगा। साथ ही प्रत्येक स्तर पर जन सहयोग को प्रोत्साहित करने का प्रयत्न किया जाएगा।

3. **सम्पूर्ण देश में 10+2+3 शिक्षा संरचना लागू होगी :-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के तृतीय भाग में सम्पूर्ण देश के लिए 10+2+3 शिक्षा संरचना स्वीकार की गई है। प्रथम 10 वर्षीय शिक्षा पूरे देश के लिए समान होगी, इसके लिए एक आधारभूत पाठ्यचर्या (Core Curriculum) होगी। +2 पर प्रतिभाशाली छात्र-छात्राओं को विश्वविद्यालय शिक्षा के लिए तैयार किया जाएगा और सामान्य छात्र-छात्राओं को विशेष की आवश्यकाताओं और छात्र-छात्राओं की रूचि एवं योग्यतानुसार व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की जाएगी। +3 पर छात्रों को उच्च ज्ञान प्रदान किया जाएगा जो देश की सांस्कृतिक सुरक्षा और उसके आधुनिकीकरण में सहायक होगा,साथ ही चिकित्सा, न्याय, कृषि, विज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी जिसके द्वारा समाज की माँगों की पूर्ति होगी।
4. **विभिन्न स्तरों पर शिक्षा का पुनर्गठन किया जाएगा :-**इस शिक्षानीति के पाँचवें भाग में शिक्षा के सभी स्तरों का पुनर्गठन करने पर बल दिया गया है। और पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च शिक्षा की पाठ्यर्चया में सुधार करने और उनके स्तर को उठाने पर बल दिया गया है। शिक्षा के सभी स्तरों पर एक तरफ सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों की शिक्षा और दूसरी तरफ गणित, विज्ञान एवं कम्प्यूटर प्रयोग आदि की शिक्षा पर बल दिया गया है, सांस्कृतिक संरक्षण एवं आधुनिकीकरण में समन्वय पर बल दिया गया है।
5. **पूर्व प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी :-** इस स्तर पर शिशुओं के शारीरिक एवं मानसिक विकास पर ध्यान दिया जाएगा; उनके भोजन, वस्त्र, सफाई और पर्यावरण पर ध्यान दिया जाएगा और उनके लिए खेल-कूद एवं व्यायाम की उचित व्यवस्था की जाएगी।
6. **अनिवार्य एवं नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य को शीघ्रातिशीघ्र प्राप्त किया जाएगा :-**प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाया जाएगा। अभी 90 प्रतिशत बच्चों को 1 किमी0 की दूरी पर प्राथमिक विद्यालय उपलब्ध हैं, शेष 10 पतिशत को 1990 तक उपलब्ध करा दिए जाएँगे। 1995 तक 11 से 14 आयु वर्ग के शत प्रतिशत बच्चों को भी उच्च प्राथमिक शिक्षा सुलभ करा दी जाएगी। प्राथमिक विद्यालयों की दशा में सुधार किया जाएगा।
7. **माध्यमिक शिक्षा का पुनर्गठन किया जाएगा:-** इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति के पाँचवें भाग में यह घोषणा की गई है कि माध्यमिक शिक्षा सभी इच्छुक लड़के-लड़कियों को सुलभ कराई जाएगी। इस स्तर पर त्रिभाषा सूत्र लागू होगा और गणित, विज्ञान सामाजिक विज्ञान, मानविकी, इतिहास, राष्ट्रीयता, संवैधानिक दायित्व, नागरिक अधिकार एवं कत्तर्व्य, सांस्कृतिक संस्कार और कार्यानुभवको अनिवार्य किया जाएगा। प्रत्येक जिले में एक नवोदय विद्यालय स्थापित किया जाएगा जो अन्य विद्यालयों के लिए आदर्श विद्यालय होगा। +2 पर सामान्य शिक्षा के साथ-साथ क्षेत्र विशेष की आवश्यकतानुसार व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी और

यह प्रयत्न किया जाएगा कि 1995 तक इस व्यावसायिक वर्ग में 25 प्रतिशत छात्र-छात्राएँ शिक्षा ग्रहण करें।

8. **उच्च शिक्षा का प्रसार एवं उन्नयन किया जाएगा :-** इस शिक्षा नीति के पाँचवें भाग में यह स्पष्ट किया गया है कि उच्च शिक्षा द्वारा छात्रों में विशिष्ट ज्ञान एवं कुशलता का विकास किया जाएगा जिससे राष्ट्रका विकास होगा। इसके मौजूदा पाठ्यक्रमों में सुधार किया जाएगा और शिक्षण को चिन्तनपरक बनाया जाएगा। साथ ही शिक्षकों के कार्यो का मूल्यांकन किया जाएगा और उनकी पदोन्नति योग्यता के आधार पर की जाएगी। उच्च शिक्षा का स्तर मान बनाए रखने का उत्तरदायित्व विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का होगा। उच्च शिक्षा को सर्वसुलभ कराने के लिए खुले विश्वविद्यालयों (Open Universities) की स्थापना की जाएगी।
9. **तकनीकी एवं प्रबन्ध शिक्षा में सुधार किया जाएगा :-** इस शिक्षा नीति के छठे भाग में तकनीकी एवं प्रबन्ध शिक्षा के महत्त्व को स्वीकार करते हुए उसकी उचित व्यवस्था करने पर बल दिया गया है। यह घोषणा की गई है कि तकनीकी एवं प्रबन्ध शिक्षा को भविष्य की आवश्यकतानुसार नियोजित किया जाएगा और महिलाओं और समाज के कमजोर वर्ग के बच्चों को तकनीकीशिक्षा की पूरी-पूरी सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाएँगी। इस शिक्षा के स्तर को उठाने के लिए इनके पाठ्यक्रमों को अद्यतन बनाया जाएगा और सैद्धान्तिक ज्ञान की अपेक्षा प्रायोगिक दक्षता पर अधिक बल दिया जाएगा और साथ ही शोध कार्य पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। इस शिक्षा का स्तरमान निश्चित करने और इस प्रकार की शिक्षण संस्थाओं पर नियन्त्रण करने के लिए 'अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद' (All India Council for Technical Education) को कानूनी अधिकार दिए जाएँगे। निम्न स्तर की तकनीकी संस्थाओं को बन्द किया जाएगा और इस क्षेत्र में उच्च स्तरीय कार्य करने वालों को प्रोत्साहन दिया जाएगा।
10. **परीक्षा प्रणाली और मूल्यांकन प्रक्रिया में सुधार किया जाएगा :-**राष्ट्रीय शिक्षा नीति,1986 के आठवें भाग के अन्त में तत्कालीन परीक्षा प्रणाली और मूल्यांकन प्रक्रिया में सुधार की चर्चा की गई है। यह घोषणा की गई है कि मूल्यांकन को एक सतत् प्रक्रिया बनाया जाएगा, बाह्य मूल्यांकन को अधिक महत्त्व दिया जाएगा, परीक्षाओं को वैध और विश्वसनीय बनाया जाएगा, प्रश्नपत्रों की रचना और उत्तर पुस्तकों के मूल्यांकन को वस्तुनिष्ठ बनाया जाएगा और श्रेणी के स्थान पर ग्रेड सिस्टम लागू किया जाएगा।
11. **शिक्षकों के स्तर और शिक्षक प्रशिक्षण में सुधार किया जाएगा :-**शिक्षकों का चयन उनकी योग्यता के आधार पर किया जाएगा। उनके स्तर को उठाने के लिए उनके वेतनमान बढ़ाए जाएँगे और सेवाशर्तो को आकर्षक बनाया जाएगा। पूरे देश में समान कार्य के लिए समान वेतनमान के सिद्धान्त को लागू किया जाएगा, साथ ही सेवापूर्व और सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण में सुधार किया जाएगा। प्रत्येक जिले में 'जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान'(District Institute of Education and Training, DIET) की स्थापना की जाएगी जिनमें प्राथमिक शिक्षकों और निरौपचारिक शिक्षा तथा प्रौढ़ शिक्षा के कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी और साथ

ही अल्पकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जाएँगे और इस क्षेत्र में शोध कार्य कीये जाएगे। घटिया किस्म के प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालयों को बन्द कर दिया जाएगा। कुछ चुने हुए उच्च स्तर के माध्यमिक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों का दर्जा बढ़ाया जाएगा, उन्हें 'शिक्षक शिक्षा महाविद्यालय'(College of Teacher Education, CTE में समोन्नत किया जाएगा जिनमें माध्यमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण और इस क्षेत्रमें शोध कार्य की व्यवस्था होगी।

12. **प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रमों का विस्तार किया जाएगा :-** प्रौढ़ शिक्षा को राष्ट्रीय लक्ष्यों से जोड़ा जाएगा और 15-35 आयु वर्ग के प्रौढ़ों को साक्षर बनाने के लिए सरकारी और गैरसरकारी संगठनों का उपयोग किया जाएगा। औद्योगिक एवं व्यापारिक प्रतिष्ठानों को उनमें कार्यरत निरक्षक प्रौढ़ों को साक्षर बनाने का उत्तरदायित्व सौंपा जाएगा। प्रौढ़ शिक्षा के दूसरे पक्ष-अद्यतन जानकारी हेतु सतत् शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी। ग्रामीण क्षेत्रों में सतत् शिक्षा केन्द्र खोले जाएँगे और पुस्तकालयों और वाचनालयों की व्यवस्था की जाएगी। प्रौढ़ शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार में जनसंचार के साधनों का प्रयोग किया जाएगा।
13. **सतत् शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी :-** युवा वर्ग, गृहणियों, किसानों, व्यापारियों और विभिन्न उद्योगोंमें कार्यरत व्यक्तियों को उनके क्षेत्र की अद्यतन जानकारी देने हेतु सतत् शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी और इसके लिए खुली शिक्षा और दूर शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी और जनसंचार के माध्यमों का प्रयोग किया जाएगा।
14. **शैक्षिक तकनीकी का प्रयोग किया जाएगा :-**किसी भी स्तर की किसी भी प्रकार की शिक्षा के लिए शैक्षिक तकनीकी का प्रयोग किया जाएगा। जन संचार के माध्यमों से शिक्षा को सर्वसुलभ बनाया जाएगा।
15. **शिक्षा व्यवस्था को कारगर बनाया जाएगा :-**राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के सातवें भाग में शिक्षा को कारगर बनाने के लिए शिक्षकों की जवाबदेही (Accountability) निश्चित करने और छात्रों को कर्त्तव्य बोध कराने पर बल दिया गया हैं इसके तीसरे भाग में शिक्षा के प्रत्येक स्तर के लिए न्यूनतम अधिगम स्तर (Minimum Level of Learning, MLL) निश्चित करने की बात कही गई है और उसमें गुणात्मक सुधार करने की बात कही गई है। इस दस्तावेज के दसवें भाग में प्रशासन तन्त्र को चुस्त करने पर बल दिया गया है।
16. **शैक्षिक अवसरों की समानता के लिए ठोस कदम उठाए जाएँगे:-**इस शिक्षा नीति के चौथे भाग में स्पष्ट घोषणा की गई है कि शैक्षिक विषमताओं को दूर किया जाएगा और महिलाओं, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्ग, अल्पसंख्यक और विकलांगों की शिक्षा की विशेष व्यवस्था की जाएगी और सभी को शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर सुलभ कराए जाएँगे।
17. **महिला शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाएगा-** इस हेतु निम्नलिखित कदम उठाए जाएँगे **:-** स्त्री-पुरूषों की शिक्षा में भेद नहीं किया जाएगा, लिंग मूलक अन्तर को समाप्त किया जाएगा। महिलाओं की शिक्षा के विकास हेतु प्रारम्भ से ही प्रयत्न किए जाएँगे। महिलाओं को विज्ञान

एवं तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। महिलाओं को व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने के लिए विशेष सुविधाएँ दी जाएँगी।

18. **अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के बच्चों की शिक्षा की उचित व्यवस्था की जाएगी :-**इस क्षेत्र में निम्नलिखित कदम उठाए जाएँगे- नगरों, गाँवों और पहाड़ी तथा आदिवासी क्षेत्रों में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के बच्चों के लिए विद्यालयों की व्यवस्था की जाएगी। इन विद्यालयों में यथासम्भव इन्हीं वर्गो और इन्हीं क्षेत्रों के शिक्षकों की नियुक्ति की जाएगी। दूर-दराज से आने वालें बच्चों के लिए छात्रावासों का निर्माण कराया जाएगा। इन वर्गों के बच्चों की आर्थिक सहायता की धनराशि बढ़ाई जाएगी।
19. **पिछड़े वर्ग एवं पिछड़े क्षेत्रों के बच्चों की शिक्षा की उचित व्यवस्था की जाएगी :-**इस हेतु निम्नलिखित कदम उठाए जाएँगे- पिछड़े वर्ग एवं पिछड़े क्षेत्रों के बच्चों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। देश के रेगिस्तानी, पहाड़ी और जंगली क्षेत्रों में और अधिक स्कूल खोले जाएँगे। इन क्षेत्रों के स्कूलों में इन्हीं क्षेत्रों के शिक्षित युवकों को प्रशिक्षित कर शिक्षक नियुक्त करने का प्रयास किया जाएगा। पिछड़े वर्ग के बच्चों को आर्थिक सहायता जारी रहेगी, साथ ही उन्हें छात्रवृत्तियाँ दी जाएँगी।
20. **अल्पसंख्यकों के बच्चो की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाएगा :-**संविधान में अल्पसंख्यकों (मुसलमान एवं इसाई आदि) को अपनी भाषा, संस्कृति एवं धर्म की रक्षा करने का अधिकार दिया गया है। अतः- इन्हें अपनी शिक्षा संस्थाएँ चलाने का आधिकार होगा, परन्तु इनका पाठ्यक्रम प्रान्तीय सरकारों द्वारा निश्चित पाठ्यक्रम ही होगा। इनके क्षेत्रों में स्कूलों की स्थापना की जाएगी।
21. **विकलांग और मन्दबुद्धि बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी:-**इनकी शिक्षा की व्यवस्था हेतु निम्नलिखित कदम उठाये जाएँगे- विकलांग और मन्दबुद्धि बालकों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाएगा और इनकी शिक्षा व्यवस्था हेतु स्वैच्छिक प्रयासों को प्रोत्साहित किया जाएगा। मामूली विकलांग बच्चे सामान्य बच्चों के साथ पढ़ेगे, गूँगे, बहरे, अन्धे और मन्दबुद्धि बालकों के लिए अलग-अलग स्कूल खोले जाएँगे। विकलांग बच्चों को कुटीर अद्योग-धन्धों की शिक्षा दी जाएगी और उन्हें आत्मनिर्भर बनाया जाएगा। विकलांग और मन्दबुद्धि बालकों की शिक्षा हेतु विशेष प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों की नियुक्ति की जाएगी।

14.5.1 मुक्त विश्वविद्यालय तथा दूरस्थ शिक्षा Open University and Distance Learning

उच्चतर शिक्षा के अवसरों को बढ़ाने के उद्देश्य से तथा शिक्षा को लोकतान्त्रिक बनाने बाले माध्यम के रूप में ओपन विश्वविधालय पद्धतिका आरम्भ किया गया। इन उद्देश्यों की पूर्ती के लिय सन 1985 में स्थापित ‘इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविधालय (Indira Gandhi National open university) को मजबूत बनाया जायगा। दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से बढ़ावा देने के लिय भारत में

आज 16 विश्वविधालय शिक्षा के विकास में अपना योगदान कर रहे है । उत्तराखंड में वर्ष 2005 में स्थापित उत्तराखंड मुक्त विश्वविधालय हल्द्वानी आज स्नातक व स्नातकोतर उपाधि प्रदान करने के साथ पी०एच०डी० व शोध कार्य करके राष्ट्र के विकास में अपना योगदान कर रहा है। इसके माध्यम से उन लोगो के लिय शिक्षा के द्वार खुल गये है जिनको किसी कारण से अपनी शिक्षा बीच में छोडनी पड़ी। वे दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से अपनी शिक्षा पूरी कर रहे है।

14.5.2 ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना (Operation Black Board Plan) :-ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना के अनुसार कम से कम दो कमरों, एक वराण्डे और दो शौचालयों के पक्के भवन, दो शिक्षक (जिनमें यथा सम्भव एक महिला शिक्षक होगी), पुस्तकालय सामग्री, शिक्षण-अधिगम सामग्री (ब्लैक बोर्ड, चॉक, डस्टर, नक्शे, विज्ञान किट), टाट-पट्टी खेल के पैदान और खेल सामग्री उपलब्ध कराई जाएगी। ऐसे बच्चे जो किसी कारण औपचारिक शिक्षा केन्द्रों पर नहीं जा पाते हैं उनके लिए निरौपचारिक शिक्षा केन्द्र (Non Formal Education Centre) खोले जाएँगे। आज शिक्षा में बढ़ावा देने के लिय बच्चों को पका भोजन प्रदान किया जा रहा है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में प्राथमिक शिक्षा (कक्षा 1 से 5) को कब तक सर्वसुलभ बनाने की घोषणा की गई थी ?

   (a) 1990 (c) 1995

   (c) 2000 (d) 2002

2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में उच्च प्राथमिक शिक्षा (कक्षा 6से 8) को कब तक सर्वसुलभ बनाने की घोषणा की गई थी ?

   (a) 1990 (b) 1995

   (c) 2000 (d) 2002

3. प्रारम्भ में आपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना किस स्तर के विद्यालयों के सुधार हेतु बनाई गई थी?

   (a) प्राथमिक (b) प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक

   (c) उच्च प्राथमिक (d) माध्यमिक

4. राष्ट्रीय शिक्षा योजना, 1986 में 1995 तक कितने प्रतिशत छात्र/छात्राओं को व्यावसायिक धारा में लाने की घोषणा की गई थी ?

   (a) 20 (b) 25

   (c) 50 (d) 75

5. संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में प्राथमिक शिक्षा को कब तक सर्वसुलभ बनाने की घोषणा की गई हैं।

   (a) 1995 (b) 2000

   (c) 2005 (d) 2010

6. वर्ष 1986 से पहले किस वर्ष राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनी।

   (a) 1985 (b) 1968

   (c) 1980 (d) 1969

14.6 सारांश

भारत वर्षो की गुलामी के बाद स्वतंत्र हुआ यहाँ पर अंग्रजो ने एक छत्र शासन किया। यधपि उन्होंने भारत में काफी सुधार कार्य किए शिक्षा को एक अनोठी दिशा प्रदान की । आजादी के बाद शिक्षा में सुधार हेतु अनेक आयोग बनाये गये लेकिन शिक्षा सभी के लिय सुलभ न हो सकी क्योकि समाज का धनाड्य वर्ग नही चाहता था कि सभी वर्गों को शिक्षा प्राप्त हो । उन्हें भय है कि यदि वे शिक्षित हो गये तो वे अपने अधिकारों की मांग करेगे, हमारे द्वारा किए जाने वाले कार्यो में सुधार कि माग करेंगे। लेकिन तत्कालीन सरकार ने सभी के लिय शिक्षा के द्वार खोलने का प्रयास किया और वर्ष 1986 में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनाई गयी । इसमें सरकार ने प्रयास किया कि सभी वर्गों के बच्चों को घर के पास एक किलोमीटर की दूरी पर शिक्षा प्राप्त हो। घर से एक किलोमीटर पर प्राथमिक विधालय व तीन किलोमीटर की दूरी पर जूनियर विधालय की स्थापना की गयी। जहा पर प्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति भी की गयी। लेकिन सरकार के अधिकारियो ने सरकारी विधालयो के चारो ओर खुलने वाले प्राइवेट स्कूलों को मान्यता देकर कुकुरमुत्तो की तरह उनको स्थापित कराकर सरकारी स्कूलों की शिक्षा को समाप्त करने का षडयंत्र किया है। क्योकि समाज का जब जागरूक नागरिक अपने बच्चों को नहीं पढायेगे तब सरकारी विधालयो में शिक्षक की गतिविधियों से उनको कोई लेना देना नहीं है। आज शिक्षक सरकारी कार्यो का बहाना बनाकर विधालय से गायब रहते है। जब तक इन प्राइवेट विधालयो को बंद नहीं किया जाता तब तक न तो सरकारी विधालयो को बच्चे मिलगे न ही समाज उन्नति कर सकता है यह पूंजीपति वर्ग की बहुत सोची समझी चाल है। क्योकि शिक्षा प्राइवेट होने पर आम आदमी का बच्चा शिक्षा नही कर पायगा।

14.7 शब्दावली

1. शिक्षा की विषयवस्तु और प्रक्रिया में नया मोड़ (Reorienting the Content and Process of Education) **:-** सांस्कृतिक मूल्यों और वैज्ञानिक सोच में समन्वय करने पर बल दिया गया है, मूल्यों की शिक्षा और भारतीय भाषाओं के विकास के साथ-साथ गणित और विज्ञान की शिक्षा पर बल दिया गया है और स्वास्थ्यवर्द्धक क्रियाओं-खेल-कूद आदि पर बल दिया गया है और अन्त में परीक्षा प्रणाली एवं मूल्यांकन प्रक्रिया में सुधार के लिए सुझाव दिए हैं।
2. ब्लैक बोर्ड योजना :- ब्लैक बोर्ड योजना के अर्न्तगत प्राथमिक विश्वविद्यालयों की न्यूनतम आवश्यकताओं (दो कमरों का भवन, फर्नीचर, शिक्षण सामग्री, पुस्तकालय सामग्री खेल सामग्री और कम से कम दो शिक्षकों) की पूर्ति करने और इन सबके लिए धनराशि जुटाने का संकल्प किया गया है।

14.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. (a) 1990
2. (b) 1995
3. (a) प्राथमिक
4. (b) 25
5. (b) 2000
6. (b) 1968

14.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. लाल (डॉ) रमन बिहारी, भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएं, राज प्रिंटर्स, मेरठ।
2. जे. (डॉ) एस. वालिया (2009)भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास, अहमपाल पब्लिशर्स, मेरठ।
3. शुक्ला (डॉ) सी. एस. (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
4. शर्मा, रामनाथ व शर्मा, राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
5. शीलू मैरी (डॉ) (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य, रजत प्रकाशन नई दिल्ली।

14.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति1986 का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति1986 की कार्य योजना का विस्तृत वर्णन कीजिए।
3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति1986 में प्राथमिक शिक्षा के सम्बन्ध में क्या प्रस्ताव किए गए हैं ? वर्णन कीजिए।
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति1986 में शिक्षकों के स्तर को उठाने के सम्बन्ध में क्या प्रस्ताव किए गए हैं ? वर्णन कीजिए।
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में प्रौढ़ एवं सतत् शिक्षा के सम्बन्ध में क्या प्रस्ताव किए गए हैं?
6. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए-
   (1) ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड (2) नवोदय विद्यालय
   (3) खुले विश्वविद्यालय (4) जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान
7. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में निम्नलिखित के सम्बन्ध में क्या प्रस्ताव किए गए हैं लिखिए-
   i. प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण
   ii. माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण
   iii. त्रिभाषा सूत्र
   iv. शिक्षा योजना को कारगर बनाना
   v. शैक्षिक अवसरों की समानता
   vi. परीक्षा एवं मूल्यांकन

इकाई -15 संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 (1992)

Revised National Education Policy, 1986(1992)

15.1 प्रस्तावना
15.2 उद्देश्य
15.3 संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, (1992) की नीति व संशोधन
15.4 कार्य योजना1992 का दस्तावेज
15.5 संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 (1992) के मूल तत्त्व
15.5.1 राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 एवं संशोधित (1992) का मूल्यांकन अथवा गुण-दोष विवेचन
15.5.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 एवं संशोधित (1992) का प्रभाव
15.6 सारांश
15.7 शब्दावली
15.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
15.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
15.10 निबन्धात्मक प्रश्न

15.1 प्रस्तावना

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में यह घोषणा की गई थी कि प्रत्येक 5 वर्ष के बाद इस नीति के क्रियान्वयन और उसके परिणामों की समीक्षा की जाएगी। पर केन्द्र सरकार ने 3 वर्ष बाद 1990 में ही इसकी समीक्षा हेतु 'राममूर्ति समीक्षा समिति, 1990' का गठन किया था। अभी इस समिति के प्रतिवेदन पर विचार भी शुरू नहीं हुआ था कि सरकार ने 1992 में इस नीति के क्रियान्वयन एवं परिणामों की समीक्षा हेतु जनार्दन रेड्डी समिति, 1992' का गठन कर दिया। इन दोनों समितियों की रिपोर्ट के आधार पर सरकार ने 1992 में ही राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में कुछ संशोधन कर दिए और इसे संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986' (National Policy on Education,1986, with Modifications Undertaken in 1992) के नाम से प्रकाशित किया। कुछ विद्वान इसे ही भूल से राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1992 कहते हैं। सरकार ने उसी वर्ष इसकी कार्य योजना (Plan of Action) में कुछ परिवर्तन किए। इस परिवर्तित कार्य योजना को कार्य योजना 1992 (Plan of Action, 1992)

कहा जाता है। यहाँ 1992 की संशोधित नीति की एक स्पष्ट रूप से अध्धयन करने से केवल दो अनुच्छेद जोड़े गए है और चौतीस अनुच्छेदों में सुधार किए गये है।

15.2 उद्देश्य

1. संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, (1992) के दस्तावेज को समझ सकेंगे।
2. कार्य योजना 1992 का दस्तावेज व प्रक्रिया को समझ सकेंगे।
3. संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 (1992) के मूल तत्त्व को समझ सकेंगे।
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 एवं संशोधित (1992) के गुण से बच्चों को लाभान्वित कर सकेंगे।
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 एवं संशोधित (1992) के दोष को जान सकेंगे।

15.3 संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, (1992) की नीति व संशोधन

भारत सरकार ने 1992में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में निम्नलिखित संशोधन किए है-

भाग एक- भूमिका और भाग दो-शिक्षा का सार और उसकी भूमिका में कोई संशोधन एवं परिवर्तन नहीं किया गया है।

भाग तीन- राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली में केवल एक संशोधन किया गया है।

(1) पूरे देश में +2 को स्कूली शिक्षा का अंग बनाया जाएगा।

भाग चार - समानता के लिए शिक्षा में चार संशोधन किए गए हैं-

i. समग्र साक्षरता अभियान पर और अधिक बल दिया जाएगा।
ii. राष्ट्रीय साक्षरता मिशन (NLM) को निर्धनता निवारण, राष्ट्रीय एकता, पर्यावरण संरक्षण, छोटा परिवार, नारी समानता को प्रोत्साहन, प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण और प्राथमिक स्वास्थ्य परिचर्या से जोड़ा जाएगा।
iii. रोजगार/स्वरोजगार केन्द्रित एवं आवश्यकता एवं रूचि पर आधारित व्यावसायिक व कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रमों पर बल दिया जाएगा।
iv. नव साक्षरों के लिए साक्षरता के उपरान्त सतत् शिक्षा के व्यापक कार्यक्रम उपलब्ध कराए जाएँगे।

भाग पाँच-विभिन्न स्तरों पर शिक्षा का पुनर्गठन-शिशुओं की देखभाल और शिक्षा में सात संशोधन किए गए हैं-

i. ब्लैक बोर्ड योजना के अन्तर्गत प्रत्येक प्राथमिक विद्यालय में कम से कम तीन बड़े कमरों और तीन शिक्षकों की व्यवस्था की जाएगी।
ii. भविष्य में प्राथमिक स्कूलों में नियुक्त होने वाले शिक्षकों में 50 प्रतिशत महिलाएँ होंगी।
iii. ब्लैक बोर्ड योजना को उच्च प्राथमिक विद्यालयों में भी लागू किया जाएगा।
iv. अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा के लक्ष्य को 2000 तक प्राप्त करने हेतु एक राष्ट्रीय मिशन चलाया जाएगा।
v. माध्यमिक शिक्षा में लड़कियों और अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजातियों के बच्चों के नामांकन पर बल दिया जाएगा।
vi. मुक्त अधिगम प्रणाली को सुदृढ़ किया जाएगा।
vii. परीक्षा एंव मूल्यांकन में सुधार हेतु 'राष्ट्रीय मूल्यांकन संगठन' गठित किया जाएगा।

भाग छह- तकनीकी तथा प्रबन्ध शिक्षा में केवल एक संशोधन किया गया है-

a. अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (AICTE) को और सुदृढ़ किया जाएगा।

भाग सात- शिक्षा व्यवस्था को कारगर बनाना में कोई संशोधन नहीं किया गया है।

भाग आठ-शिक्षा की विषयवस्तु और प्रक्रिया को नया मोड़ देना में दो संशोधन किए गए हैं-

a. प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा में जनसंख्या शिक्षा पर विशेष बल दिया जाएगा।
b. परीक्षा संस्थाओं के दिशा निर्देशन हेतु परीक्षा सुधार प्रारूप ग तैयार किया जाएगा।

भाग नौ-शिक्षक के सम्बन्ध में कोई संशोधन नहीं किया गया है।

भाग दस-शिक्षा का प्रबन्ध में केवल एक संशोधन किया गया है-

a. शिक्षा पर राष्ट्रीय आय का 6 प्रतिशत से अधिक व्यय किया जाएगा।

भाग ग्यारह-संशाधन और समीक्षा पर बल दिया गया ।

भाग बारह- भविष्य में कोई संशाधन नहीं बढ़ाया गया है।

15.4 कार्य योजना 1992का दस्तावेज

भारत सरकार ने 1992 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में संशोधन के साथ-साथ उसकी कार्य योजना में भी कुछ संशोधन किए और उसे कार्य योजना 1992 के नाम से प्रकाशित किया। कार्य योजना 1986यह 24 भागों में विभाजित थी कार्य योजना 1992 को 23 भागों में विभाजित किया गया है। कार्य योजना 1992 के 23 शीर्षक हैं-

i. प्रारिम्भक शिक्षा (Elementary Education)
ii. माध्यमिक शिक्षा (Secondary Education)
iii. उच्च शिक्षा (Higher Education)
iv. विकलांगों की शिक्षा (Education of Handicapped)
v. प्रौढ़ एवं सतत शिक्षा (Adult and Continuing Education)
vi. पूर्व बाल्य काल परिचर्या एवं शिक्षा (Early Childhood Care and Education)
vii. नारी समानता के लिए शिक्षा (Education for Women Equality)
viii. अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा पिछड़े वर्गो की शिक्षा (Education of Scheduled Castes, Scheduled Tribes and Backward Classes)
ix. नवोदय विद्यालय (Novodya Vidyalaya)
x. व्यावसायिक शिक्षा (Vocational Education)
xi. अल्पसंख्यकों की शिक्षा (Education of Minorities)
xii. मुक्त शिक्षा (Open Education)
xiii. उपाधि की रोजगार से विलगता (Delinking Degrees with Jobs)
xiv. ग्रामीण विश्वविद्यालय एवं संस्थान (Rural Universities and Institutes)
xv. तकनीकी एवं प्रबन्ध शिक्षा (Technical and Management Education)
xvi. अनुसंधान एवं विकास (Research and Development)
xvii. सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य (Cultural perspective)
xviii. भाषाओं का विकास (Development of Languages)
xix. जन संचार एवं शैक्षिक तकनीकी (Media and Educational Technology)
xx. खेल, शारीरिक शिक्षा एवं युवा (Sports, Physical Education and Youth)
xxi. मूल्यांकन प्रक्रिया एवं परीक्षा सुधार (Evaluation process and Examination)
xxii. शिक्षा का प्रबन्ध (Management of Education)
xxiii. शिक्षक एवं उनका प्रशिक्षण (Teacher and their Training)

प्रारम्भ में नारी समानता के लिए शिक्षा, अनुसूचित जाति एवं जनजाति तथा पिछड़े वर्गो की शिक्षा, अल्पसंख्यकों की शिक्षा, विकलांगों की शिक्षा, प्रौढ़ एवं सतत शिक्षा और पूर्व बाल्य काल परिचर्या एवं शिक्षा सम्बन्धी योजनाओं को प्रस्तुत करने से स्पष्ट है कि इस कार्य योजना में इन पर विशेष बल दिया गया है।

इसमें प्राथमिक सम्बन्धी योजनाओं को थोड़ा विस्तार दिया गया है। कार्य योजना, 1986 में ब्लैक बोर्ड योजना केवल प्राथमिक स्कूलों के लिए बनाई गई थी, कार्य योजना 1992 में इसकी सीमा में उच्च प्राथमिक स्कूलों को भी लाया गया। 1986 में 300 जनसंख्या वाले क्षेत्र में एक प्राथमिक स्कूल स्थापित करने की योजना बनाई गई थी, 1992 में इसे 200 जनसंख्या कर दिया गया।

1986 में एक प्राथमिक में कम से कम 2 कमरों के भवन और 2 शिक्षकों की व्यवस्था करने की योजना बनाई गई थी, 1992 में इसे कम से कम 3 कमरों के भवन और 3 शिक्षकों की व्यवस्था में विस्तृत कर दिया गया। 1986 में 3 किमी की दूरी के अन्दर स्थापित करने की योजना बनी।

इस योजना के भाग 13 से 23 तक में कोई नई योजना प्रस्तुत नहीं की गई है, केवल कार्य योजना, 1986 की योजनाओं को ही शब्द परिवर्तनों के साथ थोड़े बल के साथ प्रस्तुत किया गया है।

15.5 संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 (1992) के मूल तत्त्व

यदि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में किए गए संशोधनों और उसकी कार्य योजना 1992 को समग्र रूप से देखा-समझा जाए तो स्पष्ट होगा कि इनसे उसके (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986) के मूल तत्त्वों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, यहाँ कुछ ही मूल तत्त्वों का वर्णन प्रस्तुत है।

1. 1. से 5. मूल तत्त्व- संख्या 1 से 5 में कोई संशोधन नहीं किया गया है।
2. मूल तत्त्व - संख्या 6 में अनिवार्य एवं निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य को 1995 तक के स्थान पर 2000 के अन्त तक प्राप्त करने की घोषणा की गई है और इस हेतु 1 किमी. की दूरी के अन्दर प्राथमिक विद्यालय और 2-3 किमी. की दूरी के अन्दर उच्च प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना की योजना प्रस्तुत की गई है। और साथ ही ब्लैक बोर्ड योजना द्वारा प्राथमिक विद्यालयों के साथ-साथ उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यालयों की दशा सुधारने पर बल दिया गया है।
3. मूल तत्त्व- संख्या 6 में पहला संशोधन तो यह किया गया है कि +2 को स्कूली शिक्षा का अंग बनाया जाएगा। दूसरा संशोधन यह किया गया है कि +2 पर बालिकाओं और अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के बच्चों को वाणिज्य, विज्ञान और व्यावसायिक धारा में लाने के लिए विशेष प्रयत्न किए जाएँगे। और तीसरा संशोधन यह किया गया है कि इस स्तर पर शैक्षिक तकनीकी का प्रयोग किया जाएगा।
4. मूल तत्त्व संख्या 8 में केवल एक संशोधन किया गया है कि नए विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों की स्थापना केवल वहीं की जाएगी जहाँ बहुत आवश्यक होगी।
5. 9. से 21 मूल तत्त्व- संख्या 9 से 21 में कोई संशोधन नहीं किया गया है।

साफ जाहिर है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में जो संशोधन 1992 में किए गए हैं और उसके क्रियान्वयन के लिए जो कार्य योजना 1992 बनाई गई थी उससे राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के मूल तत्त्वों का विस्तार भर हुआ है। अतः उसे राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1992 मानाना युक्ति संगत नहीं है, उसे संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 ही कहना अधिक उचित रहेगा।

15.5.1 राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 एवं संशोधित (1992) का मूल्यांकन अथवा गुण-दोष विवेचन

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 और उसके संशोधित रूप (1992) का मूल्यांकन निम्न आधारभूत मानदण्डों पर करेंगे। इन मानदण्डों पर करने पर इस शिक्षा नीति में निम्नलिखित गुण-दोष उजागर होते हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 एवं संशोधित (1992) के गुण

यूँ तो राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 और उसके संशोधित रूप (1992) में जो कुछ प्रस्तावित है वह सब कुछ बहुत अच्छा है, परन्तु इस नीति की कुछ बातें अन्य नीतियों से बहुत ऊपर है, उन्हें ही हम इसकी विशेषता मान सकते हैं।

1. **शिक्षा राष्ट्रीय महत्त्व की वस्तु-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में शिक्षा को राष्ट्रीय महत्त्व का विषय घोषित किया गया है। यूँ तो राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 में भी शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया गया था और उस पर केन्द्रीय बजट में 6 प्रतिशत व्यय करने की बात कही गई थी, परन्तु इस शिक्षा नीति में तो इसे उत्तम निवेश के रूप में स्वीकार किया गया है
2. **कार्य योजना एवं वित्त व्यवस्था-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 और संशोधित 1992 भारत की ऐसी पहली शिक्षा नीति है जिसके क्रियान्वयन के लिए पूरी कार्य योजना (Plan of Action) विस्तृत रूप से प्रस्तुत की गई और उसके लिए आवश्यक वित्त व्यवस्था भी की गई।
3. **निश्चित शिक्षा संरचना-** इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति में राष्ट्रीय नीति, 1968 द्वारा घोषित 1+2+3 शिक्षा संरचना को पूरे देश में अनिर्वाय रूप से लागू करने पर बल दिया गया है और प्रथम 10 वर्षीय शिक्षा के लिए आधारभूत पाठ्यचर्या (Plan of Action) और +2 पर स्थान विशेष की आवश्यकतानुसार पाठ्यचर्या के निर्माण पर बल दिया गया है उच्च स्तर की शिक्षा के पाठ्यक्रम के निर्माण का अधिकार विश्वविद्यालयों को दिया गया है पर इस निर्देश के साथ कि ये पाठ्यक्रम अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के होने चाहिएँ।
4. **प्राथमिक शिक्षा हेतु ब्लैक बोर्ड योजना-** प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य एवं निःशुल्क करने की बात तो प्रारम्भ से ही कही जाती रही है, पर प्राथमिक विद्यालयों के सुधार की बात राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में ही कही गई है और उसके र्लिए ब्लैक बोर्ड योजना' बनाई गई है और उसका क्रियान्वयन भी किया जा रहा है। वर्ष 1987 से 2007 के दौरान प्राथमिक और 40 प्रतिशत उच्च प्राथमिक स्कूलों को इस योजना का लाभ पहुँचाया जा चुका था।
5. **गति निर्धारक विद्यालयों की स्थापना-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में माध्यमिक स्तर पर गति निर्धारक विद्यालय खोलने की घोषणा की गई थी और उसके तहत 207 तक 565 नवोदय विद्यालय स्थापित किए जा चुके थे जिनमें 1.93 लाख छात्र-छात्राएँ अध्ययनरत थे।

इनमें ग्रामीण क्षेत्रों एवं पिछड़े वर्ग एवं अनुसूचित जनजातियों के प्रतिभाशाली छात्र-छात्राओं को प्रवेश के विशेष अवसर प्राप्त हैं।

6. **खुले विश्वविद्यालयों की स्थापना-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में खुले विश्वविद्यालय स्थापित करने की घोषणा की गई थी, उसके तहत् दिल्ली में इन्द्रिरा गाँधी राष्ट्रीय खुला विश्वविद्यालय की स्थापना की गई है। यह विश्वविद्यालय उन युवकों को उच्च शिक्षा के अवसर प्रदान कर रहा है जो अन्यत्र प्राप्त नहीं कर पा रहे। साथ ही देश में 11 अन्य खुले विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई है।
7. **तकनीकी शिक्षा का उन्नयन-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में किसी भी स्तर की तकनीकी शिक्षा के पाठ्यक्रम को अद्यतन बनाने पर बल दिया गया है और तकनीकी शिक्षा संस्थाओं की दशा सुधारने पर बल दिया गया है और सबसे बड़ी बात यह है कि इसके लिए वित्त व्यवस्था भी की गई है। राष्ट्रीय तकनीकी शिक्षा परिषद' के निर्देशानुसार इस तकनीकी शिक्षा में काफी सुधार भी हुआ है।
8. **शिक्षक शिक्षा में सुधार-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में शिक्षकों के स्तर और उनके प्रशिक्षण में सुधार पर बल दिया गया है। यूँ तो इस पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति,1968 में भी बहुत बल दिया गया था और तद्नुकूल शिक्षकों के वेतनमान बढ़ाए गए थे और उनकी सेवाशर्तो में सुधार किया गया था परन्तु इस शिक्षा नीति, 1986 के तहत शिक्षक शिक्षा में सुधार हेतु 2007 तक 556 जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान' (DIETs)स्थापित किए गए, 104 शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों को शिक्षक शिक्षा महाविद्यालयों(CTEs) और 39 को शिक्षा उच्च अध्ययन केन्द्रों (CASEs) में सम्मुनत किया गया है। साथ ही 1993 में राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद' (NCTE) को संवैधानिक दर्जा दिया गया और उसे और अधिक अधिकार दिए गए हैं। देश की समस्त शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाएँ अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह ईमानदारी से कर रही है जिससे उनकी स्थिथि में सुधार हुआ।
9. **परीक्षा प्रणाली में सुधार-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में परीक्षा को विश्वसनीय और वस्तुनिष्ठ बनाने और सतत् मूल्यांकन पर बल दिया गया है। इस बीच परीक्षा एवं मूल्यांकन प्रणाली में काफी सुधार हुआ है।
10. **न्यूनतम अधिगम स्तर एवं जवाबदेही-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 पहली नीति है जिसमें योजना भी बनाई गई और उसके क्रियान्वयन के लिए ठोस सुझाव भी दिए गए। इसमें शिक्षा व्यवस्था को कारगर बनाने हेतु किसी भी स्तर की शिक्षा के र्लिए न्यूनतम अधिगम मानक' (Minimum Learning Standard) बनाने, शिक्षकों एवं शिक्षा प्रशासकों की जवाबदेही (Accountability) निश्चित करने और छात्रों के उत्तरदायित्व निश्चित करने पर बल दिया गया है। जब तक छात्र, शिक्षक और शिक्षा प्रणाली से जुडे सभी व्यक्ति अपने-अपने कर्त्तव्यों का पालन नहीं करते तब तक कोई भी शिक्षा योजना सफल नहीं हो सकती।

11. **शैक्षिक अवसरों की समानता-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 और उसके संशोधित रूप (1992) में शैक्षिक अवसरों की समानता की प्राप्ति पर बहुत बल दिया गया है और इसके लिए ठोस कदम उठाने पर बल दिया गया है और इसकी प्राप्ति के लिए वित्त व्यवस्था भी की गई है। यह बात दूसरी है कि इस दिशा में अब तक जो भी कार्य किए गए हैं वे वोट की राजनीति पर अधिक आधारित हैं, लोकतन्त्र की माँग पर कम।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 एवं संशोधित (1992) के दोष

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 और उसके संशोधित रूप (1992) में जो कुछ भी कहा गया है वह सब बड़ा लुभावना है। परन्तु इस शिक्षा नीति के तहत जो कुछ किया गया है उसमें कुछ दोष भी हैं। जो निम्न प्रकार है।

1. **असमान शिक्षा व्यवस्था-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 और उसके संशोधित रूप (1992) में केन्द्र एवं राज्य सरकारों के शैक्षिक अधिकार एवं उत्तरदायित्व निश्चित नही किए गए हैं। 1976 में संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा शिक्षा को समवर्ती सूचि (Concurrent List) पर लाया गया था परन्तु केन्द्र एवं राज्य सरकारों के शैक्षिक अधिकार एवं कर्त्तव्यों को सुनिश्चित नहीं किया था। यह कार्य राष्ट्रीय शिक्षा नीति निर्माताओं को करना चाहिए था, उन्होंने भी नहीं किया। परिणाम यह है कि प्रान्तीय सरकारें केन्द्र की उन शिक्षा योजनाओं को तो लागू कर देती हैं जिनके लिए केन्द्र शत प्रतिशत आर्थिक अनुदान देता है, परन्तु प्रायः उन योजनाओं को लागू नहीं करतीं जिन पर आंशिक सहायता अनुदान मिलता है। परिणाम यह है कि पूरे देश में शिक्षा की व्यवस्था समान नहीं है।
2. **जन सहयोग के नाम पर जन शोषण**- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में शिक्षा की व्यवस्था हेतु जन सहयोग के प्रोत्साहन की बात कही गई है। इसे प्राप्त करने के लिए शिक्षा संस्थाओं में अभिभावक समिति बनाने और इस समिति के माध्यम से जन सहयोग प्राप्त करने की कार्य योजना प्रस्तुत की गई हैं इसका अनुपालन प्रायः सभी शिक्षा संस्थाएँ कर रही हैं। पर प्रवेश के समय जबरन एक बड़ी धनराशि लेना जन सहयोग है या जन शोषण।
3. **उच्च शिक्षा महँगी-** इस शिक्षा नीति में स्ववित्तपोषित संस्थाओं को प्रोतसाहित करने की बात कही गई है। इससे एक ओर उच्च शिक्षा आति महंगी हो गई है और दूसरी ओर उच्च शिक्षा का स्तर गिरा रहा है।
4. **शैक्षिक अवसरों की समानता के नाम पर वोट की राजनीति-** शैक्षिक अवसरों की समानता के नाम पर वोट की राजनीति की गई है। भारत में शैक्षिक अवसरों की समानता का अर्थ है कि देश के सभी बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा सुलभ कराना, किसी भी आधार पर भेद-भाव किए बिना सभी को अपनी योग्यतानुसार माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा सुलभ कराना और विशिष्ट शिक्षा (लॉ, मेडिकल और टेक्निकल आदि) सुलभ कराना। पर हमारे देश में तो इसके ठीक विपरीत क्षेत्र, लिंग, जाति और धर्म के नाम

पर शैक्षिक सुविधाएँ प्रदान करने की बात कही जा रही है और उसके अनुकूल प्रयत्न भी किए जा रहे हैं। यह वोट की राजनीति नहीं तो और क्या है।

5. **ब्लैक बोर्ड योजना का ईमानदारी से क्रियान्वयन नहीं-** ब्लैक बोर्ड योजना के अन्तर्गत प्राथमिक स्कूलों के जो भवन बनाए जा रहे हैं और उनके लिए जो फर्नीचर एवं सामग्री भेजी जा रही हैं, वे बहुत घटिया किस्म के हैं। संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति एवं कार्य योजना 1992 के अनुसार उच्च प्राथमिक स्कूलों को जो 40-40 हजार रूपयों की धनराशि दी जा रही है उसका भी सही प्रयोग सुनिश्चित नहीं किया जा रहा है।
6. **नवोदय विद्यालय योजना असफल**- नवोदय विद्यालय केवल सफेद हाथी सिद्ध हुए हैं। नवोदय विद्यालय इस आशा से स्थापित किए गए थे कि इनमें पिछड़े क्षेत्रों, पिछड़े वर्गो और उपेक्षित जातियों के योग्य बच्चों को प्रवेश दिया जा सकेगा, उन्हें अपने विकास के अवसर दिए जा सकेंगे। पहली बात तो यह है कि ऐसे नियमों के होते हुए भी बड़ी हेराफेरी हो रही है, इनका लाभ वे नहीं उठा पा रहे जिनके लिए ये स्थापित किए गए हैं। दूसरी बात यह है कि इनकी स्थापना एवं संचालन में जितना व्यय हो रहा है उसका 10वां भाग भी लाभ नहीं हो रहा है।
7. **+2 पर व्यावसायिक पाठ्यक्रम असफल-** इस बीच जिन प्रान्तों में +2 पर जो भी व्यावसायिक पाठ्यक्रम शुरू किए गए, वे असफल रहे हैं। सबसे पहली बात तो यह है कि जिन विद्यालयों में ये पाठ्यक्रम शुरू किए गए उनमें संसाधनों और प्रशिक्षण शिक्षकों की कमी है। दूसरी बात यह है कि ये पाठ्यक्रम अपने में न पूर्ण हैं और न उपयोगी।
8. **उच्च शिक्षा के साथ खिलवाड़ -** राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में एक तरफ उच्च शिक्षा में प्रवेश पर नियन्त्रण की बात कही गई है और दूसरी तरफ उच्च शिक्षा के अवसर सभी को सुलभ कराने की बात कही गई है और इस हेतु खुले विश्वविद्यालयों की स्थापना और पत्राचार पाठ्यक्रम शुरू करने की बात कही गई है। हर क्षेत्र की भाँति शिक्षा के क्षेत्र में भी दोहरी नीति। इससे उच्च शिक्षा का आधिकतर संस्थाओं में अयोग्य छात्रों का प्रवेश हो रहा है, अराजक तत्त्वों का प्रवेश हो रहा है और अधिकतर उच्च शिक्षा संस्थाएँ डिग्रियाँ प्राप्त करने के कारखाने बन गई हैं। यह समय, शक्ति और धन का अपव्यय नही तो और क्या है। संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1992 के तहत उच्च शिक्षा को स्ववित्तपोषित बनाना सरकार का अपने उत्तरदायित्व से मुँह मोड़ना ही कहा जाएगा। उच्च शिक्षा के निजीकरण (Privatization) से तो शिक्षा के क्षेत्र में शोषण बढ़ रहा है और उच्च शिक्षा निर्धनों की पहुँच से दूर होती जा रही है।
9. **कैपीटेशन फीस की मार-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में कैपीटेशन फीस के लिए इस बन्धन के साथ स्वीकृति दे दी गई कि ये संस्थाएँ सरकार द्वारा चयनित छात्रों को एक निश्चित प्रतिशत मात्रा में बिना कैपीटेशन फीस के प्रवेश देंगी। इससे भी शोषण बढ़ा है।

15.5.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 एवं संशोधित (1992) का प्रभाव

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 देश की पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति है जिसमें नीति के साथ इसको लागू करने के लिए पूरी कार्य योजना, 1986 बनाई गई। 1992 में जब इसमें कुछ संशोधन किए गए तो साथ ही इसकी कार्य योजना में भी संशोधन किया गया है और उसे कार्य योजना, 1992 के नाम से प्रकाशित किया गया। इस नीति के तहत अब तक जो विशेष हुआ है उसे निम्नलिखित रूप से क्रमबद्ध किया जा सकता है-

1. केन्द्र और प्रान्तों के शिक्षा बजटों में बढ़ोतरी शुरू हुई है, यह बात दूसरी है कि अभी तक केन्द्र के बजट में शिक्षा पर 6 प्रतिशत व्यय अभी तक सुनिश्चित नहीं किया जा सका है।
2. पूरे देश में 10+2+3 शिक्षा संरचना लागू हो गई है, यह बात दूसरी है कि प्रथम 10 वर्षीय आधारभूत पाठ्यचर्या अभी लागू नहीं हो पाई है।
3. शिशुओं की देखभाल और पोषण तथा पूर्व प्राथमिक शिक्षा के लिए अनेक योजनाएँ चलाई जा रही है। 2007 तक देश में 7.5 लाख से अधिक तो आँगनबाड़ियाँ और बालबाड़ियाँ स्थापित की जा चुकी थीं और इनमें 2.4 करोड़ से अधिक बच्चे लाभान्वित हो रहे थे, कितने लाभान्वित हो रहे, यह दूसरी बात है।
4. प्राथमिक शिक्षा का तेजी से प्रसार एवं उन्नयन हो रहा है। ब्लैकबोर्ड योजना के तहत 2007 तक लगभग 80 प्रतिशत प्राथमिक और 40 प्रतिशत उच्च प्राथमिक स्कूलों की दशा में सुधार किया जा चुका था।
5. माध्यमिक शिक्षा के प्रसार के प्रयत्नों में तेजी आई है। इस हेतु इस स्तर पर खुली शिक्षा का भी विस्तार किया गया है, अकेले राष्ट्रीय खुले विद्यालय (National Open School) में 4 लाख से अधिक छात्र-छात्राएँ पंजीकृत हैं। गति निर्धारक विद्यालयों के रूप में 2007 तक 565 नवोदय विद्यालय खोले जा चुके थे।
6. लगभग सभी प्रान्तों में +2 पर व्यावसायिक पाठ्यक्रम भी शुरू किए गए हैं, यह बात दूसरी है कि इनमें सफलता नहीं मिल पा रही है।
7. उच्च शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, और प्रबन्ध शिक्षा सभी के विकास एवं उन्नयन के लिए प्रयत्न जारी हैं। इस बीच उच्च शिक्षा के प्रसार हेतु दूर शिक्षा (खुली शिक्षा) का काफी प्रसार किया गया हैं ओर इसके उन्नयन के लिए अद्यतन एवं स्तरीय पाठ्यक्रम तैयार एवं लागू किए गए हैं। साथ ही स्ववित्तपोषित उच्च शिक्षा संस्थाओं को खुले हाथ मान्यता दी गई है।इससे उच्च शिक्षा का प्रसार तो अवश्य हुआ है पर उसके स्तर पर गिरावट आ रही है।
8. शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में तो क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं, 2007 तक 556'जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (DIETs) स्थापित किए जा चुके थे,104 शिक्षक शिक्षा महाविद्यालयों को शिक्षक शिक्षा केन्द्रों (CTEs)में सम्मुनत किया जा चुका था और 39 शिक्षक शिक्षा कॉलेजों को शिक्षा उच्च अध्ययन केन्द्रों' (CASEs) में सम्मुनत किया जा चुका था। इस

बीच दिसम्बर, 1993 में संसद के एक एक्ट द्वारा राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद् (NCTE) को संवैधानिक दर्जा दिया गया और 1995 में इस एक्ट के अनुसार गठन किया गया। प्रारम्भ में तो उसके हस्तक्षेप से शिक्षक शिक्षा विद्यालयों एवं महाविद्यालयों की दशा में सुधार हुआ था परन्तु अब यह परिषद भी भ्रष्टाचार का शिकार हो गई है और स्ववित्तपोषित शिक्षक शिक्षा संस्थानों को खुले हाथ मान्यता दे रही है और शिक्षक शिक्षा एक व्यवसाय बन गई है।

9. इस बीच प्रौढ़ शिक्षा एवं सतत शिक्षा कार्यक्रमों के लिए भी अतिरिक्त धनराशि उपलब्ध कराई गई है जिससे इस क्षेत्र में भी कार्य की गति बढ़ी है। 2001 में हमारे देश में साक्षरता प्रतिशत 65.38 हो गया था जो वर्तमान (2008) में लगभग 72 प्रतिशत हो गया होगा।
10. यूँ शैक्षिक अवसरों की समानता के लिए जो भी कदम उठाए गए हैं वे वोट की राजनीति पर आधारित हैं परन्तु इससे स्त्री शिक्षा, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्ग और अल्पसंख्यकों के बच्चों की शिक्षा में विस्तार हुआ है, उनका नामांकन बढ़ा है। कुछ विद्यालय अपंग एवं मन्दबुद्धि बच्चों, किशोरों और युवकों के लिए भी खोले गए हैं।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. राष्ट्रीय शिक्षा योजना 1986 से 1995 तक कितने प्रतिशत छात्र/छात्राओं को व्यावसायिक धारा मे लाने की घोषणा की गई थी ?

   (a) 20 (b) 25

   (c) 50 (d) 75

2. संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में प्राथमिक शिक्षा को कब तक सर्वसुलभ बनाने की घोषणा की गई हैं।

   (a) 1995 (b) 2000

   (c) 2005 (d) 2010

3. प्रश्न 3 ब्लैक बोर्ड योजना को उच्च प्राथमिक स्तर पर कब लागू किया गा था ?

   (a) 1986 (b) 1987

   (c) 1992 (d) 1995

4. प्रश्न 4 उच्च प्राथमिक स्कूलों को ब्लैक बोर्ड योजना के अन्तर्गत कितनी धनराशि दी जा रही है ?

   (a) 10 हजार (b) 40 हजार

   (c) 50 हजार (d) 60 हजार

5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1992 में आपरेशन ब्लेक बोर्ड में कम से कम कितने कमरों के भवन और शिक्षकों की व्यवस्था की बात की गयी ?
6. राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद‘ (NCTE) को संवैधानिक दर्जा कब दिया गया है।

15.6 सारांश

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 एवं संशोधित (1992)के दस्तावेजों में तत्कालीन शिक्षा में सुधार हेतु सुझाव अधिक हैं और नीति सम्बन्धी घोषणाएँ कम हैं। फिर जो नीति सम्बन्धी घोषणाएँ की भी गई हैं उनमें कुछ मानने योग्य हैं जैसे-पूरे देश में 10+2+3 शिक्षा संरचना लागू करना, प्रथम 10 वर्षीय शिक्षा के लिए आधारभूत पाठ्यचर्या होना, +2 को स्कूली शिक्षा का अंग बनाना, +3 की शिक्षा को राष्ट्र की माँग के अनुसार नियोजित करना और तकनीकी शिक्षा की उत्तम व्यवस्था करना आदि। शिक्षा नीति सम्बन्धी योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु जो कार्य योजनाएँ बनाई गई हैं, वे तो अच्छी हैं पर भ्रष्टाचार प्रधान इस युग में हाथ बहुत कम लगा है- ब्लैक बोर्ड योजना के अन्तर्गत जो भवन बनाए गए हैं वे बहुत निम्न स्तर के हैं और विद्यालयों को जो सामग्री प्रदान की गई है वह बहुत निम्न कोटि की है। संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के तहत् उच्च प्राथमिक विद्यालयों को शिक्षण-अधिगम सामग्री के क्रय हेतु जो 40-40 हजार रूपए दिए गए हैं उसमें भी बड़ी हेरा-फेरी हुई है, उसका सदुपयोग भी सुनिश्चित नहीं किया गया है। नवोदय विद्यालय भी सफेद हाथी साबित हुए हैं। कैपीटेशन फीस की स्वीकृति से तो शिक्षा अपने में एक व्यवसाय बन गई है। और उच्च शिक्षा के निजीकरण करने की ओर कदम बढ़ाने से उच्च शिक्षा का स्तर गिर रहा है और साथ ही छात्रों का शोषण बढ़ रहा है। आज इसमे बहुत सुधार की आवश्यकता है।

15.7 शब्दावली

शिक्षक शिक्षा - राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में शिक्षकों के स्तर और उनके प्रशिक्षण में सुधार पर बल दिया गया है। यूँ तो इस पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति,1968 में भी बहुत बल दिया गया था और तद्नुकूल शिक्षकों के वेतनमान बढ़ाए गए थे और उनकी सेवाशर्तो में सुधार किया गया था परन्तु इस शिक्षा नीति, 1986 के तहत शिक्षक शिक्षा में सुधार हेतु 2007 तक 556 जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान' (DIETs)स्थापित किए गए, 104 शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों को शिक्षक शिक्षा महाविद्यालयों(CTEs) और 39 को शिक्षा उच्च अध्ययन केन्द्रों (CASEs) में सम्मुनत किया गया है। साथ ही 1993 में राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद' (NCTE) को संवैधानिक दर्जा दिया गया और उसे और अधिक अधिकार दिए गए हैं।

15.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. (b) 25
2. (a) 1995
3. (c) 1992
4. (b) 40 हजार

5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1992 में आपरेशन ब्लेक बोर्ड योजना में कम से कम 3 कमरों के भवन और 3 शिक्षकों की व्यवस्था की बात की गयी
6. 1993में राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद' (NCTE) को संवैधानिक दर्जा दिया गया।

15.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. लाल (डॉ) रमन बिहारी, भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएं, राज प्रिंटर्स, मेरठ।
2. जे. (डॉ) एस. वालिया (2009)भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास, अहमपाल पब्लिशर्स, मेरठ।
3. शुक्ला (डॉ) सी. एस. (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
4. शर्मा, रामनाथ व शर्मा, राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
5. शीलू मैरी (डॉ) (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य, रजत प्रकाशन नई दिल्ली।

15.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 एवं संशोधित (1992) का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1992 कार्य योजनादस्तावेजका वर्णन कीजिय।
3. संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 (1992) के मूल तत्त्व का वर्णन कीजिय।
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 एवं संशोधित (1992) का मूल्यांकन कीजिए।

इकाई- 16 विशेष तथा समावेशित शिक्षा के संदर्भ में राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय नीतियाँ और कानून
National & International Policies and Laws in context of Special and Inclusive Education

16.1 प्रस्तावना
16.2 उद्देश्य
16.3 अंतरराष्ट्रीय नीतियाँ और कानून
 16.3.1 विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्रसंघ का घोषणा पत्र
 16.3.2 बच्चों के अधिकारों पर अधिवेशन
 16.3.3 सभी के लिए शिक्षा पर घोषणा पत्र
 16.3.4 सालामांका स्टेटमेंट और विशेष शिक्षण पर कार्ययोजना
 16.3.5 बिवाको मिलेनियम फ्रेमवर्क फॉर एक्शन
 16.3.6 विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ अधिवेशन
16.4 राष्ट्रीय नीतियाँ और कानून
 16.4.1 संवैधानिक प्रावधान
 16.4.2 मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम
 16.4.3 भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम
 16.4.4 विकलांग व्यक्तियों के लिए अधिनियम
 16.4.5 राष्ट्रीय न्यास अधिनियम
 16.4.6 विकलांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति
 16.4.7 शिक्षा का अधिकार अधिनियम
16.5 सारांश
16.6 शब्दावली
16.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
16.8 संदर्भ ग्रंथ सूची
16.9 निबंधात्मक प्रश्न

16.1 प्रस्तावना

जैसा कि आप जानते हैं कि विकलांग व्यक्तियों के लिए शिक्षा की शुरुआत विशेष विद्यालय से हुई जहाँ विकलांग व्यक्ति अपने घर-परिवार से दूर रहकर अपनी शिक्षा ग्रहण करता था। परन्तु समय के साथ विकलांग व्यक्तियों की शिक्षा का प्रारूप भी बदला, अब विशेष शिक्षा की जगह समावेशित शिक्षा के द्वारा इनको शिक्षा देने की शुरुआत हो चुकी है।

इस इकाई में हम पढ़ेगें कि अंतरराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर विशेष शिक्षा एवं समावेशित शिक्षा के लिए कौन-कौन सी नीतियाँ एवं कानून बनायी गई हैं।

9.2उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप-

1. अंतरराष्ट्रीय नीतियों एवं कानूनों को जान सकेंगे, जैसेः
   विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्रसंघ का घोषणा पत्र
   बच्चों के अधिकारों पर अधिवेशन
   सभी के लिए शिक्षा
   सालामांका स्टेटमेंट
   विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ अधिवेशन
2. विभिन्न राष्ट्रीय नीतियों एवं कानूनों को जान सकेंगें जैसेः
   मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम
   भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम
   विकलांग व्यक्तियों के लिए अधिनियम
   राष्ट्रीय न्यास अधिनियम
   विकलांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति

16.3 अंतरराष्ट्रीय नीतियाँ और कानून

इस खण्ड के अन्तर्गत हम विशेष एवं समावेशित शिक्षा के सन्दर्भ में कुछ प्रमुख अंतरराष्ट्रीय नीतियों एवं कानूनों की चर्चा करेंगे।

16.3.1 विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ का घोषणा पत्र

विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने 9 दिसम्बर 1975 को एक घोषणा पत्र जारी किया। यह घोषणा पत्र विकलांग व्यक्तियों के मानव अधिकारों की रक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण कदम था। इस घोषणा पत्र की कुछ प्रमुख बाते निम्नलिखित हैं

i. विकलांग व्यक्ति दूसरे सामान्य नागरिकों के समान ही सभी मूलभूत अधिकारों की पात्रता रखते हैं, चाहे उनकी विकलांगता का कारण, उसकी प्रकृति व उसकी बाधा या विकलांगता की गंभीरता कितनी भी हो।
ii. विकलांग व्यक्तियों को आर्थिक व सामाजिक सुरक्षा के अधिकार के साथ ही सम्मानजनक जीवन जीने का अधिकार है। उन्हें अपनी क्षमताओं के अनुरूप नौकरी पाने व करने का अधिकार है।
iii. विकलांग व्यक्तियों को अपने परिवारों के साथ रहने का और सभी सामाजिक, रचनात्मक एवं मनोरंजनात्मक गतिविधियों में भाग लेने का अधिकार है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने अंतरराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर इन अधिकारों को दिलाने की गारंटी के लिए दो महत्वपूर्ण कदम उठाए। पहला कदम था सन् 1983-92 के दशक को विकलांग व्यक्तियों के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ दशक घोषित करना तथा दूसरा कदम था सन् 1993-2002 के दशक को विकलांग व्यक्तियों के लिए एशिया पेसिफिक दशक घोषित करना। एशिया पेसिफिक दशक को दोबारा से बढ़ाकर सन् 2003-2012 कर दिया गया था।

16.3.2 बच्चों के अधिकारों पर अधिवेशन

संयुक्त राष्ट्र संघ ने 20 नवम्बर, 1989 को बच्चों के अधिकारों पर अधिवेशन घोषित किया। इस अधिवेशन की कुछ प्रमुख बातें निम्नलिखित हैं

i. इस अधिवेशन में शामिल अधिकारों को राज्य प्रत्येक बच्चे को बिना किसी भेदभाव के प्रदान करेगा।
ii. राज्य विकलांग बच्चे के अधिकारों को पहचान करते हुए उनके लिए विशेष देखभाल का इन्तेजाम करेगा।
iii. राज्य यह निश्चित करेगा कि मानसिक या शारीरिक विकलांग बच्चा संतोषजनक जीवन समाज में सक्रिय भागीदारी करते हुए जी सकेगा।

इस अधिवेषन के अनुच्छेद 43 और 44 में कहा गया कि इस अधिवेषन में कहे गये दायित्व/कर्तव्य की राज्य द्वारा किए गए प्रगति का मूल्यांकन किया जाएगा तथा यह मूल्यांकन ‘बच्चे के अधिकार पर कमेटी’ द्वारा किया जाएगा।

16.3.3 सभी के लिए शिक्षा पर घोषणा पत्र

सन् 1990 ई. में जोमेटिन (थाईलैण्ड) में ''सभी के लिए शिक्षा पर विश्व सम्मेलन'' का आयोजन हुआ जिसमें 155 राष्ट्र के प्रतिनिधि एवं 150 गैर-सरकारी संस्थाओं ने भाग लिया।इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य था शिक्षा को सर्वव्यापी बनाने के लिए तथा निरक्षरता हटाने के लिए उपायों पर विचार करना।

इस सम्मेलन का भारत सहित विश्व के अन्य देशों पर बहुत प्रभाव पड़ा तथा सभी के लिए शिक्षा में विकलांग बच्चों के भी शिक्षा पर गंभीरता पूर्वक ध्यान दिया जाने लगा।

इस घोषणा पत्र में बुनियादी शिक्षा के छः मुख्य उद्देश्यों की पहचान की गयी, जो हैं

i. प्रारम्भिक बाल्यावास्था देख-रेख और विकासात्मक कार्यकलाप का विस्तार
ii. प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमिक पहुँच और संपादन।
iii. अध्ययन उपलिब्ध में सुधार करना ताकि अध्ययन उपलिब्ध एक आवश्यक स्तर तक पहुँच सके।
iv. वयस्क निरक्षता के दर को कम करना।
v. बुनियादी शिक्षा के प्रावधानों तथा नवयुवक एवं व्यवस्क द्वारा अपेक्षित दूसरे आवश्यक कौशलों का विस्तार करना।
vi. व्यक्तिगत एवं परिवार के अच्छे जीवन जीने के लिए आवश्यक ज्ञान, कौशलों एवं मूल्यों के उपलब्धियों को बढ़ाना।

16.3.4 सालामांका स्टेटेमेंट और विशेष शिक्षण पर कार्ययोजना

सन् 1994 ई. में स्पेन के सालामांका शहर में ''विशेष आवश्यकता शिक्षण पर विश्व सम्मेलन'' का आयोजन यूनेस्को एवं स्पेन की सरकार ने मिलकर किया था। इस सम्मेलन में 92 देशों के सरकारी प्रतिनिधि एवं अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं ने भाग लिया था।

1. यह कथन (स्टेटमेंट) सभी के लिए शिक्षा की प्रतिबद्धता से शुरू होता है।
2. इस सम्मेलन में मुख्य रूप से समावेशित शिक्षा की चर्चा हुई जो निम्नलिखित कथनों से रेखांकित किया गयाः
    - स्कूल में सभी बच्चों को समावेशित किया जाए, चाहे उनकी शारीरिक, बौद्धिक, भावनात्मक, सामाजिक, वाचिक या अन्य दशाएँ कैसे भी हों।
    - समावेशित दिशा-निर्देशन युक्त सामान्य स्कूल भेदभाव पूर्ण दृष्टिकोणों से निपटने के लिए सबसे प्रभावशाली माध्यम है। वे ऐसे समावेशित समाज की रचना कर सकें जो सबको अपना एवं सबके लिए शिक्षा का लक्ष्य भी पा सकें।

इस कथन में यूनेस्को, यूनीसेफ, यूएनडीपी एवं विश्व बैंक से अनुरोध किया गया है कि वे समावेशित शिक्षा को बढ़ावा देने एवं विशेष आवश्यकता शिक्षण को शैक्षिक प्रोग्राम में सम्मिलित करने के लिए कार्य करें।

16.3.5 बिवाको मिलेनियम फ्रेमवर्क फॉर एक्शन

22 मई, 2002 को एशिया पेसफिक क्षेत्र ने बिवाको मिलेनियम फ्रेमवर्क फॉर एक्शन को स्वीकार किया। इसका मुख्य उद्देश्य था 'अवरोध रहित एवं अधिकार आधारित एक समावेशित समाज का निर्माण करना'। यह एशिया और प्रशांत क्षेत्र के विकलांग व्यक्तियों के लिए एवं ''एशियन पैसिफिक डिकेड ऑफ द डिजेबल्ड पर्सन्स'' का ही विस्तार है।(राव, 2010)

इसके सात प्राथमिक कार्यक्षेत्र हैः

i. विकलांग व्यक्तियों, उनके परिवार व अभिभावक संघों के स्वयं-सहायता संगठन
ii. विकलांग महिलाएं
iii. शीघ्र निदान, शीघ्र हस्तक्षेप एवं शिक्षा
iv. स्व-रोजगार सहित, प्रशिक्षण एवं रोजगार
v. निर्मित वातावरण एवं सार्वजनिक वाहनों की उपलब्धि
vi. सूचना एवं संपर्क तक पहुँच जिसमें सूचना संपर्क एवं सहयोगी प्रौद्योगिकी भी सम्मिलत हो
vii. क्षमता निर्माण, सामाजिक सुरक्षा व अविरत रोजगार कार्यक्रमों के द्वारा गरीबी उन्मूलन संभव हो।

इन प्राथमिकताओं को साकार रूप देने हेतु 21 लक्ष्यों व इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए 17 तरीकों की भी इस घोषणा में पहचान की गयी है। इन सबके अतिरिक्त इसमें संयुक्त राष्ट्र आर्थिक व सामाजिक आयोग द्वारा इस घोषणा में सुझायी गयी प्राथमिकताओं व लक्ष्यों की प्राप्ति में की गयी प्रगति के अवलोकन व आवश्यक तानुसार परिवर्तन करने का भी प्रावधान है।

16.3.6 विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ अधिवेशन

विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर अधिवेशन जिसको संक्षेप में 'यू.एन.सी.आर.पी.डी.' भी कहते हैं, विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों को संरक्षित रखने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ का एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है।

संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा ने इस संधिपत्र को 13 दिसम्बर, 2006 को स्वीकार किया तथा 30 मार्च, 2007 को हस्ताक्षर करने के लिए रखा। इस दिन भारत सहित 82 देशों ने इस पर हस्ताक्षर किया, (मार्च, 2013 तक 155 देशों ने हस्ताक्षर किया है) यह संधिपत्र 3 मई 2008 को अंतरराष्ट्रीय कानून बना।

यूएनसीआरपीडी में कुल 50 अनुच्छेद (आर्टिकल) हैं। कुछ महत्वपूर्ण अनुच्छेद निम्नलिखित हैं:

- अनु. 6:विकलांग महिलाओं के बारे में है, जिसमें कहा गया है कि सरकार विकलांग महिलाओं के विकास एवं अधिकारिता के लिए उपयुक्त कदम उठाये।
- अनु. 7:विकलांग बच्चों के बारे में है, जिसमें कहा गया है कि इन बच्चों के अधिकारों, स्वतंत्रता तथा अच्छे जीवन के लिए कार्य करें।
- अनु. 9 :सुगम्यता के बारे में हैं, जिसमें कहा गया है कि विकलांगों को सषक्त करने हेतु अत्याधुनिक तकनीक से बने विशेष उपकरण उपलब्ध कराया जाय।
- अनु. 10 :जीने का अधिकार के बारे में है, जिसमें कहा गया है कि विकलांग व्यक्तियों को भी सामान्य व्यक्तियों के सामान सम्मान पूर्ण जीवन जीने का अधिकार है।
- अनु. 24 :शिक्षा के बारे में है, जिसमें कहा गया है कि विकलांग बच्चों के लिए शिक्षा की व्यवस्था सरकार करे जिससे वे अपने व्यक्तित्व, प्रतिभाओं व रचनात्मकता का विकास कर सकें।
- अनु. 27 :कार्य और रोजगार के बारे में है, जिसमें कहा गया है कि प्रत्येक विकलांग व्यक्ति को हर तरह के काम, जो उसके योग्य हैं, करने का अधिकार है जिसके लिए उपयुक्त सुविधाओं व वातावरण का उपलब्ध कराया जाना आवश्यक है।

मुख्यतः यह अधिवेशन विकलांग व्यक्तियों के अधिकार निर्दिष्ट करता है और उनके संवर्द्धन संरक्षण व सुनिश्चितता के लिए राज्य के कर्त्तव्य

निर्धारित करता है, जिसके साथ साथ उनके क्रियान्वयन व अनुश्रवण सहयोग हेतु उचित व्यवस्था विकसित करने का निर्देश देता है।

इस अधिवेशन की एक विशेष बात यह भी है कि इसमें विकलांगों को एक श्रेणी मात्र न मानकर विकलांगता विशेष और उसमें भी व्यक्ति विशेष की आवश्यक ताओं को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त सुविधाएं देने की बात कही गयी है। इसके अतिरिक्त इसमें विकलांग व्यक्तियों की व्यक्तिगत जरूरतों की तरफ भी ध्यान दिया गया है।
इस संधिपत्र में यह व्यवस्था है कि समय-समय पर हर उस देशको जिसने इस संधिपत्र पर हस्ताक्षर किया है, यह बताना होगा कि उसने इस संधिपत्र के कार्यान्वयन हेतु क्या कदम उठाए हैं।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ का घोषणा पत्र सन् .... ई. में जारी हुआ है।
2. सभी के लिए शिक्षा सन् .... ई. में .... शहर में हुआ था।
3. सालामांका स्टेटमेंट सन् .... ई. में जारी हुआ था।

4. यू. एन. सी. आर. पी. डी. का पूर्ण रूप है ....।
5. भारत ने यू.एन.सी.आर.पी.डी. पर सन् .... में हस्ताक्षर किया।

16.4 राष्ट्रीय नीतियाँ और कानून

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विकलांग व्यक्तियों के कार्यों का अनुसरण करते हुए भारत सरकार ने भी इनके लिए कुछ नीतियाँ एवं कानून बनाये जिसका वर्णन हम इस खण्ड में करेंगे।

16.4.1 संवैधानिक प्रावधान

भारतीय संवधिान के अनु. 14 में कहा गया है कि कानून के समक्ष सभी नागरिक एक समान हैं। तथा अनु. 15 में कहा गया है कि राज्य किसी भी नागरिक को धर्म, नस्ल, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी भी आधार पर भेदभाव नहीं करेगा।

अनु. 41 जहाँ कार्य करने की अधिकार की बात करता हैं वहीं अनु. 45 कहता है कि राज्य 6 वर्ष तक के आयु वाले बच्चों को प्रारम्भिक बाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा देने का प्रयास करे।
भारतीय संविधान के 86 संशोधन (2002) के द्वारा अनु. 21। में 6-14 वर्ष के बच्चों के लिए निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा की बात की है।
शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 जो कि 1 अप्रैल, 2010 से लागू हो गया है, यह सुनिश्चित करता है कि शिक्षा प्रत्येक बच्चे का अधिकार है तथा राज्य को अनिवार्य रूप से उसको ये अधिकार प्रदान करने होंगे तथा उनसे कोई शुल्क नहीं लिया जायेगा।

16.4.2 मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम

मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम सन् 1987 में लागू हुआ जिसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना था कि मानसिक रोगी व्यक्तियों की शीघ्र पहचान करके उनका अच्छा उपचार हो सके।
इस अधिनियम की मुख्य बातें निम्नलिखित हैं

i. मानसिक रोगी समाज के अंग हैं तथा राज्य उन सभी बाधाओं को दूर करके उन्हें उपचार पाने, देखभाल व सहारा पाने तथा सम्मानजनक जीवन जीने के समान अवसर प्रदान करेगी।
ii. मानसिक रोग से ग्रस्त व्यक्तियों को मनोचिकित्सा, अस्पतालों या नर्सिंग होम में उपचार हेतु समय पर प्रवेश मिले।
iii. मानसिक रोगियों को किसी का दुर्व्यवहार न सहना पड़े, न ही वे किसी से दुर्व्यवहार करें।
iv. यदि मानसिक रोगी अपने मामलों की देखभाल व प्रबंधन के लिए किसी अभिभावक की माँग करें तो उन्हें उपलब्ध कराया जाए।

16.4.3 भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम

भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम जिसे संक्षेप में हम आर.सी.आइ.एक्ट कहते हैं, सन् 1992 में पारित हुआ तथा 22 जून, 1993 से लागू हुआ। सन् 2000 में इस अधिनियम में संशोधन किया गया।

भारत सरकार द्वारा इस अधिनियम की आवश्यकता इसलिए महसूस की गयी क्योंकि विकलांगता के क्षेत्र में शिक्षा की गुणवत्ता एवं प्रशिक्षण इत्यादि के लिए कोई अधिनियम एवं संस्था नहीं थी।

भारतीय पुनर्वास परिषद के कुछ प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं

i. विकलांग व्यक्तियों के पुनर्वास संबंधी प्रशिक्षण नीतियों व कार्यक्रमों को नियमित करना।
ii. विकलांग व्यक्तियों के साथ काम करने वाले विभिन्न श्रेणी के व्यावसायिकों की शिक्षा व प्रशिक्षण हेतु एक न्यूनतम मानक प्रस्तावित करना।
iii. पूरे देश में एकरूपता लाने हेतु सभी प्रशिक्षण संस्थानों में इन मानकों का नियमितीकरण करना।
iv. उन सभी संस्थाओं/विश्वविद्यालयों को मान्यता प्रदान करना जो विकलांग व्यक्तियों के पुनर्वास विषय पर डिग्री/डिप्लोमा/सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम चलाता है।
v. मान्यता प्राप्त पुनर्वास योग्यता रखने वाले व्यक्तियों की सूची केन्द्रीय पुनर्वास पंजीकरण में रखना।
vi. पुनर्वास एवं विशेष शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान को प्रोत्साहित करना।

भारतीय पुनर्वास परिषद से मान्यता प्राप्त विभिन्न विश्व विद्यालय, प्रषिक्षण संस्थान व गैर सरकारी संगठन प्रषिक्षण कार्यक्रम चलाते हैं। ये प्रषिक्षण बुनियादी पाठ्यक्रम और प्रमाणपत्र से डिप्लोमा, डिग्री, स्नातकोत्तर डिप्लोमा तक सभी प्रकार के होते हैं। पाठ्यक्रम पूर्ण करने वाले विद्यार्थी भारतीय पुनर्वास परिषद पंजी में पंजीकरण पाठ्यक्रम की अर्हता पा लेते हैं सफल विद्यार्थी अपने प्रषिक्षण के अनुरूप अधिकारी या व्यावसायिक की श्रेणी में पंजीकृत होते हैं। भारत में विकलांगता पुनर्वास के क्षेत्र में काम करने वाले किसी पुनर्वास विशेष ज्ञ के लिए भारतीय पुनर्वास परिषद् में पंजीकृत होना अनिवार्य है तथा प्रत्येक 5 वर्ष बाद पंजीकरण का नवीनीकरण कराना पड़ता है जिसके लिए उन्हें समय-समय पर परिषद द्वारा मान्यता प्राप्त सेमिनार, वर्कषाप इत्यादि में भाग लेना होता है।

16.4.4 विकलांग व्यक्तियों के लिए अधिनियम

विकलांग व्यक्तियों के लिए अधिनियम सन् 1995 में पारित हुआ तथा इसका पूरा नाम है - ''विकलांग व्यक्ति (समान अवसर, अधिकारों की सुरक्षा एवं पूर्ण सहभागिता) अधिनियम 1995।
यह अधिनियम 7 फरवरी 1996 ई. से लागू हुआ। इस अधिनियम के अंतर्गत सात विकलांगताएं आती हैं, जो हैं:

i. अंधत्व (Blindness)
ii. अल्पदृष्टि(Low Vision)

iii. श्रवण बाधा(Hearing Impairment)
iv. मानसिक विकलांगता(Mental Retardation)
v. मानसिक रोग(Mental Illness)
vi. गामक बाधा(Locomotar Impairment)
vii. कोढ़ उपचरित(Leprosy Cured)

भारत में इस समय विकलांग व्यक्तियों को जो सुविधाएं दी जाती हैं, उसके लिए जरूरी है कि वह विकलांग व्यक्ति उपर्युक्त सात विकलांगता में से किसी एक श्रेणी में हो तथा उसके विकलांगता का प्रतिशत कम से कम 40 हो।

पी.डब्लू.डी. एक्ट, 1995 का सरकार द्वारा संशोधन का कार्य चल रहा है तथा इसका ड्राफ्ट बिल तैयार हो चुका है। जिसमें उपर्युक्त सात विकलांगता के अलावा ग्यारह और विकलांगता को भी इसमें सम्मिलित किया गया है। इस बिल का नाम है ''विकलांग व्यक्तियों के अधिकार बिल, 2012''।
पी.डब्लूडी. एक्ट 1995 में कुल 14 अध्याय हैं जिसमें से अध्याय-4: विकलांगता का शीघ्र निदान व रोकथाम के बारे में बताता है, अध्याय-5: विकलांग बच्चों के शिक्षा के बारे में है, जिसमें कहा गया है कि प्रत्येक विकलांग बच्चे को उचित व समावेशित वातावरण में 18 वर्ष की आयु तक निःशुल्क शिक्षा मिले। अध्याय-6: विकलांग व्यक्तियों के रोजगार के बारे में है, जिसमें इन व्यक्तियों के लिए सरकारी प्रतिष्ठानों में 3 प्रतिशत नौकरियों के आरक्षण की बात कही गयी है तथा ये 3 प्रतिशत दृष्टिबाधित, श्रवणबाधित एवं गामक बाधित व्यक्तियों के लिए है (प्रत्येक के लिए 1 प्रतिशत)।

इस अधिनियम के अध्याय-8 में विकलांग व्यक्तियों के लिए बाधारहित वातावरण का भी प्रावधान है जिसमें कहा गया है कि विकलांग व्यक्ति अस्पताल, रेलवे स्टेशन, प्रशिक्षण केन्द्र, मनोरंजन स्थल, निर्वाचन बूथ, कार्यक्षेत्र और सभी सार्वजनिक स्थलों की समस्त सुविधाओं का प्रभावशाली ढंग से उपयोग कर सके, इसके लिए सरकार इस बात की स्पष्ट घोषणा करती है कि इन सब सार्वजनिक स्थलों का बाधारहित होना अनिवार्य, इसके लिए इन सार्वजनिक इमारतों में रैंप, पहियेवाली कुर्सीवालों के लिए शौचालयों में अनुकूल सुविधा; लिफ्ट आदि में ब्रेक चिन्ह व श्रव्य संकेत; अस्पतलों में रैंप व ऐसे ही अनुकूली साधन होने चाहिए।

16.4.5 राष्ट्रीय न्यास अधिनियम

राष्ट्रीय न्यास अधिनियम सन् 1999 में पारित हुआ तथा इसका पूरा नाम है- ''राष्ट्रीय न्यास अधिनियम (स्वलीनता, प्रमस्तिष्क पक्षाघात, मानसिक विकलांगता और बहु-विकलांगता प्रभावित व्यक्तियों के कल्याण हेतु) 1999''। इसको संक्षेप में एन.टी. एक्ट, 1999 भी कहते हैं।

जैसा कि नाम से ही पता चलता है कि यह अधिनियम चार विकलांगताओं के लिए है जो है:

i. स्वलीनता (Autism)
ii. प्रमस्तिष्क पक्षाघात (सेरेबरल पॉलसी)

iii. मानसिक विकलांगता (Mental Retardation)
iv. बहु विकलांगता (Multiple Disabilities)

इस अधिनियम के कुछ प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- विकलांग व्यक्ति जिस समुदाय के हैं, उसमें यथा संभव पास रह सकें, स्वतत्रता व पूर्णता के साथ जी सकें। इतना उन्हें समर्थ व सशक्त किया जाए।
- विकलांग व्यक्तियों को सहारा देने योग्य सुविधाओं का प्रबलीकरण हो।
- विकलांग व्यक्तियों के अभिभावक या संरक्षक की मृत्यु हो जाने पर उनकी देखभाल व संरक्षण की व्यवस्था करना।
- विकलांग व्यक्तियों को समान अवसर, उनके अधिकारों की सुरक्षा एवं उनकी पूर्ण भागीदारी को साकार करने की सुविधाएँ प्रदान करना।

राष्ट्रीय न्यास अधिनियम 1999 के कुछ प्रमुख कार्यक्रम निम्नलिखित हैं:

- संगठनों का पंजीकरण (अभिभावकों एवं गैर सरकारी संगठनों का)।
- स्थानीय स्तर की समितियों का गठन।
- अभिभावकों की नियुक्ति।
- आवासीय सुविधाओं सहित अन्य अनेक प्रकार की सेवाओं को समर्थन देना।
- होम विजिट/अभिरक्षक के कार्यक्रम
- जागरूकता एवं प्रशिक्षण सामग्री का विकास
- लोगों तक पहुँचने एवं राहत के लिए सामुदायिक कार्यक्रम।

16.4.6 विकलांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति

विकलांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति 10 जनवरी, 2006 को पारित हुआ। इस नीति का निर्माण विकलांग व्यक्तियों के लिए समान अवसर, उनके अधिकारों के संरक्षक और समाज में पूर्ण भागीदारी के लिए वातावरण तैयार करने के उद्देश्य से हुआ।इस राष्ट्रीय नीति की कुछ प्रमुख बातें निम्नलिखित हैं:

- विकलांगता की रोकथाम: विकलांगता की रोकथाम के लिए कार्यक्रम पर विशेष बल दिया गया है।
- पुनर्वास कार्रवाई: इस नीति में कहा गया है कि पुनर्वास कार्यवाही तीन ग्रुप में होगी।
    i. शारीरिक पुनर्वास

ii. शैक्षिक पुनर्वास
iii. आर्थिक पुनर्वास

- विकलांग औरतों के बारे में इस नीति में कहा गया है कि इन औरतों को अपने बच्चों की देखभाल करने में परेशानी होती है अतः सरकार इनको आर्थिक मदद करे ताकि ये अपने बच्चों को देखने के लिए किसी को किराये पर रख सके। इस तरह की आर्थिक सुविधा केवल दो बच्चों के लिए तथा अधिकतम दो साल के लिए दिया जाएगा।
- विकलांग बच्चों के बारे में इस नीति में कहा गया है कि सरकार इन बच्चों की देखभाल व सुरक्षा सुनिश्चित करें तथा ये लोग समान अवसर एवं पूर्ण सहभागिता के साथ अपना जीवन व्यतीत कर सकें।
- विकलांग व्यक्तियों के लिए सार्वजनिक स्थलों पर अवरोध मुक्त वातावरण बनाना।
- विकलांग व्यक्तियों को बिना किसी परेशानी के विकलांगता सर्टीफिकेट प्रदान करना।
- विकलांगता के क्षेत्र में काम करने के लिए गैर सरकारी संगठनों को प्रोत्साहित करने की बात भी इस नीति में कही गयी है।
- विकलांग व्यक्तियों के बारे में नियमित रूप से आँकड़े इकट्ठा करना।
- इस नीति में एक महत्वपूर्ण बात कही गयी है कि विकलांग व्यक्तियों से जुड़े हुए अधिनियमों जैसे आर.सी.आई. एक्ट, 1992, पी.डब्लू.डी. एक्ट 1995 तथा एन.टी. एक्ट 1999 में समय-समय पर संशोधन होते रहना चाहिए। इसी नीति के फलस्वरूप ही पी.डब्लू.डी. एक्ट 1995 में
- संशोधन हो रहा है, जो 'विकलांग व्यक्तियों के अधिकार बिल, 2012'' के रूप में ड्राफ्ट हो चुका है।

16.4.7 शिक्षा का अधिकार अधिनियम

शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 का पूरा नाम है- ''बच्चों के लिए नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009''।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम 4 अगस्त, 2009 को पारित हुआ तथा 1 अप्रैल, 2010 से लागू हुआ। इस अधिनियम में 6-14 वर्ष तक के बच्चे को नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा देने की बात कही गयी जो कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21Aमें लिखित है। इस अधिनियम को लागू करने के बाद भारत विश्व के उन 135देशों में शामिल हो गया है जहाँ शिक्षा मूल अधिकार के रूप में है। इस अधिनियम में कुल सात अध्याय हैं, जिसमें से अध्याय-2:नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के अधिकार पर है, अध्याय-3: उपयुक्त सरकार, स्थानीय प्राधिकरण, तथा माता-पिता के कर्तव्यों पर

है, अध्याय-4:विद्यालयों एवं षिक्षकों के उत्तरदायित्वों पर है, अध्याय-5: प्राथमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम एवं संपादन पर है, तथा अध्याय-6: बच्चों के अधिकारों का संरक्षण पर है।

अगर हम विकलांग बच्चों के संदर्भ में बात करें तो इस अधिनियम में इनको स्पष्टतया एक अलग वर्ग के रूप् में सम्मिलित नहीं किया गया है, लेकिन अध्याय-1: प्रस्तावना के खण्ड 2(d)में ''अलाभकारी समूह के बच्चे'' (चाइल्ड बिलाँगइंग टु डिसट्वैन्टिज ग्रुप) के बारे में चर्चा है। इसी खण्ड में कहा गया है कि उपयुक्त सरकार अधिसूचना के द्वारा स्पष्टीकरण करके किसी समूह को जो किसी दूसरे कारण से अलाभकारी है, को इस खण्ड में सम्मिलित कर सकता है। अर्थात उपयुक्त सरकार चाहे तो अधिसूचना के माध्यम से विकलांग बच्चों को अधिनियम के खण्ड 2 (d)में सम्मिलित कर सकता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

6. मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम किस वर्ष में पारित हुआ?
   अ) 1975 ब)1983 स) 1987 द)1992
7. भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम कब बना था?
   अ) 1987 ब) 1992 स) 1995 द) 1999
8. विकलांग व्यक्तियों के लिए अधिनियम, 1995 किस दिन से प्रभाव में आया?
   अ) 3 दिसम्बर, 1995 ब) 5 फरवारी, 1995
   स) 4 दिसम्बर, 1996 द) 7 फरवरी, 1996
9. विकलांग व्यक्तियों के लिए अधिनियम, 1995 के अंतर्गत कितनी विकलांगताएँ आती हैं?
   अ) 5 ब) 6 स) 7 द) 8
10. विकलांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति कब बनी थी?
    अ) 1995 ब)1999 स)2003 द) 2006

16.5 सारांश

इस इकाई में हमने विशेष एवं समावेशित शिक्षा के संदर्भ में विभिन्न अंतरराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय नीतियों एवं कानूनों की चर्चा की।

अंतरराष्ट्रीय नीतियों एवं कानूनों में हमने प्रमुखतः विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ का घोषणा पत्र (1975), बच्चों के अधिकारों पर अधिवेशन (1989), सभी के लिए शिक्षा (1990), सालामांका स्टेटमेंट (1994), बिवाको मिलेनियम फ्रेमवर्क (2002) तथा यू.एन.सी.आर.पी.डी. (2008) की चर्चा की।

राष्ट्रीय नीतियों एवं कानूनों में हमने भारतीय संविधान में वर्णित कुछ संवैधानिक प्रावधानों, मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम (1987), आर.सी.आई. एक्ट (1992), पी.डब्लू.डी. एक्ट (1995), एन.टी. एक्ट (1999), तथा विकलांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति (2006) तथा आर.टी.ई. एक्ट (2009) की चर्चा की।

16.6 शब्दावली

1. **विशेष शिक्षा**-विशेष शिक्षा से तात्पर्य वैसी शिक्षा से है जो विशेष आवश्यकता वाले बच्चों (जैसे- दृष्टिबाधित बच्चे, मानसिक मंद बच्चे, श्रवण बाधित बच्चे) को विशेष स्कूल में दी जाती है।
2. **समावेशित शिक्षा**-समावेशित शिक्षा से तात्पर्य है- ऐसी शिक्षा जो विशेष एवं सामान्य बच्चों को एक साथ एक ही सामान्य स्कूल में दी जाती है।

16.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. 1975
2. 1990, जोमेटिन
3. 1994
4. यूनाइटेड नेशन कन्वेशन ऑन राइट्स ऑफ परसन्स विद डिजबेलिटिज
5. 2007
6. स
7. ब
8. द
9. स
10. द

16.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. जुलका ए. (2005). एडुकेशनल प्रोविजन्स एण्ड प्रैक्टिसेस फॉर लरनर्स विद डिसबेलटिज इन इंडिया, पेपर प्रजेन्टेड एट द इन्क्लूसिव एण्ड सुर्पोटिव एडुकेशन कांग्रेस 2005, यूनिवर्सिटी ऑफ स्ट्रेथक्लेड, ग्लासो।
2. मुखोपाध्याय, एस (2005). रीथिंकिंग एबाउट इन्क्लूसनः इमर्जिंग एरिया फॉर पॉलिसी रिसर्च, नई दिल्लीः न्यूपा
3. राव, एल.गो. (2010). निःशक्त बच्चों की शिक्षा का आधार पाठ्यक्रम, नई दिल्लीः इग्नू
4. पी.डब्लू.डी. एक्ट (1995). नई दिल्लीः भारत सरकार

5. आर.सी.आई एक्ट (1992). नई दिल्लीः भारत सरकार
6. आर.टी.ई. एक्ट (2009). नई दिल्लीः भारत सरकार
7. नेशनल पॉलिसी फॉर परसन्स विद डिजबेलिटी (2006). नई दिल्लीः भारत सरकार
8. नेशनल ट्रस्ट एक्ट (1999). नई दिल्लीः भारत सरकार
9. यू.एन.सी.आर.पी.डी. (2008). न्यूयार्कः युनाइटेड नेशन
10. सरकारी वेबसाइट
    i. संयुक्त राष्ट्र संघ (www.un.org/en)
    ii. राष्ट्रीय न्यास (www.thenational trust.co.in)
    iii. सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय (www.socialjustic.nic.in)
    iv. भारतीय पुनर्वास परिषद (www.rehabcoucil.nic.in)

सहायक/उपयोगी पाठ्यसामग्री

1. पांडा, के.सी (1997). एजुकेशन ऑफ एक्सेपशनल चिल्ड्रेन, नई दिल्लीः विकास पब्लिशिंग एण्ड डिस्ट्रब्यूटर्श।
2. पी.डब्लू.डी. एक्ट (1995). नई दिल्लीः भारत सरकार
3. आर.सी.आई एक्ट (1992). नई दिल्लीः भारत सरकार
4. आर.टी.ई. एक्ट (2009). नई दिल्लीः भारत सरकार
5. नेशनल पॉलिसी फॉर परसन्स विद डिजबेलिटी (2006). नई दिल्लीः भारत सरकार
6. नेशनल ट्रस्ट एक्ट (1999). नई दिल्लीः भारत सरकार
7. यू.एन.सी.आर.पी.डी. (2008). न्यूयार्कः युनाइटेड नेशन

16.10निबंधात्मक प्रश्न

1. विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा पत्र की प्रमुख बातों का उल्लेख करें।
2. सभी के लिए शिक्षा से आप क्या समझते हैं? इस पर हुए सम्मेलन पर प्रकाश डालें।
3. यू.एन.सी.आर.पी.डी. के प्रमुख अनुच्छेदों का वर्णन करें।
4. भारतीय संविधान में बच्चों के अधिकारों से संबंधित कुछ प्रमुख प्रावधानों का उल्लेख करें।पी.डब्लू.डी. एक्ट एवं विकलांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति की मुख्य बातों की व्याख्या करें।